मूल्य : चार रुपए चार आने

लेखक : रामवृक्ष बेनीपुरी
प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली
आवरण . असोसियेटेड आर्टिस्ट्स
प्रथम संस्करण : फरवरी, १९५७
मुद्रक : युगान्तर प्रेस, दिल्ली-६.

प्रवेश

जंजीरे फौलाद की होती है, दीवारे पत्थर की !

जंजीरे खनकती है, बोलती है, स्वयं तुलकर लोगो को तोलती है—लोगो को, उनकी घात को ! कितने भारी-भरकम इस तुला पर चढ़कर कितने हल्के-फुल्के साबित हुए !

दीवारे गुमसुम ! अभिशापो की तरह, काली। काली ? हा-हा, रक्त पीकर भी काली। कठोर—अलघ्य। चीखते रहो, कराहते रहो। तुम्हारे लिए दिशाओ के द्वार बन्द हो गए !

गुलाम देश का बच्चा—बचपन से ही जजीरों का अनुभव कर रहा था। जैसे, अग-अग कसे हो—कितना भी कसमस करो, आजादी से हिलडुल भी नही सकते !

कई बार ये जंजीरें बोली है—झकार कर उठी है, चीत्कार कर उठी है ! बचपन के कान भी उनका अनुभव कर सके थे।

मै अपनी फूआ जी के गाव जा रहा था। घोडे पर था। बच्चा मै, साईस बगल-बगल चल रहा था। इतने मे कानो मे तड़ाक्-तड़ाक् की आवाज। फिर भाग-दौड़ का कोलाहल। साईस

ने घोडे की लगाम थामी और उसे सड़क से घसीटकर खेतो की ओर ले भागा। घोड़ा थोड़ा अडियल। रह-रहकर रुक जाता; साईस की पेशानी पर पसीना-पसीना। इतने मे आवाज तीव्रतर हुई और सामने, ओ, वह ऊंचा काला घोड़ा! और उसपर गोरा साहब!! साहब का घोड़ा बेतहाशा, सरपट भागा आ रहा! साहब का चेहरा—लाल, भभूका। उसके एक हाथ में लगाम, दूसरे मे कोड़ा। तड़ाक्-तड़ाक्, तड़ाक्। घोड़ा निकटतर आ रहा था। मेरे साईस का, जैसे, होश गायब। वह पूरा बल लगाकर, मेरे घोड़े को, घसीटकर, खेत मे ला सका। साहब का घोड़ा सड़क से निकल गया। साईस ने इत्मीनान की सांस ली। सडक किनारे की झुरमुटो से निकलकर दूसरे पथिकों ने भी भय-त्रस्त दृष्टि से उस धूल को देखा, जो साहब के घोडे के पीछे, सडक पर अब भी उड़ रही थी।

हां, उस दिन जजीरें बोली थी, चीत्कार कर उठी थी। हमारा यह देश—सात समुन्दर पार के ये फिरगी। यह सड़क उनकी; यह जमीन उनकी! साहब आ रहा है—सडक छोड़ो; भागो, नही तो, यह कोड़ा—तुम्हारी पीठ पर।

और, कोड़े पीठ पर क्या चीज है, फूआ जी के गांव के उस आदमी ने बताया! वह कुछ कम सुनता था। यों ही सड़क से जा रहा था, साहब का घोड़ा आ गया। जब तक वह सम्हले, भागे, कोड़े की चटाख उसकी पीठ पर। दस साल के बाद भी पीठ पर, उसकी रेखा काले सांप-सी, फुकार कर रही थी!

संयोग, मैं बच गया उस दिन साहब के उस कोड़े से। किन्तु कोड़े की यह काली रेखा तब से ही मेरी पीठ पर चीख उठा करती !

काला घोडा, उस पर गोरा साहब। एक हाथ मे लगाम, एक मे कोड़ा। जंजीरें अब से मेरे सामने एक प्रतीक रूप मे आ गईं।

घोड़े के टापों की तड़ाक-तड़ाक मेरे भावुक हृदय में सदा धूल उड़ाती रहती। कोड़े की चटाख-चटाख मेरी पीठ पर हमेशा रिसती होती !

शायद यही कारण है कि जब १९२१ आया और गांधी जी ने इन जंजीरों के खिलाफ आवाज बुलद की, तब मै अपने स्कूल का असहयोगी नं० १ था। हेडमास्टर साहब ने आखों मे आंसू लाकर मुझे समझाया था कि तुम गरीब के लड़के हो, पढना मत छोड़ो, तुम्हें स्कालरशिप जरूर मिलेगी, ये चोंचले चार दिनो मे खत्म हो जाएगे, फिर तुम्हे पछताना पड़ेगा। किन्तु, मैने उनकी एक न सुनी ! और, सचमुच, वह महान आन्दोलन जब एक तूफान की तरह आया और निकल गया और मेरे संगी-साथी फिर स्कूल-कालेजो मे जाने लगे, तो भी, मै वहां न जा सका, जिसे गुलामखाना कहकर छोड़ चुका था।

जंजीरे खनकती है, बोलती है, स्वयं तुलकर लोगो को तोलती है। अरे, जिन्हे मै भारी भरकम समझे था; इनपर तुलकर वे कितने हल्के-पोपले साबित हुए !

बाद के दस वर्षों का इतिहास—वकील साहबो ने अगर

गाधी-टोपी नही छोडी, तो कधे पर काला चोगा जरूर डाला! नेताओ के कर्तृत्व का सबसे बडा सबूत धारा-सभाओं मे उनकी दहाड़ थी। हिन्दू-मुसलमान अपने उस क्षणिक स्वर्गिक मिलन को भूलकर, एक-दूसरे का गला काटने लगे! बेचारा गाधी— कभी उपवास कर रहा, कभी चर्खा कात रहा। हाँ, कुछ नौजवान आजादी की जोत को जगाए हुए है—कभी पिस्तौले गरज उठती है, कभी बम विस्फोट कर उठते है! जजीरो के कसमस के प्रमाण जब-तब मिल जाया करते है! दम गनीमत!

कि, अचानक, यह १९३०! गाधी का सोया जादू दस वर्षो के बाद फिर जागा। जजीरे फुकार रही, चिग्घाड़ रही! एक चुटकी नमक—दुनिया का कोई एटम बम भी क्या खाकर इसका मुकाबला करता? अठारह लाख वर्गमील जमीन थर-थर काप रही थी। छत्तीस करोड हृदय तरङ्गित थे, उद्वेलित थे! हवा मे बिजली! नसों मे बिजली! इधर-उधर; यहां, वहा— बिजली, बिजली, बिजली! अणु-अणु मे विद्युत-कण चमक रहे थे! चमक रहे थे, आँखों मे चकाचौध पैदा कर रहे थे।

आह, वे दिन! और, उन्ही दिनो की स्मृतियो मे अभि-भूत, आज भी मै अपने को दीवारो के नीचे खडा पा रहा हू।

पटना जेल की ये दीवारे! गुमसुम दीवारें, काली दीवारे, कठोर दीवारें, अलघ्य दीवारे!

इन दीवारो की कितने दिनो से प्रतीक्षा थी!

१९२१ में, बिहार मे सबसे पहले, जब मेरे श्रद्धेय

जजीरें और दीवारें

ससुर जी जेल गए और उनकी गिरफ्तारी का समाचार जब उस समय के, प० मोतीलाल नेहरू के, सैयद हसन के, 'इंडिपेंन्डेट' मे मोटे-मोटे अक्षरो मे छपा और बाद मे मेरे कितने साथी प्रान्त के भिन्न-भिन्न भागो के जेलो को भरने लगे, तो मुझे अपने दुर्भाग्य पर कितना अफसोस हुआ था !

और, तब से हिन्दी, अग्रेजी, बगला या उर्दू मे जेल-जीवन-सम्बन्धी कोई ऐसी पुस्तक रह गई थी, जिसे मै पढ़ न गया होऊं ?

किन्तु, कल्पना की दीवारों और यथार्थ दीवारो मे कितना अन्तर होता है ! नही, नही, आखो से देखी गई चीजों मे भी, परिस्थिति के कारण, कितना महान् अन्तर हो जाता है ?

इन दीवारो को कितने दिनो से देख रहा था ? स्टेशन से उतरकर आप बिहार की इस राजधानी मे घुसे नही कि आपकी आँखे इन दीवारो से टकराई ! हा, बिहार की राज-धानी से निकलते या उसमे घुसते समय आप इन दीवारों की दृष्टि से बच नहीं सकते । और, मै तो दस वर्षो से मुख्यत: इसी शहर मे रहा । इधर-उधर आते-जाते, न-जाने कितनी बार, इन दीवारो की छाया से गुज़रा हू और कितनी बार गरम सासे भर चुका हूं ।

किन्तु, क्या ये दीवारें पहले कभी इतनी ऊची दिखाई पडी थी ?

सब जेलो की ऊँचाई एक होती है । जब अपने ससुर जी

से मिलने सीतामढ़ी-जेल में जाया-आया करता था; तब भी ये दीवारें इतनी ऊंची नहीं दिखी थी !

इनमे यह ऊंचाई कहां से आ गई ?

इतनी ऊँची : इतनी काली ? हां हां, पहले इतनी काली भी तो नही दीखती थीं ! और, इनकी वाणी को अवरुद्ध करने वाली मूकता और हृदय को जड़ीभूत करने वाली कठोरता का अनुभव तो आज पहली ही बार कर रहा हूं !

ये काली दीवारे—ये नंगी दीवारें !

नंगी !

हा, हां, इनकी नग्नता तो अभी-अभी दिमाग मे कौंधी है।

नंगी सब बुरी, बीभत्स। किन्तु उन दीवारो से भगवान् रक्षा करे, जो नगी है। जिन पर छज्जे या छत है, वे दीवारें आपका घर बन जाती हैं—आपको आराम देती हैं; आपको प्रकृति और मनुष्य की कुदृष्टियो, कुवृत्तियों से बचाती है ! लेकिन बे-छज्जे या बे-छत की दीवारे—घेरा ! हां घेरा—मनुष्य के लिए और पशु के लिए भी। बे-छज्जे या बे-छत की दीवारें···सृष्टि की सबसे कुरूप, घृण्य रचना !

और, वे ही आज, आहनी फाटक का मुह खोले, मुझे निगलने को खड़ी है ! उफ, किस तरह घूर रही हैं वे मुझे !

राक्षसी, क्यो घूर रही है ? किसे डरा रही है ? आ रहा हू, राक्षसी ! आ गया हूँ, राक्षसी ! जानबूझकर, सोच-समझकर तुम्हारी छाया मे आज आ खड़ा हूं राक्षसी !

खुल, ओ लोहे का फाटक ! वार्डर साहब, खोलिए

फाटक ! ये दीवारें मुझे बुला रही हैं ! मेरी परीक्षा लेने को बुला रही है : मेरी घात की परीक्षा लेने को बुला रही है, ये दीवारें ! आपको हैरत हो रही है ! मैं क्या बक रहा हूं ? कब तक हैरत ? कितनी बार हैरत ? आज अप्रैल १९३० को जिस यात्रा का प्रारम्भ हो रहा है, वह पन्द्रह सालों तक—जुलाई १९४५—जारी रहेगी और लगभग इतनी ही बार आपको या प्रान्त के आपके किसी साथी को इसी तरह पत्थर की दीवारों के आहनी फाटक खोलने पड़ेंगे !

स्वागत

झनझनझन्—और एक गहरी चीख के साथ लोहे का फाटक खुला !

लोहे की किस्मे होती है—कोई झनझनाती है; कोई चीखती है, चिल्लाती है !

लोहे के बडे-बडे तालों की लम्बी-लम्बी तालिया झनझनाई और लम्बे-मोटे छड़ो के बोझ से फाटक की कीलियां चीख उठी !

भीतर !—लेकिन अभी तो मैं जेल के दरवाजे पर ही हूं। इस फाटक के बाद एक और फाटक है। दोनों फाटकों के बीच मे एक चौड़ी-सी जगह, जिसके दोनों ओर दो कमरे। एक कमरे में जेलर साहब टेबुल पर सर झुकाए हुए कुछ लिख रहे है और दूसरे कमरे में उनके सहकारी अफसर है। दोनों फाटको के बीच जमादार साहब है, जो भीतर से तालो को खोलते और कैदियों की आमदरफ्त का पूरा, पक्का हिसाब लिखते जाते है।

दीवार पर ये क्या टगी है ? लाल कपडे की पृष्ठभूमि पर ये क्या काली-काली चीजे टगी है ? जजीरे ! जजीरे ! अभी जजीरे सुनते ही थे, कल्पना ही करते थे, अब देखो, इन्हे यहा ! अच्छी तरह देख सको, समझ सको, इसीलिए यह लाल पृष्ठभूमि !

अरे, कितने प्रकार है इनके ! हथकडी—वेड़ी ! हथकड़ी, खडी हथकड़ी; वेड़ी, डडा वेडी, सीकड़ वेडी। कोई पतली, कोई मोटी, कोई छोटी, कोई मंझोली, कोई वड़ी। जैसे देवता, वैसी पूजा !

हमे गिरफ्तार करके लाने वाले इन्सपेक्टर साहव जेलर से कुछ वाते कर रहे है, कुछ कागज दिखा रहे है, कुछ लिखा-पढी हो रही है। दूसरे कमरे मे कुछ कलम घिसघिस चल रही है, टाइपराइटर खटखट कर रहे है !

सव लोग रह-रहकर हमारी ओर उत्सुकता से देख रहे है। शायद सोच रहे है, ये लोग कैसे खव्त है ? यह कौन-सी हवा वही है ? इसका हश्र क्या होगा ? वडे अकडखा वने थे ये, अव इन्हे मालूम होगा, देशभक्ति क्या चीज है ? आजादी क्या चीज है ? आजादी की कीमत कैसी होती है ?

लेकिन मेरे मस्तिष्क मे पिछले तीन-चार घटो के दृश्य नाच रहे है ?

आज अम्विका नमक वनाने जाने वाला था। मुझे हुक्म हुआ था, तुम्हे 'युवक' को निकालते रहना है, इसलिए वाहर

ही रहो। किन्तु, अम्बिका की विदाई में शामिल होने से कैसे रुक सकता था ? अम्बिका—मस्त मौला अम्बिका; दोस्त-परस्त अम्बिका ! मेरी दोस्ती के चलते क्या नही छोडना पड़ा उसे ! 'सर्चलाईट' की मैनेजरी; नेताओं की कृपादृष्टि ! किन्तु जरा भी परवाह हुई उसे ? टाउन कांग्रेस कमेटी का वह प्रेसीडेन्ट !—किन्तु शहर के नेता नही चाहते थे कि यहाँ कुछ ऊधम हो ! बड़ी मुश्किल से, मुज़फ्फरपुर जाकर, कल राजेन्द्रबाबू से मै आज्ञा ला सका कि पटना में भी नमक-सत्याग्रह हो। आज ही यह कूच ! कम से कम अम्बिका के विदाई-समारोह में शामिल होने से मै कैसे रुकता ?

लोगों की भीड़; विदाई के भाषण, रोली-चदन; जयजयकार। अम्बिका की बंगालिन पुजारिनों ने उलू-ध्वनि भी की !

"अरे, आप ! यहाँ ?" "चुप"—मेरा हाथ जोरों से दबा दिया गया—जैसे इस्पात के शिकंजे कस गये हों ! "उह-भैया !" "चुप-साला !" भैया का यह प्रेमशब्द ! नही नही भैया ! यहां पुलिस वालों का जमघट है—आप क्यों आए ? कब से इस शहर में ? भैया मेरे हाथ को पकड़कर अपने कोट की जेब मे ले गए—कुछ स्पर्श ! भैया मुस्कुरा पड़े ! अरे, जब तक मै जगा हूं और जेब मे यह है, कौन गिरफ्तार कर सकेगा मुझे ? देख, वह जुलूस चला; जा।

उस स्पर्श का अनुभव अब भी हाथो में झिनझिनी ला रहा है। भैया कहा गए ? कही वह भी गिरफ्तार न हो

जाए ! उनकी गिरफ्तारी ! क्या सिवा फासी के कोई चारा है उनका ?

भैया का गोरा चेहरा, लटुरिया बाल, आंखो के सामने नाच रहे है !

जुलूस वढता जा रहा है। अभी सडकें सूनी है—वहुत सवेरा है न ? जुलूस के जयनाद और जिन्दावाद सुनकर छज्जो पर स्त्रियां निकल आती है। नुक्कडों पर कुछ लोग जमा हो रहे है।

यह पटना-कालेज ! ये पुलिस वाले भी क्या वे-अक्ल होते है कि उन्होने जुलूस को रोकने के लिए यह जगह तजवीज की !

वेरिकेड—हा, पुलिस का पूरा दस्ता सडक को रोके खडा है। आपस मे लाठिया इस तरह पकड़ रखी है कि कोई निकल न सके !

जयनाद—जिन्दाबाद ! कालेज के होस्टल से विद्यार्थियो का झुड निकल आया। थोड़ी देर मे ही भीड़ कितनी वढ़ गई है !

अभी उस दिन मैने कृपलानी दादा से पूछा था—नमक बनाकर सत्याग्रह ! गाधी जी ने यह क्या सोचा ? सत्याग्रह ही करना था, तो कोई अच्छा-सा, भारी-भरकम, आइटम सोचे होते। दादा ने मुस्कुराकर कहा था—वात तो मेरी समझ मे भी नही आती, किन्तु, वह जादूगर है न ? देखना, कोई करामात निकल ही आएगी !

और, वह करामात देख रहा हूं।

पुलिस बैरिकेड लगाकर खडी है—रास्ता को रोके। अम्बिका का जत्था खडा है, जयनाद करते। समुद्र की तरंगें हिलोरे ले रही है, कोई मूर्ख राजा उसकी तरंगो को रोकने के लिए बालू की दीवार खड़ी करा रहा है !

वैठ जाइये; हम यही धरना दे दे ।

पुलिस-सुपरिन्टेन्डेन्ट मुस्कुरा रहा है। और, दूर पर, वह भैया मुस्कुरा रहे है—कहो, तुम्हारी अहिंसा की नाव ज्यादा से ज्यादा इसी घाट लगने वाली है न ?

लेकिन अम्बिका इस उठ-बैठ के तरीके को कब पसन्द करने वाला। वह पुलिस-सुपरिन्टेन्डेन्ट की ओर बढा, कुछ बातें, जो जयजयकार और जिन्दाबाद के नारो में फुसफुसाहट-मात्र वनकर रह गईं। फिर वह बढ़ा। पुलिस की लाठियों के नीचे से निकलना चाहा। एक गोरे सर्जेण्ट ने उछलकर उसकी बाह पकड ली। अम्बिका ने आगे बढने को जोर लगाया। उसकी बाहे मरोडकर सर्जेण्ट ने पीठ पर कर दी और ऊपर से बैटन का एक धौल जमाया! फिर ····फिर··

कोलाहल, धक्कमधक्का, उछलकूद, जयनाद, इन्कलाब जिन्दाबाद !

हाँ, अब इन्कलाब शुरू हो गया ! कब अम्बिका को पकड़ा गया, कब उसे पुलिस-वान मे बिठाकर जेल ले जाया गया, फिर कैसे, कब मै कूद पड़ा—भावना-विभोर; आत्मविभोर ! शरीर मे एक गजी मात्र; ऊपर से जो चादर

थी, वह न जाने कब, कहा खिसक गई ! नया जत्था तैयार कर मै सिटी-कोर्ट तक पहुँचा था कि पुलिस-वान आगे घेर-कर खडा हो गया और अभी-अभी वह भव्य-दिव्य सवारी मुझे इन दीवारो के नीचे पटककर चली गई है !

वे दीवारे, ये जंजीरे ! जजीरे खनकती है, बोलती है ! लाल कपडे की पृष्ठभूमि मे टगी जजीरे मुझे देखकर मुस्कुरा रही है ! वे कब बोल उठेगी ? मुखर हो उठेगी ?

"अब भीतर चलिए !"

इन्सपैक्टर वापस जा रहा है—क्या उसकी आँखो मे पानी है ? जमादार साहब भीतरी गेट खोल रहे है—क्या उनकी अगुलिया थरथरा रही है ?

अब हम जेल के अन्दर है !

इन दीवारो ने अब पूरे तौर से हमे घेर लिया ! घेर लिया ?—कितने दिनो के लिए ?

मै काप गया ! इन पत्थर-सी दीवारों के घेरे ने, जिस हृदय को थोडी देर पहले पत्थर का बना लिया था, उसे मोम-सा पिघला दिया। मै काप गया। आज पचीस वर्षो के बाद जब उन स्मृतियो को कलमबन्द करने चला हू, तो मै उसकी कपकपी अनुभव कर रहा हू।

यह कपकपी क्यो !—यह क्लीवता क्यो ? अभी कुछ क्षण पहले अपने को पत्थर महसूस कर रहा था, यह मोम कहा से पिघल आया ? कुछ क्षण पहले अर्जुन सशस्त्र होकर चला था। महाभारत मचाने—फिर यह थरथरी कैसी ?

'क्लैव्यंमास्मगम' पार्थ !' याद आ रही है, कृष्ण, तुम्हारी वे पक्तियां ! तुम उपदेशक ठहरे, कह लो ! किन्तु, हर युग मे, हर महाभारत के अर्जुनो को यह 'क्लैव्य' यह 'हृदय-दौर्बल्य' व्यथित, पीड़ित और शिथिल बनाते रहे है, बनाते रहेगे !

मालूम होता था, इन दीवारो का—इन काली, ऊंची, अलघ्य, पत्थर की दीवारों का सारा बोझ हृदय पर पड़ गया है। धुकधुकी बन्द हो रही है, सांस रुंध रही है, रुक रही है।

उफ, अब सारा ससार मुझसे अलग हो चुका ! अट्ठारह फीट ऊची इन दीवारों ने करोडो मील लम्बी-चौड़ी इस पृथ्वी को मुझसे अलग कर दिया। अब वे पेड़-पौधे न मिलेगे, जिन्हें अतृप्त आंखो से देखा करता था, वे स्वजन-परिजन न मिलेगे, जिनसे दिन-रात की चुहले थी।

स्वजन, परिजन ! तरह-तरह के लोग, तरह-तरह के चेहरे ! तरह-तरह के चेहरे और तरह-तरह की आँखे ! और उन सैकडों-हजारों आँखो मे ये दो किसकी आंखे चमक उठी है ? अनेक जोड़े आखों के बीच ये एक जोड़ा आंखे ! ये दो आँखे। ये चिर-परिचित आखे; ये सजल प्रेमल आखे ! ये कातर विह्वल आँखे ! ये आँखे, ये आंखे !

रानी, रानी ! मेरी कुटिया की रानी ! मेरे हृदय की रानी ! तुम्हारी ये आंखें रानी ! सम्हालो, इन आंखो को रानी ! सम्हालो इन आँखों के इस पानी को रानी ! जानता हूं रानी, तुम्हारी क्या दशा होगी ? अपने एकमात्र अवलम्ब से अलग

होकर तुम्हारी क्या दशा होगी ? तुम्हारी क्या दशा होगी और क्या दशा होगी तुम्हारे एकमात्र शिशु की, जिसे बारह वर्षो की तपस्या के बाद तुमने पाया है ! किन्तु, यह तो होना ही था—यह तो सहना ही है। इसलिए सम्हालो ! हां, हा—सम्हालो, सम्हालो। देखती नही हो, विद्रोही की, प्रचड की, उद्दड की ये आखें भी आज पानी-पानी होने पर है ! बगल मे साथी खडे है—जजीरो के प्रतीक ये जेल-अफसर खडे है ! वे क्या कहेगे ? बडे बने थे शेर! जेल की पहली झलक ने ही—पहली झलक ने ही······

नही, नही, रानी, सम्हालो ! हृदय सम्हालो ! यह शोभनीय नही, वाछनीय नही—'नैतत्वय्युपपद्यते'। 'उत्तिष्ठ परंतप' ! अर्जुन, उठो। विद्रोही, सम्हलो !

"इसी वार्ड मे आप लोगो को रहना है।"

जैसे नीद टूट गई। हा, हां, इस नीद का टूटना ही अच्छा! सामने यह खटाल। ऊँची, अलघ्य, कठोर, गुमसुम दीवारो के अन्दर यह खटाल ! नमस्ते, ओ मेरे नए जीवन का नवीन आवास-स्थान ! नमस्ते ! तुम क्यो नही बोलते—स्वागत !

सत्कार

जंजीरे फौलाद की होती है, दीवारे पत्थर की ।

किन्तु इन्हें क्या कहे जो दो पात्र मेरे सामने डाल दिए गए है ? ये किस धातु के है ? इन्हे किस शुभ नाम से संबोधित किया जाए !

शायद ये भी लोहे के है, ऊपर जंग-जग और धब्बे-धब्बे तो यही बताते है । आकार मे तसले-से । किन्तु इनका नाम ?

याद आई । योगी अरविन्द ने अपने जेल के अनुभव मे इन्हे आई० सी० एस० की उपाधि दी है । आई० सी० एस० ! इनसे जो भी काम ले लीजिए । शासन मे, शिक्षा मे, अर्थ-विभाग मे, न्यायविभाग मे—इन्हे जहा रख दीजिए, हर जगह फिट । ये तसले भी सब काम करते है । इनमें खाइये, इनमे पानी पीजिए, इन्हे लेकर शौच जाइए और यदि कभी मन बिगड़ जाए, तो इन्ही को लेकर किसीका सिर तोड़ दीजिए ।

बस, बस, आई० सी० एस० ।

लेकिन, अम्बिका कह रहे है, इनमे छोटा-सा जो है, उन्हे

डिप्टी क्यों न कहा जाय ? आई-सी-एस० का छोटा भाई—पूरा का पूरा भारतीय !

और नामकरण का सिलसिला बढा, तो वह बड़ा-सा लोहे का कुप्पा, जिसमे पानी रखा जाता था, रायबहादुर बन गया। कान जरा मल दीजिए, टोंटी को जरा घुमा दीजिए, फिर जितना चाहिए, पानी ले लीजिए। तो, पात्रों के तो ये नाम। किन्तु, उस चीज को क्या कहा जाए, जो खाने के लिए इस आई-सी-एस० के खोखले, खुरदरे पेट मे अभी-अभी रखी गई है !

इसे कहा तो गया है भात, किन्तु क्या यह भात है ? भूसा, कण, चावल और फकड—इन चारो को समान भाग मे—जैसे काटे पर तोलकर—यह विचित्र चीज बनाई गई है ! अजीब शक्ल, अजीब रग, अजीब स्वाद, अजीब गन्ध !

और जो भात पर रखी गई है, वह क्या तरकारी है ? किस चीज की तरकारी ? भटे की डठल, कद्दू के छिलके, सेम के रेशे और साग का पूरा झाड—सबको काट-कूटकर लोहे के कड़ाह मे रखकर उबाल दिया, नमक रख दिया और जब वे सब एक रूप मे आ गए, तो उतार लिया। क्या तरकारी इसी को कहते है ? और अभी यह मत पूछिये कि डंठल, रेशे, छिलके और झाड तो यहा रखे गए है, इनका असली भोज्य पदार्थ क्या हुआ ? जेल मे पहले दिन मे ही इतनी सारी बातों का पता नही लगाया जा सकता, न लगाना चाहिए।

और, डिप्टी साहब के पेट मे जो काला-काला पानी, दाल के नाम पर डाला गया है, उसके बारे मे वह तमाशा

देखिए । एक मसखरे साथी कुरता उतार रहे है । क्यों, भाई ? क्या बात है ? जरा डुबकी लगाकर देखना चाहता हू—दाल का एकाध चक्का भी मिलता या नही !

दुपहरिया हो गई है । पेट मे भूख खाव-खांव कर रही है । किन्तु क्या खाया जाए, कैसे खाया जाए ? तथाकथित भात का नेवाला मुह मे रखा गया कि एक बार ही सारे दात किटकिटा उठे । एक-एक दांत के नीचे कितने-कितने कंकड । सभी थूक रहे है, रसोई परोसने वाला मुस्कुरा रहा है । बाबू, एक काम कीजिए । दाल फेक दीजिए; उस बर्तन में पानी रख दीजिए । फिर भात उसमे डाल दीजिए । भूसा ऊपर दहला उठेगा; कंकड़ नीचे बैठ जाएगे, भात बीच मे तैरता रहेगा । भूसे को ऊपर-ऊपर से छानकर फेक दीजिए; फिर भात खाइए ।

वही हो रहा है । लेकिन बार-बार याद आ रही है उस मुसलमान इन्सपैक्टर की, जिसने जेल के रास्ते में बार-बार आग्रह किया था कि कुछ खा लीजिए । किन्तु तैश में आकर नांही कर दी थी—सोचा था, ये कम्बख्त एक तरफ हमे गिरफ्तार करते है, दूसरी तरफ दया की धौंस जमाना चाहते है ।

"भाई, शाम को क्या खाना देते हो ?"

रोटी ! किस चीज की ? गेहूं की बाबू ! किन्तु रसोइया के मुह पर, यह कहते समय, कुछ विचित्र रेखा खिंच आई थी । उस रेखा का अर्थ संध्या समय खुला ।

यह गेहूं की रोटी—काली-काली—मंडुवे की रोटी की शक्ल ऐसी। वैसी ही काली, वैसी ही मोटी। वैसी ही अधपकी! और, स्वाद? गंध? आटे के साथ सारे घुन ही नही पीस दिए गए हैं; काफी मिट्टी भी मिला दी गई है। क्या किया जाय? जेल-अफसरो के घर पर जो आटा भेजना होता है और भुक्खड़ पिसनहार भी तो कुछ गेहूं फाक जाया करते है बाबू! अंटसट मिलाकर आटा तौल दिया गया—बताइए, पकाने वाले का क्या कसूर?

जेल यही है! इसी मे, इसी तरह, कितने दिन काटने है। कितने दिन? अभी सजा तो मिली ही नही है।

दोपहर तक पैदल दौड़ते फिर रहे थे, शरीर चूर-चूर था। दोपहर से तरह-तरह की चिन्ताएं दिमाग को थका चुकी थी। सोया जाए, सवेरे सोचा जाएगा। शाम को, सूर्यास्त के पहले ही, खटाल मे ठूस दिया गया था। बिस्तर के लिए जमादार साहब तीन-तीन कम्बल दे गए थे।

कम्बलों से अजीब बदबू आ रही है। अभी हम हाजती कैदी है—अपने कपडे मिल सकते है। किन्तु, अभी हमारे कपड़ो की 'सर्च' नही होने पाई है। इसलिए रात इन कम्बलों पर ही। मेरे पास तो सिर्फ धोती और गजी। यह पटना है, अप्रील के मध्य मे भी काफी गर्मी। नीचे से कम्बल के रोये काट रहे हैं। और ऊपर से पटना के प्रसिद्ध मच्छरों का धावा शुरू हो गया है। नीद क्या खाकर आएगी?

खटाल की छत से लटकता हुआ फूटे शीशे का लालटेन

टिमटिमा रहा है और नीचे एक ही सिरहाने लगभग आधे दर्जन हम लोग करवटें बदल रहे है। शाम को थोडा प्रार्थना हुई थी; कुछ बाते हुई थी, लेकिन इस समय तो सभी गुम-सुम हैं। शयाद किसी का दिमाग यहां नही है।

यह क्या ? शब्दों का एक अजीब ताता लग गया। सारा जेल गूज उठा। एक तरफ से आवाज आई—"एक-दो-तीन-चार-पांच-छ-सात-आठ ··।" अरे, ये तो बढ़ते ही जा रहे है। पहला उन्चास पर जाकर रुका और बोला—"उन्चास कैदी ठीक है, जगला बत्ती ठीक है, गिनती करो छ नम्बर।" अब छः नम्बर के खटाल की तरफ से आवाज उठी। वही "एक-दो-तीन-चार—कहां तक उनका साथ दीजिएगा ? और सबका ताला टूटता है—इतने कैदी ठीक है, जंगला-बत्ती ठीक है, गिनती करो अमुक नम्बर !" आवाजो मे विभिन्नता, चढ़ाव-उतार मे विभिन्नता। कोई चिल्ला रहा है, कोई चीख रहा है, कोई जैसे गा रहा है, कोई जैसे रो रहा है ! किसीका ठहराव तीसरे नम्वरों पर होता है, किसीका चौथे पर, किसीका पांचवें पर, तो कोई एक ही सास मे सात सुरो को लांघ जाता है !

पहले कुतूहल हुआ; थोडा आनन्द भी आया। गांव मे एक सियार के बोलते ही जो सैकड़ों सियार बोल उठते है, उसका स्मरण हो आया। किन्तु कुछ देर के बाद तो ऐसा लगा कि कोई हथौडे की चोट लगातार दिमाग पर दे रहा है।—ठाय, ठांय, ठांय ! और वह जेल के गेट पर ठांय-ठांय-ठाय करके घड़ियाल

ने बारह बजने की सूचना भी दे दी ।

कैसी आत्मवंचना ? हम सबके सब जगे है, किन्तु कोई किसीको यह जानने देना नही चाहता कि उसे नीद नही आ रही है । हमारे साथी क्या समझेंगे कि हम घरेलू या बाहर की चिन्ता मे चूर है । वे मुझे कितना छोटा समझेंगे ? हुं— जैसे, हम आदमी नही हैं—जैसे हममें हृदय नही है ? अजी, जेल में पहली रात भी गाढ़ी नीद मे सो सके, वह या तो होगा योगी, या पत्थर—हृदयहीन, भावना-विहीन !

कान मे ठांय-ठांय; पेट मे खांव-खाव और दिमाग में हाहा-हू-हू । ऊपर से हथौड़े की चोट और यह नीचे से यह बरछी की चुभन ! यह टुस्-टुस् ! ये क्या सिर्फ कम्बल के रोये है ? कम्बल पर आधी धोती बिछा रखी थी । धुंधली रोशनी मे देखा—असख्य खटमल उस पर टहल रहे है ।

और, यह देखिए दीवारो पर खटमलों का ताता । अब तो सभी साथी उठ-उठकर कपड़े झाड़ रहे है । किन्तु कहा तक कपड़े झाडिएगा ? "अरे ऊपर से भी खटमल बरस रहे है !" हां, हा, हमने देखा कि खटाल की छत पर से खटमल बरस रहे है । ये छोटे जानवर भी कितने होशियार होते है ! कौन दीवारो की दूरी रेंगकर पार करे ? ऊपर से अपने को छोड़ दिया और हमारे सिर पर, पैर पर, गच पर ही सही, कही-न-कही आ ही जाएंगे ! फिर तो ताजा खून की बहार !

पी लो दुष्टो, पी लो ! इस देश मे खून पीने वालों की संख्या क्या कम है ? तुम्ही को दोष क्यों दे ?

पानी से ही जो पेट भर रखा था, बार-बार पेशाब करने के लिए उठना पड़ता है। पेशाब के लिए यह कैसा बर्तन रख दिया गया है ? बड़ा-सा हंडा। खड़े-खड़े पेशाब कीजिए—गर-गर गरगर—उफ़, यह अजीब शब्द ! ज्यो ही आखें झिपती है, यह शब्द ! सभी साथियो की एक ही हालत है। कोई किसी-से अपनी मर्मव्यथा नही कहना चाहता—सब अपनी बेचैनी को छिपाते है ! किन्तु क्या वे इसमे समर्थ हो पाते है—प्रकृति की पुकारे उनका भडाफोड़ कर देती है !

"बाबू जी, नीद नही आ रही है ?"

यह सिपाही बोला—जो हमारे खटाल के पहरे पर रखा गया है। जैसे आत्म-सम्मान को धक्का लगा। आँखे मूँद ली—अतःचेतन ने मदद की। और पिछले पहर की चैत की रात की पुरवैया ने भी।

चैत की पुरवैया, रात के पिछले पहर की। जिसके साथ भीनी-भीनी गध ! यह गंध—स्वर्गिक गध। नाक कह रही है—यह गध मोतिये की है। पटना का मोतिया नामी है न ? हां, हां, आते समय, खटाल के आंगन में, मोतिए के कुछ पौधे देखे थे। झुलसे-मुरझाये। इन्हे कौन पानी दे यहाँ ? किन्तु परिस्थिति प्रतिकूल होने पर भी प्रकृति अपनी एक झलक दिखा ही जाती है। मालूम होता है, उस रूखे-सूखे पौधे मे भी एकाध कली लग आई थी; इस पुरवैया को पाकर वह सकुची-सहमी कली खिल उठी है। कली खिली—सुगध फैली ! पुरवैया के झोंके ने उसे हमारे नाकों तक पहुंचा दिया है—सोओ, ओ

बावरे ! इन काली, कठोर, घृण्य दीवारों के भीतर भी, खाद्य—पानी, लाड़-प्यार के अभाव मे भी, कलियाँ खिलती ही है—अपनी सुगंध पसारती ही है; तो फिर तुम क्यो चिन्तित हो रहे हो, क्यो अपनी प्रकृति और प्रवृत्ति भूल रहे हो। सोओ-सोओ !

कब आँखें झिपी ? कब नींद आई ?

किन्तु, गध के साथ मेरे मस्तिष्क मे स्वप्न का अजीब गठबंधन है। जब-जब भीनी सुगध का तेल लगाकर या सिर-हाने गजरा या गुलदस्ता रखकर सोया हूं, रात भर सपना देखता रहा हूं ! वह रात भी सपने मे बीती। किन्तु कैसे सपने? सुख के ? दुःख के ? मिलन के ? विरह के ? किस मुस्कराहट ने मेरी बाँहो को पख बना दिया ? किस काकली ने मेरे पैरों मे चक्के बाध दिए ? मै उड़ रहा हूं—फुर्र, फुर्र, फुर्र, फुर्र। मै दौड़ रहा हूँ—सर्र, सर्र, सर्र, सर्र ! मै कहा हूं ? किस लोक मे हूं ?

उठता हूं, तो धूप उग आई है—एक सुनहली चादर सब चीजो पर पड़ी है, सुनहली जो इस वीभत्स वातावरण की सारी भयानकता को ढक रही है, ढप रही है !

साथी

साथी हों, तो आदमी नरक भी काट ले। सबेरे से जो झुलस का सन्देश लाई है, पटना की उस चैती धूप की चिल-चिलाहट मे अपने साथियों को देख रहा हूँ।

यह है स्वामी जी—स्वामी सहजानन्द सरस्वती। कैसा तेजस्वी व्यक्तित्व ! जिस ओर मुडे, तूफान की तरह बढे। अपनी जाति का अपमान देखा, उसे आस्मान तक चढ़ा दिया। किसानो का दुखदर्द देखा, तो उसी जाति के जमीदार से खम ठोककर भिड गए। राष्ट्रीयता की ओर मुड़े, तो यह गेरुआ वस्त्र लिए इस जेल में आ पहुँचे है। प्रचड विद्वान्·· लोकमान्य तिलक की गीता की व्याख्या के विरोध में एक पोथा ही लिख डाला है—अकाटच तर्कों से युक्त ! भगवान् इनके क्रोध से दुश्मनों को बचाएं। किन्तु यह क्या—एक ही रात मे इनका एक नया रूप सामने आ रहा है ! अरे, नारियल से कठोर, रूखे-सूखे व्यक्तित्व के भीतर कैसा तरल, कोमल, सरस, स्निग्ध हृदय ! दर्शन के प्रकांड पडित के होठों से मीर

और गालिब के शेर अजस्र फूट रहे है !

यह है जगत बाबू—१९२१ के असहयोग-आन्दोलन मे वकालत छोड़कर स्वतन्त्रता सग्राम मे कूदे ! जेलों मे इतने कष्ट सहे कि अर्ध-विक्षिप्त होकर लौटे थे—कहते थे, मैने भगवान् को प्रत्यक्ष देखा है। कविता भी रचने लगे। किन्तु, जब प्रतिक्रिया का दौरदौरा हुआ, हिन्दूसभा के प्रवाह मे बह गए। भटका हुआ कबूतर फिर अपने दड़बे मे आ गया है। अभी-अभी दूसरी शादी की थी—और आज जेल मे है ! सोच रहा हूँ, उस दिन स्टेशन पर उनके पीछे जिस लजाती, सकुचाती, रागभरी सुहागभरी किशोरी को देखा था, वह बेचारी कैसे होगी ? कहां होगी ?

अपने प्यारे सखा अम्बिका के बारे मे क्या लिखू ? मस्तमौला—विचारो मे क्रान्ति, आचार मे क्रान्ति, व्यवहार मे क्रान्ति। उस दिन मेरी चुटिया काट डाली, अब जनेऊ तोड़ने पर तुला है—भेदभाव के ये कुत्सित चिह्न, आत्मा को जकड़ने वाले ये बंधन–तोडो इन्हे, छोडो इन्हे। शोख—कभी स्वामी जी को छेड देता है, कभी जगत बाबू से चुहलें करता है !

यह जस्सूलाल जी है—सिटी मे फलो की दुकान थी। जब हम लोग उस ओर जाते, प्रेमपूर्वक पवाते। आर्यसमाजी—उदार विचार, राष्ट्रीयता के हामी। हम लोग हसी-हंसी मे इन्हे अपना 'गार्डियन' कहते—अब जबकि इनके 'वार्ड' यहां

आए, तो 'गार्डियन' उन्हें इस पर-पुरी में, पाषाण-पुरी मे अकेले कैसे छोड़ते ?

यह है कीर्त्ति बाबू—चेहरे से कैसी सरलता और सौम्यता टपक रही है ! देहात से आए हैं, एक राष्ट्रीय स्कूल मे अध्यापक थे ।

और यह रामनाथ—एक विद्यार्थी । हमारे युवक-संघ का उत्साही कार्यकर्त्ता ! जब पुलिस मुझे पकडकर 'बस' मे बिठला रही थी, कूदकर भीतर चला आया—मै भी जेल चलूगा ।

क्या हम सात इस छोटे-से दायरे मे देश का सच्चा प्रतिनिधित्व नही कर रहे है ? कभी-कभी मन-ही-मन सोच रहा हू, धन्य हो गांधी-बाबा, कैसे-कैसे जानवरो को एक ही नाद में भुस्सा खिला रहे हो तुम !

हां, हा, देखिए, वह नाद मे भुस्सा आ रहा है—और जो कुछ हो, तीनो बेला, ठीक समय पर, चारा-पानी पहुंचाने मे जेल ज़रा भी कोताही नही करता ।

यह नाश्ता है—खिचड़ी । पानी, पानी, जिसपर भुने हुए लाल मिर्चे तैर रहे है ! बस, मिर्चे जीभ पर रखिए और खिचड़ी सुडक जाइए, बड़ा मजा आएगा—यह कह रहे है हमारे भीमाकार रसोइया जोधीसिंह । दियारे के रहने वाले है, ज़मीन की हदबदी लेकर झगड़ा हुआ, युद्ध ठना, कई खून हुए । जोधीसिंह को दस साल की सज़ा है—जैसा शरीर वैसा ही काम मिला है । पूरी देगची किस आसानी से उठा लेते है !

खिचडी सुडककर बाहर देख रहा हूं। यह सामने विशाल पीपल का पेड। बेचारे को क्या-क्या न देखना पडा है, क्या-क्या न देखना पड़ेगा !

मानव तुम भी विचित्र हो ! जिस देव-वृक्ष के नीचे बैठकर भगवान् बुद्ध ने विश्वकल्याणकारी ज्ञान प्राप्त किया था, उसी को यंत्रणाओ का आगार बना दिया गया है। देखिए, उसके मोटे तने और डालों मे वे लोहे की कीले ठुकी हुई है। वे क्या है ? कही-कही देहात मे ऐसी कीले देखी है जिनका अर्थ होता है, प्रेतो को इन कीलो के द्वारा कैद कर दिया गया है। किन्तु इन कीलो का क्या अर्थ ? बताया जा रहा है, बदमाश कैदियों को जब खडी हथकडी देनी होती है, इन्ही कीलो मे हाथ की कड़िया बाध दी जाती है। बस लटकते रहिए, जजीर हिलाते रहिए, इस पीपल के देवता को गुहराते रहिए !

हा, दीवारे पत्थर की होती है, जजीरे फौलाद की। जजीरे चीखती है, चिल्लाती है और दीवारे गुमसुम !

किन्तु, इस पीपल के निकट जो छोटी-छोटी दीवारे है, वे तो चीखती है, चिल्लाती है। उनकी चिल्लाहट से रात कई बार नीद उचटी है !

बडी दीवारो के अन्दर छोटी दीवारें—जेल के अन्दर सेल।

जेल दबोचता है, सेल पीस डालता है !

कौन बेचारा पिस रहा है इसमे ?

बेचारा नही, बेचारे। एक नही दो-दो।

एक पागल है, एक बच्चा।

कुछ दिनो के बाद, उस पागल की जो गत हुई, पच्चीस वर्षों के बाद भी उसकी याद कँपा डालती है।

दिन भर वह चिल्लाया करता, रात भर चीखता या कराहता होता।

जेलवालों का शक था, मुकदमे से बचने के लिए उसने यह स्वांग भर रखा है—उसपर कोई संगीन मुकद्दमा था।

एक दिन वह चिल्ला रहा था कि जमादार ने उसे डॉटा। जमादार की डांट : पागल की झड़प। जमादार ने गाली दी, पागल ने थूक फेंकी। थूक जमादार की पगड़ी पर आकर चस्पाँ हो गई, वह बलगमी थूक, जो झाड़े न झड़े, धोये न धुले! जमादार क्रोध से लाल हो उठा।

चाबियों का झब्बा झनझना उठा; सेल का फाटक खुला और फिर थप्पड़, घूसे, डंडे। वह छोटे-से सेल में इधर भागता, उधर भागता। फिर न जाने उस पागल मे कहाँ से इतना बल आ गया। जमादार साहब को उसने उठाकर दे मारा—जमादार चारों खाने चित्त और उसकी छाती पर वह पागल बैठा है!

उसी समय जमादार की सीटी गूँज उठी। चारो ओर से सिपाही दौड़े और···

और न पूछिए। थोड़ी देर मे वह बेचारा लोथ-सा पडा है

और उस पर लाठी, डडे, लात-घूंसे के प्रहार-पर-प्रहार हो रहे हैं।

पहले वह औंधा पडा था। पीड़ा से व्याकुल उसने करवट बदली, चित्त हो गया। जमादार उछलकर उसकी छाती पर चढ गया और अपने बूटों से इतने जोर से हुमच दिया कि उसके मुँह मे खून के लोदे इस तरह निकलने लगे जिस तरह बचपन मे हम जोंक के मुंह पर चूना लगा देते थे, तो वह खून उगलने लगता था।

खून की धारा देखकर एक सिपाही ने जमादार को खींच लिया। तब तक डाक्टर साहब पहुँच चुके थे। डाक्टर ने क्या किया—आप कुछ कल्पना कर सकते हैं?

उनकी आज्ञा से पागल के मृतप्राय शरीर को पानी के हौज मे डाल दिया गया। फिर उसे नंगधडंग सेल मे बंद कर दिया गया और चलते-चलाते उन्होंने सख्त हिदायत की—साले को पानी भी नही देना!

वह दिन भर कराहता रहा, रात-भर पानी-पानी चिल्लाता रहा।

मुझे उस रात नीद नही आई। चिल्लाहट धीरे-धीरे क्षीण होती जाती। ज्यों-ज्यों क्षीण होती, त्यों-त्यो अधिक करुण होती जाती। चीख कराह मे बदलती, फिर बन्द···। मुझे धक-सा लगता कि बेचारा शायद मर गया। किन्तु क्या मरण इतना सरल-सुलभ है। फिर कराह, चीख, चिल्लाहट—पानी, पानी, पा—नी, पा—नी, पा—पा—

और यह बच्चा।

अभी दस साल का लगता है। धूल-गर्द से धूमिल चेहरा—तो भी कितना सुन्दर लगता है। हाफ कमीज—हाफ पेंट। पेंट काला, कमीज लाल। ज्यों ही सेल का दरवाजा खुला, पीपल के पेड के नीचे बैठ गया! हम लोगों को देख रहा, उसकी आँखे बता रही, हमारे निकट आने को ललच रहा, किन्तु जमादार बता रहा, बचियेगा बाबू, पुराना गिरहकट है, चट है चंट, कई बार आ चुका है, चेहरे के भोलेपन पर नही भूलिएगा!

पुराना गिरहकट—चट है चट—भोलेपन पर नही भूलिएगा—कई बार आ चुका है, इससे बचिएगा!

किन्तु प्रश्न है—इस भोले बच्चे को चंट किसने बनाया? जिसे चूमने की इच्छा हो, उससे बचने की तम्बीह की क्यो जरूरत पडी? इन प्रश्नों का उत्तर कौन दे? किससे पूछा जाए?

और पीपल के पेड़ के सामने कुछ दूर पर वह फाँसी-चबूतरा है। और फाँसी-चबूतरे के निकट ही वह फाँसी-सेल। क्या उस सेल मे भी कोई है, जो जीवन और मृत्यु के झूले पर झूल रहा होगा।

है—चौबे जी है मालिक, यह मेरा सफैया कलुआ बात रहा है!

चौबे जी!

याद आया—उस दिन पटना की निचली सड़क पर एक

धडाका हुआ था। कोई क्रान्तिकारी नौजवान आ रहा था, उसे फँसाने के लिए पुलिस ने फँदे डाल रखे थे। वह साइकल पर दनादन आ रहा था कि अचानक साइकिल मे धक्का लगा, वह गिर पडा। फिर साइकिल छोड़कर वह एक गली मे भागा। गली मे भी फँदा डाला गाया था। अपने को घिरा देख उसने वम फेका। वम फूटा, धडाका हुआ। किन्तु वह अपने को गिरफ्तार होने से वचा नही सका।

फिर एक षड्यन्त्र केस—एक हत्या भी जोड दी गई—चौवे को फाँसी की सजा हुई। कलुआ कह रहा है, चौवे जी कैसे अच्छे गभरू जवान है, वावू। हाय, उनको फाँसी होगी!

और तू किस दफा मे आया है रे कलुआ?

कलुआ—मगहिया डोम—विहार की वदनाम जरायम-पेशा कौम। काला आवनूसी रग—पुट्ठे-पुट्ठे कसे हुए। कड़ी-कडी मूछे—छोटी-छोटी आँखे अधजले कोयले की तरह रह-रहकर वल उठती। मेरे प्रश्न पर मुस्कुराता है। चोरी करो, शराव पीओ, पकडे जाओ, यहाँ आओ, फिर छूटकर यही क्रम जिन्दगी-भर दुहराते रहो—यही है इस कौम का नसीव, भाग्यरेख!

तुम्हारी वीवी भी है कल्लू?

हाँ, सव है वावू, वीवी, वाल-वच्चे, सव है।

उन्हें कौन देखता होगा तेरी गैरहाजिरी मे?

कुनवा उन्हे देखेगा वावू। यही होता है। जो यहाँ आ गए उनके परिवार की देखरेख जो वाहर रह गए, वे करते है। चोरी के माल मे सवका साझा, सुखदुख मे सवका

साझा। अगर ऐसा नही हो, तो यह पेशा ही नही चले बाबू—कलुआ अपनी मूछो पर ताव देते हुए मुझ अज्ञानी को समझाने की कोशिश कर रहा है।

ये ही हमारे साथी है—ऐसे ही लोग हमारे साथी होंगे, जब तक हम जेल मे रहेगे ! हमारा सप्तर्षि मंडल और उसके इर्दगिर्द वह पागल, वह बच्चा, जोधीसिंह, जमादार, सिपाही, यह पीपल का पेड, वह फाँसी का चबूतरा, चौबे जी और सबसे बढ़कर वह डाक्टर !

न-जाने क्यो, उस डाक्टर पर बार-बार सोचने को मजबूर होना पडता। हमारे साथ कैसा अच्छा व्यवहार—वह बाहर की खबरें सुना जाता, कभी-कभी अख़बार भी चुराकर ला देता, अम्बिका से उसने दोस्ती भी गाँठ ली थी ! किन्तु उस दिन कैसी राक्षसी वृत्ति दिखलाई उसने ! एक व्यक्ति—दो व्यक्तित्व !

इस बात का अनुभव तो पीछे हुआ कि जेल-जीवन सचमुच व्यक्तित्व को टुकडे-टुकड़े कर डालता है। बड़े-से-बडे के व्यक्तित्व को भी !

सज़ा

जंजीरें खनक रही है, बोल रही है, स्वयं तुलकर हमें तोल रही है।

हम यहां इन ऊँची, अलघ्य, गुमसुम दीवारों के अन्दर बन्द है, किन्तु बाहर आँधियां चल रही है, कोलाहल मच रहा है। एक ओर से जुलूस निकल रहे है, नारे लग रहे है, दूसरी ओर से लाठिया चल रही हैं, कोडे फटकारे जा रहे है।

हमने जिसका श्रीगणेश किया था, उसकी इति यों ही नहीं हो सकती थी। इसे शुरू किया था कुछ नौजवानों ने, अब बुजुर्ग कधे उस भार को शानदार ढंग से ढो रहे है!

अम्बिका की गिरफ्तारी के बाद जब मैं जुलूस बनाकर आगे बढा, रास्ते मे एक टमटम पर बदहवास-सा आकर बारी साहब ने मुझे गले लगाया।

सदाकत आश्रम मे किसीने खबर की थी। बारी साहब वहां से दौड़े। उन दिनों काग्रेस के पास मोटरें कहां थी? एक टमटम करके भागे-भागे पहुंचे थे।

आज बारी साहब हममे नही है, किन्तु क्या बिहार अपने इस सपूत को कभी भूल सकेगा ? प्रोफेसर अब्दुल बारी वैसे मुसलमान थे, जिनका राष्ट्रप्रेम उनके धर्म के भी ऊपर होता है। पठानी खून था उनमे—पाच हाथ के लम्बे तगडे—जहाँ खडे होते, सबसे ऊचा उनका सर होता। शाहाबाद के रहने वाले—शेरशाह और कुँअरसिंह की बहादुरी के प्रतीक। काग्रेस के कट्टर समर्थक, साथ ही बिहार मे समाजवादी विचारो के जन्मदाता। उनके ऐसा मजदूर-नेता भी बिहार ने पैदा नही किया। प्रान्तीय कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से जमींदारी उठाने का प्रस्ताव उन्होने ही प्रथम बार रखा था।

बारी साहब ने मुझे गले लगाया, साथ ही आश्वासन दिया, जाओ, हम इस आग को जलाये रखेंगे !

हाँ, आग जल रही है, धू-धू जल रही है ! राजेन्द्र बाबू भी दौरे से लौट पड़े है, दादा कृपलानी तो यही थे ही। प्रति-दिन जुलूस निकल रहे हैं, गिरफ्तारियाँ हो रही हैं। इस जेल की आबादी भी बढती जा रही है।

पटना लौटकर राजेन्द्र बाबू हम लोगो से मिलने जेल-गेट पर पधारे, उनके साथ आचार्य कृपलानी भी थे। हम लोगो ने अपने को धन्य समझा। दादा के चेहरे पर एक व्यंग्य था—कहो, एक चुटकी नमक क्या कमाल कर रही है !

अभी उस दिन एक विचित्र दृश्य हो गया। स्टेशन से जुलूस निकला। लेजिस्लेटिव एसेम्बली के अध्यक्ष श्री विट्ठल भाई पटेल पधारे थे। लोगो के उत्साह का क्या कहना ? वे

जेल से सटी सडक के किनारे के पेडो पर चढ गये और वहां से नारे देने लगे। उनके नारो की ध्वनि मे जेल के राजवदियों ने ध्वनि मिलाई। थोड़ी देर तक लगा, वेस्टाइल की घटना दुहरकर रहेगी !

किन्तु कहा फ्रांस की खूनी क्रान्ति, कहा हमारी अहिंसक क्रान्ति !

लेकिन हमारा अहिंसक खून भी उस दिन खौल उठा; जिस दिन हमने सुना, एक अगरेज पुलिस-अफसर ने वारी साहव पर कोडो का प्रहार किया है।

उस का नाम था चरचर ! वडा ही शैतान अफसर। एक दिन जब स्वयसेवकों के जत्थे निकल रहे थे, वह अपना घोडा फँदाता बारी साहव के निकट आया और तडातड़ कोड़ा चलाने लगा, यह कोडा गवर्नर के नाम पर, यह कोड़ा कलक्टर के नाम पर और लो यह कोड़ा मेरे हिस्से का ! लोग हाहाकार कर उठे ! बारी साहव मे इतनी ताकत थी कि उसे घोडे पर से खींचकर दो घूँसे मे ही जमीन पर सुला देते। किन्तु वह मुस्कराते खडे रहे।

इस घटना ने तो आग में घी का काम किया। जो हसन इमाम साहब १६२१ के आन्दोलन मे अलग रहे, वह भी इसमे आ कूदे, यद्यपि उनका स्वास्थ्य वहुत खराब था और अधिक वह कर नही सकते थे। हा, उनकी पत्नी और बेटी ने इस आन्दोलन की वड़ी सहायता की।

अब प्रतिदिन कुछ लोग सध्या को सड़क के किनारे के

पेडो पर चढते और नारे लगाते, जवाब मे जेल भी नारों से गूँजता। नारो का यह आदान-प्रदान अधिकारी बर्दाश्त नही कर सकते थे। सडक पर पुलिस का पहरा पड़ने लगा, भीतर जल्द-जल्द हमे हटाने की कोशिश हुई।

जेल मे ही अदालत बैठी। अदालत क्या, मखौल—सामने मजिस्ट्रेट बैठे। एक बगल हम खड़े किये गये। कोर्ट-इन्सपेक्टर ने मुकदमा रखा, पुलिस को लोगों ने गवाहियाँ दी, हमने अपराध स्वीकार किया, मजिस्ट्रेट ने सजा सुनाई, उन्हे धन्य-वाद देकर हम अपने बैरक में लौटे।

हमे छ: छ महीने की सजा हुई—सख्त कैद की!

किन्तु दो-तीन दिनो से एक आशका जो मन मे उठ रही थी, वह सत्य सिद्ध हुई। मेरे साथ जो नौजवान विद्यार्थी आया था, उसके बहुत से मुलाकाती इधर आ रहे थे और वह प्राय. जेल-गेट पर बुलाया जाता। जब-जब गेट से आता, वह उदास दीखता। पूछने पर अनमना उत्तर देता। आज जब वह अपने मुकदमों के सिलसिले में गेट पर गया, (हमारे मुकदमे अलग-अलग हुए थे) तो लौटा नही। पता चला, वह माफी माँगकर छूट गया है!

अचरज हुआ, यह बहादुर नौजवान इतना जल्द कैसे टूट गया? किन्तु अधिक आश्चर्य की कौन-सी बात है? कुछ दिनों मे ही देख रहा हूँ, हम लोगो की कई कमजोरियां उभड़कर ऊपर आ रही है।

जेल एक अजीब भट्टी है, इसमे तपकर सोना कुन्दन बन

जाता है, टलहा इसकी आंच से ही पिघलने लगता है और थोड़ी देर मे ही फदक-फदककर राख वन जाता है !

जंजीरे खनकती है, बोलती है, स्वय तुलकर लोगो को तोलती है। अब हमारी तोल हो रही है। उस नौजवान का खोखलापन तो सिद्ध हो चुका, क्या हमारी वजन वही है जिसका दावा हम कर रहे थे ? किन्तु हम इस पहलू पर नही सोचे, इसी मे कल्याण है।

अभी तक हम लोग अपने कपडे पहन रहे थे, सजा के बाद हमे जेल के कपडे मिले। काली धारी के मोटिये का कुर्त्ता—पूरी बॉह का, क्योकि हम वी० डिवीजन मे रखे गये थे। सी० क्लास की अपेक्षा यह काली धारी पतली, एक जॉघिया, एक सुथना—उसी काली धारी के मोटिये के। सुथना पहनने के हम आदी नही थे, इसलिए जॉघिया ही पहने रहते। जव हम लोगो ने यह सरकारी पोशाक पहनी, एक-दूसरे की सूरत देखकर हँसते-हँसते लोटपोट हो गये।

सबसे बुरी गत स्वामी जी की हुई। बेचारे किशोरावस्था से ही सन्यासी, कभी ऐसी पोशाक पहनी नही। उन्होने बडे शौक से पहन लिया, किन्तु हमे बहुत बुरा लगा। कम से कम संन्यासी के लिए तो रियायत करनी ही चाहिये—खासकर स्वामी जी ऐसे पद-प्रतिष्ठा के सन्यासी के लिए। किन्तु अधी नौकरशाही के लिए तो सब धान बाइस पसेरी। हममे से कुछ ने विरोध प्रकट करना चाहा, तो स्वामी जी ने रोक दिया।

हममे से सिर्फ अम्बिका को ए० डिवीजन मिला था।

बाकी सबको बी० डिवीजन। बी० डिवीजन मिलने पर खाने में थोडा सुधार हुआ, अच्छा चावल, अच्छी दाल, कहने को हलवा और दूध भी। किन्तु सब पर जेल की मुहर! अच्छा चावल आया, तो भात गीला हो गया। हलवा कच्चा। गनीमत दूध—सो एक पाव में क्या हो?

जब से जेल में आया, हजामत नही बनाई थी। कहा गया, जेल मे छुरे का प्रवेश निषेध है। कही कोई अपना गला ही काट ले तो? बस कैंची से जहां तक सम्भव हो, बाल मुडवा लीजिए। मैने सोचा, चलो एक झंझट ही दूर हुई—बाल बढने दो। १६२१ मे जब देशबन्धु चित्तरजनदास जेल से निकले थे, उनकी शानदार दाढी वाली तस्वीर निकली थी। मेरी तस्वीर भी कही निकल ही जायगी, नही तो पास मे तो रहेगी।

यह खैरियत की बात है कि आदमी अपनी सूरत नहीं देख पाता। मै इसे विधाता का वरदान मानता हूं। क्योकि यदि आदमी अपनी सूरत हर समय देख पाये, तो कभी-कभी ऐसी स्थिति आती है कि अपनी सूरत देखकर उसकी छाती फट जाय।

जेल में आईना रखने की भी मुमानियत थी। शीशे को चूर कर कच्चे धागे के सहारे लोहे के छड़ को काट दिया जा सकता है और निकल भागा जा सकता है। इसलिए हम अपना चेहरा देखने से भी वचित कर दिये गये थे। कभी-कभी जेल के दीवारो पर अपनी छाया भर देख ली, बस।

किन्तु यह क्या ? एक दिन शौच के लिए पाखाने मे गया, तो पेशाब के भरे बर्तन मे अचानक अपने चेहरे का प्रतिबिम्ब देखकर चौक उठा ! प्रतिबिम्ब बिल्कुल साफ था—भद्दे बाल, भद्दी दाढी, भद्दी मूछे। अरे, यही मै हूँ। मै अपनी हँसी नही रोक सका, हँसता, दौड़ता खटाल मे आया और अम्बिका से अपने आविष्कार की चर्चा की। जिन्दादिल वह, मेरे आविष्कार से लाभ उठाने वह पाखाने की ओर दौडा !

जब उन दिनो की छोटी-छोटी बाते याद आती हैं, आज भी हँसी नही रुकती। कैसे थे वे दिन और कैसी मस्ती भरी थी हमारी तबियत मे।

बी० डिवीजन मिलने पर सेफ्टी-रेज़र मिला किन्तु, सोचा, अब यह रहे।

और इसी पोशाक और इसी चेहरे मे हमे एक दिन हज़ारी-बाग जेल के लिए रवाना कर दिया गया।

सन्ध्या हो चुकी थी। हम लोग खा-पीकर कुछ इधर-उधर की बाते कर रहे थे। कुछ विचारात्मक, कुछ संस्मरणात्मक। जेल मे पुरानी बाते बार-बार सामने आती हैं। जो विचार कभी बिजली की तरह कौंधकर दिमाग मे लीन हो गये, वे नया विस्तार लेकर उपस्थित होते है। जो घटनाएं कभी तुच्छ लगी थी, वे विशाल रूप मे नये अर्थ लेकर पधारती हैं। ये बाते ही वहां आदमी को जिन्दा रखती है, हां, इनके चलते उलझने भी कम नही पैदा होती।

आदमी मुख्यतः सोचने-विचारने वाला प्राणी है, इस कथन

की सार्थकता जेल मे ही मालूम पड़ती है ।

हम लोग बातो में मशगूल थे कि एक नायब-जेलर ने आकर कहा, आप लोग गेट पर चलिये । गेट पर क्या है ? चलिये भी तो ? और गेट पर देखा, एक दारोगा कुछ सिपाहियो के साथ खड़ा है । हम लोगों का ट्रान्स्फर हो रहा है, जेलर ने मुस्कराकर कहा । इस मुस्कराहट में उसकी हार्दिक प्रसन्नता छिपी थी, क्योंकि हमारे ऐसे राजबंदी जेलरो के लिए सदा सिरदर्द सिद्ध होते हैं !

किन्तु यह बेचारा क्या जानता था कि मुडे सिर पर ओले गिरने ही वाले है । हमारे ट्रान्स्फर के बाद ही इस जेल से एक राजबन्दी भाग गये और बेचारे को जिन्दगी भर नायबी की चक्की चलानी पडी ।

वह राजबंदी थे बसावन, जो उन दिनों क्रान्तिकारी पार्टी मे थे । फरार थे कि इस होहल्ले मे पकडकर जेल में रख दिये गये और इसी होहल्ले में एक दिन दो साथियों की पीठ के सहारे दीवार फाँद गये । दीवार के उस पार धम्म से गिरे, तो पहरे के सिपाही ने समझा, ताड के पेड़ से फल चुआ है ।

किन्तु हमारे सामने भागने का प्रश्न कहां था ? हम तो सत्याग्रही थे; किन्तु पुलिस के निकट तो हम सभी भगोडे ही समझे जाते रहे है । दारोगा सजग—सिपाही मुस्तैद ! गनीमत कि हमारे हाथों में कडियाँ नही डाली गई । किन्तु एक बन्द गाडी मे हमें ले जाया गया और स्टेशन न ले जाकर गुमटी पर रेल के एक सुरक्षित डब्बे मे बिठलाया गया । पर पुलिस की

यह सावधानी भी व्यर्थ गई। गाडी खुलने के समय जब उस डब्बे को स्टेशन ले जाया गया, तो देखा, गंगाशरण वहां मुस्कराते हुए खड़े है। गया तक वह हम लोगो को पहुँचा आये।

और, गया स्टेशन पर भी कुछ लोग हम लोगो के स्वागत-सत्कार को तैयार खडे थे।

यह सब कैसे हो जाता था? कौन हमे इन बातो की खबर कर देता था, कौन हमारा सन्देश दूर-दूर तक पलक लगाते पहुचा देता था? भारत की आत्मा आजादी के लिए छटपटा रही थी—हम सत्याग्रहियो की सख्या थोड़ी थी, किन्तु सारा देश हमारे साथ था—प्रायः वे लोग भी जो सरकारी वर्दी मे थे।

हजारीबाग

मुंह-अँधेरे रेल के डिब्बे से निकलकर जब 'बस' पर चढे, ठंडक के मारे ठुड्डी हिलने लगी ।

जून की शुरूआत । पटना मे आग बरसती है । हजारीबाग में यह गुलाबी जाडा । पहले मजा अनुभव किया । किन्तु जब बस चली, सारा बदन हिलने-डुलने लगा । तो भी कुछ ओढने की इच्छा नही होती थी । मरुभूमि मे जल का सोता मिला है, पीते चलो, पीते चलो ।

और, ओढे भी तो क्या ? सारे कपडे तो बिस्तर मे ही बँधे है, जो जमादार साहब के कब्जे मे है । जेल से जिस पोशाक मे रवाना किए गए बदन पर वही आधी बाँह का धारीदार कुर्त्ता, आधी जाँघ का जाँघिया और वह अंगोछा, जो मुश्किल से बदन को ढक सके ।

धीरे-धीरे उजाला बढ रहा है । कुछ जगली पेड, फिर जंगल और अब वह पहाड । किसी पहाड़ के रास्ते से गुज़रने का पहला मौका—उत्तरी बिहार मे पहाड कहाँ, बस दूर से

हिमालय की झाँकी भर ! पतली-सी सडक से बस भागी जा जा रही, एक ओर चट्टानो का पुज—दूसरी ओर खड्ड-ही-खड्ड। जब-जब मोड आती, रोये खड़े हो जाते। जरा भी गफलत या गडबड हुई, तो इस खड्ड मे कही हमारी हड्डिया ढूढे भी मिल सकेगी ?

किन्तु भय क्षणिक था, आनन्द स्थायी ! यह ठडी हवा, यह खुशनुमा दृश्य ! हाँ, हाँ, जिन्दगी हो या जमीन—ऊबड-खाबड ही अच्छी !

बस भागी जा रही है, हमारी आँखे पल-पल बदलनेवाले दृश्य मे लीन है और मस्तिष्क मे तरह-तरह के विचार आ-जा रहे हैं, हृदय मे तरह-तरह की भावनाए उठ रही है, मिट रही है। कभी दुर्बलताए घेरती है, घर का क्या होगा ? कौन उन्हे देखेगा—जब मै चला जा रहा हूँ, भोर-भोर हो सकता है, रानी आँसू बहा रही हो !

नही-नही—अरे, हम कितना बडा काम करने जा रहे है। देश की आजादी के लिए लडना—जीवन की सार्थकता इससे बडी क्या हो होगी ? यदि देश के लिए बलि भी चढ जाऊं, तो क्या यह कम सौभाग्य की बात होगी ?

इन हार्दिक उथलपुथलो मे, मस्तिष्क के उहापोहों मे जब-तब आखे झिप जाती।

कि एक धचके के साथ गाडी रुकी और लीजिए, यह सामने हजारीबाग सेन्ट्रल जेल खडा है।

जजीरे फौलाद की होती है, दीवारे पत्थर की। किन्तु

पटना जेल में जो दीवारें देखी थी, उनकी दीवारे भले ही पत्थर-सी लगी हो, थी ईंट की ही।

पत्थर की दीवारे तो सामने है—चट्टानो के ढोको से बनी ये दीवारे। ऊपर-नीचे, अगल-बगल, जहाँ देखिए, पत्थर-ही-पत्थर। पत्थर—काले पत्थर, कठोर पत्थर, भयानक पत्थर, बदसूरत पत्थर।

किन्तु अच्छा हुआ कि भोर की सुनहली धूप मे हजारीबाग सेन्ट्रल जेल की इन दीवारों का दर्शन किया। इन काली, कठोर, अलंघ्य, गुमसुम दीवारों की विभीषिका को सूर्य की रगीन किरणों ने कुछ कम कर दिया था। सन्तरियो की किरचे भी सुनहली हो रही थी। हा, अच्छा हुआ, क्योकि बाद के पन्द्रह वर्षो मे न जाने कितनी बार इन दीवारो के नीचे खडा होना पड़ेगा।

किसीने कहा है, सब औरते एक-सी। यह सच हो या झूठ, किन्तु मै कह चुका हूं, सब जेल एक-से होते है। सब की दीवारें एक-सी होती है, सबके फाटक एक-से दुहरे होते है, सब मे एक ही ढग के बडे-चौडे ताले लटकते होते है, सबकी चाबियो के गुच्छे भी एक-से झनझनाते हैं और सबके वार्डर, जमादार, जेलर, सुपरिन्टेन्डेन्ट जैसे एक ही साचे के ढले होते है—मनहूस, मुहर्रमी। जैसे सबने हसने से कसम खा ली हो।

किन्तु हजारीबाग का जेल अपनी कुछ विशेषता भी रखता है। सव जेल बनाए जाते है अपराधियो को ध्यान मे रखकर,

हजारीबाग सेन्ट्रल जेल की रचना ही हुई थी देशभक्तो पर नजर रखकर।

१९१४-१८ का विश्व-युद्ध। पंजाब और बगाल की क्रान्तिकारी पार्टियों ने इस अवसर से लाभ उठाकर गदर करने की चेष्टा की। लाहौर से कलकत्ता तक उन्होने जाल बिछाया था। बहुत-से क्रान्तिकारी अस्त्र-शस्त्र के लिए बाहर भेजे गए थे, बहुत-से विदेशो से इसी काम के लिए लौटे थे। किन्तु, भडा फूट गया, धरपकड का दौर चला, गोलियाँ चली, बम फूटे। कितने मारे गए। जो पकडे गए उनपर विद्रोह के मुकदमे चले। कितनों को फाँसी हुई। जिन्हे सजाये हुई, उन्हे कहाँ रखा जाय, यह प्रश्न उठा। कालापानी खतरे से खाली न था—'एडमन' नामक पनडुब्बी जहाज ने वंगोपसागर को चंचल कर रखा था।

सुरक्षित स्थान यह हजारीबाग समझा गया। छोटा नागपुर की पहाडी पर घनघोर जगल मे बसा यह स्थान। किसी भी रेलवे स्टेशन से पचास-साठ मील की दूरी पर। फिर आदिवासियो की आबादी मे अपना रूप कोई छिपा सकेगा कैसे! बस उन्हे ला-ला कर यहाँ रखा गया।

जेल के फाटक पर जेल-प्रवेश की रस्मे पूरी की गई। सामानो की सर्च, व्यक्तिगत सर्च। खैरियत समझिए कि हमे नगा नही किया गया, क्योकि हम अपर डिवीजन के कैदी थे न?

भीतर बहुत बड़ा घेरा—एक ओर अस्पताल, एक ओर

छोकरा किता, जिसकी बग़ल मे ही रंडी-किता। रंडी-किता—इस नाम से हसिए मत, घबराइये मत। हर औरत जो किसी जुर्म में जेल भेजी गई, जेलवालो की नजरो मे रँडी है। छोकरा-किता और अस्पताल के बीच मे राजबदियों के लिए सेल—हां सेल ही सेल। सेलों की दो किस्मे—बाबू सेल और पजाबी सेल। पंजाबी सेल बहुत ही बुरे, बंगाली बाबुओं के लिए कुछ आराम पर ध्यान दिया गया था।

बाबू सेल मे छः वार्ड हैं। हर वार्ड में २८ सेल हैं, २६ साधारण सेल, २ चक्की-सेल। २६ साधारण सेलों के सामने लम्बा बरामदा है। जो भलेमानस का व्यवहार करे यानी जेल के सारे नियमो को चू-चरा किए बगैर माने, वे सेल मे सोये, बरामदे पर चडालचौकडी इकट्ठी करे, सामने के आंगन मे घूमे-फिरे। किन्तु जिनका दिमाग फिरा है, जो हर जगह लड़ाई-झगड़े ही पसद करते है, वे इन चक्की-सेलों में रख दिए गए। वही मौज से चक्की चलाया करे—उसी मे खाना, उसी मे सोना, उसी में चक्की चलाना। फैक्टरी और क्वार्टर साथ-साथ।

और बदमाशी की मात्रा अधिक बढी, तो फिर पजाबी सेल मे। पजाबी सेल के तीन वार्ड है—उनका हर सेल बाबू वार्ड के चक्की सेल की तरह का बाहर से बिल्कुल बन्द। 'भूत-पिशाच निकट नही आवे, जब पजाबी सेल पठावे।' यह वर्क-बतीसा की एक चौथाई है, जिसकी चर्चा अभी आने वाली है।

इन्ही सेलों में पजाबी कैदियो को रखा गया था, जो मुख्यत: गदर पार्टी के लोग थे।

एक दिन अचानक एक मोटा पोथा हाथ लग गया था, एक कैदी ने लाकर दिया—कुछ बीड़ियों के लोभ में। वह गदर पार्टी के सदस्यो पर चलाए गए मुकद्दमो की मिसिल थी। पढकर रोगटे खडे हो गए—चार आदमियों को फाँसी हुई थी, कितने को कालापानी, लम्बी सजा वालो की लम्बी सूची। यह पोथा इस क़ैदी को कैसे मिला? पूछताछ से पता चला, इस प्रकार सबको बन्द रखे और सुरक्षा के प्रबंध किये जाने पर भी पजाबी कैदियो ने इस जेल से निकल भागने की चेष्टा की थी। कुछ भाग गये, कुछ गोलियो के शिकार हुए, कुछ लड़ते-लड़ते मरे! पलायन की उनकी यह चेष्टा कितनी रोमांचकारी थी, इसका पूरा पता १९४० मे चला, जब इस पलायन के फरार बाबा सुच्चासिंह से इसी जेल मे भेट हुई! वह कथा अभी स्थागित ही रहे।

हम भलेमानस थे, अत हमे बाबू-वार्ड मे ही रखा गया। वार्ड नं० २ मे मुझे रखा गया।

यहा आने पर पता चला, अपर डिवीजन के कैदी के क्या मानी? बेचारे जतीनदास ने ६० दिनों का उपवास करके अपने प्राण दे दिए, वह तो स्वर्ग सिधारे, किन्तु हमारे लिए इस पृथ्वी पर ही, जेल मे ही, स्वर्ग-सुख का दरवाजा खोल दिया। खाट है, गद्दा है, तकिया है, चादरे है, गुलगुल कम्बल हैं। किताबो के लिए सेल्फ है। सुगन्धित तेल, गौदरेज नं० १ के

साबुन, टेक का ब्रश, बगाल केमिकल का खुशबूदार मजन। फिर यह भोजन—भोर में गरमागरम हलुआ और गरम-गरम दूध या टोस्ट, मक्खन, अडे। दिन मे बासमती का चावल, मूंग की दाल, सब्जिया, पापड़, तिलौड़ी, अचार, शाम मे घी से चुपडी चपातियाँ, गोश्त !

किन्तु वह जमादार उस दिन कहने लगा, बाबू, ये सब मौज क्या है ? इन्ही वार्डों में जब बंगाली बाबू लोग रहते थे, पानी की नाली में घी बहता था। न जाने कैसे ख़ब्ती थे वे लोग, नाली मे घी बहाकर वे क्या पाते थे ?

जब तक हम लोग हज़ारीबाग पहुंचे—अन्य जिले से राजवन्दियो का आना शुरू हो गया था। पता चला, बिहार और उडीसा के अपर डिवीजन के राजबन्दी यही रखे जायेगे—उन दिनो उडीसा भी बिहार मे ही था। सर्वश्री गोपबन्धु चौधरी, नीलकठ दास, नवकृष्ण चौधरी, हरेकृष्ण महताब आदि से हमारा सामीप्य यही स्थापित हुआ था !

वार्ड न० २ में रहने से एक सहूलियत अनायास मिल गई। इसी वार्ड मे फैक्टरी थी, जहां बुनाई आदि के काम होते। जिन्हे सख्त सजा मिली थी, वे इस फैक्टरी मे काम करने आते। सादी कैद वाले राजबदियो ने भी काम करने में नाम लिखा लिया था। काम तो नाम का होता। सब लोगों से मिलने की सुविधा मिल जाती थी। मुफ्त मे हर महीने चार दिनो की छुट्टी भी।

गांधी जी के जादू ने कैसे-कैसे लोगो को अभिभूत किया है, इसका पता यही आने पर लगा। प्रान्त के जो माने-

जाने नेता थे, वे तो आये ही है, ऐसे लोगो की—वकील, डाक्टर, प्रोफेसर, विद्यार्थी—भरमार है, जो राजनीति से अपने को अछूते रखते थे। तरह-तरह के चेहरे, तरह-तरह के स्वभाव। किसी को किसी की धुन . किसी को किसी की लगन। "नाना बाहन नाना वेषा : विहँसे सिव समाज निज देखा।" क्या गाँधी जी यहा होते, अपने समाज को देखकर ठट्ठा मारकर नही हस पड़ते !

लेकिन गाँधी जी तो अभी तक अपनी डडी-यात्रा पर ही है। हमे अखबार के नाम पर 'स्टेट्समैन' का सिर्फ 'ओवरसीज एडिशन' दिया जाता है, किंतु क्या एक भी खबर हम तक पहुँचने से रहती है ? साबरमती आश्रम से चलते समय उन्होने जो घोषणा की—"या तो मै स्वराज्य लेकर यहां लौटूंगा, या मेरी लाश समुद्र मे तैरती नजर आएगी"—हम लोगो के कानो मे वह दिनरात गूँजा करती है। और गूँजा करती है, गोलियो की आवाजे भी, जो देश के कोने-कोने से आया करती है। बिहार मे ही आधे दर्जन स्थानो पर गोलियाँ चल चुकी है। लाठी-चार्ज और गिरफ्तारियो की क्या बात ? धीरे-धीरे छ बाबू-वार्ड और पूरा छोकरा-किता हम लोगो से भर चुका है। अब हम लोगो मे से कुछ को पजाबी सेलों मे भी रखा जाने लगा है, हा, उन्हे घूमने-फिरने की पूरी स्वतन्त्रता दी गई है !

यों तो अब यहा सत्याग्रही राजबदियो की ही भरमार है, किन्तु मेरे वार्ड मे तीन राजबन्दी मौलनिया डकैती केस के है।

तीनों नौजवान है। इनके नेता जोगेन्द्र शुक्ल थे, जो अब तक फ़रार हैं। वार्ड नं० १ में देवघर षड्यंत्र केस के राजबंदी हैं। एक दिन खुफिया पुलिस ने वैद्यनाथधाम के एक घर पर छापा मारा। वहा एक कापी मिली, जिसमें संख्या ही संख्या लिखी थी। उन संख्याओं से क्रांतिकारियों के नाम और पते निकाले गये और लाहौर से चटगांव तक गिरफ्तारियां हुईं। फिर मुकद्दमा चला, लगभग एक दर्जन नौजवानों को सजा मिली। वे सब यही रखे गए है।

बड़ा आनन्द आ रहा है—नये-नये लोगों से परिचय, दिन भर हाहा-हूहू। जो लोग आते है, बाहर से सनसनी-भरे समाचार लाते है। हां, हां, हमारा देश आज़ाद होगा—होकर रहेगा!

हमारे अट्टहास मे जंजीरों की बोली गुम हो गई है और दीवारे उनकी प्रतिध्वनि से गूंजने लगी है!

बर्क

किन्तु डेनमार्क के राज्य मे सब कुछ सपाट ढंग से नही जा रहा है, यह दिन-दिन प्रगट होने लगा !

यह जो गाँधी जी के नाम पर शिव का समाज जुटा था, क्या उसे देखकर गाँधी जी को आनन्द ही आता—क्या उनकी हसी कुछ ही दिनो मे रुदन मे नही बदल जाती ?

समाज जुटाना एक बात है, किन्तु समाज को बाँध कर रखना दूसरी बात । फिर समाज मे पवित्रता-ही-पवित्रता बनाये रखना तो तीसरी ही अनोखी वात है ।

साबरमती आश्रम की कितनी ही दुखद कहानियाँ कानो मे पडी थी—कई बार गाँधी जी को उपवास तक करना पडा था !

जिन कमजोरियो के बीज पटना जेल मे देखे, पाया, वे अब यहाँ अकुर ले रहे । आज की राजनीति मे जो अवाछनीय चीजे दिखाई पडती है, उनकी नीव जेलों मे ही पड़ी थी । जेल के सुगम रास्ते से हमने आज़ादी तो ले ली है, किन्तु वहाँ

जो बीमारियाँ फूटी, उनकी छूत से हम अपनी संतानों को भी नही बचा सके। कुछ शारीरिक बीमारिया सतानो मे पैतृक देन के रूप मे नही मिलती । शारीरिक बीमारियाँ तो खून तक ही सीमित रहती है, किन्तु मानसिक बीमारिया तो मज्जा तक जा पहुँचती है।

कुछ ही दिन तो आये हुए, किन्तु अजीब बाते दीख पडने लगी है। पाकदामन स्वामी जी ने अपने सेल मे ही अपने को समेट लिया है, कछुए की तरह। गीता पढते है, चरखा चलाते है। अपना भोजन भी आप बना लेते है। अम्बिका पद्मपत्रमिवाम्भसा बना हुआ खाता है, खेलता है, ठट्ठा मार कर हसता है। मेरी विचित्र स्थिति है—बाहर हँसना, भीतर रोना।

यहा की इस स्थिति को और भी उलझनपूर्ण बना दिया है यहां के जेल-सुपरिन्टेडेन्ट ने।

कही आदमी इतना कुरूप होता है—इस अँगरेज गोरे को देखकर पहली बार ही मेरे मन मे यह प्रश्न उठा।

उसके शरीर का वह विचित्र ढाँचा। लगता किसी बदमाश लडके ने कसम खाकर मोम की एक ऐसी मूर्ति बनाई हो कि कही, किसी अग से भी सौन्दर्य की झलक नही दिखाई पडे। लंगडा, झुककर, गुरिल्ले की तरह उचक-उचककर चलता। चेहरे पर मानो किसी दूसरे बदमाश बच्चे ने लाल रोशनाई की दावात फेंककर फोड़ डाली हो! छोटी-छोटी गोलमोल आँखे, जिनकी नीली पुतलियो से शैतान झांकता!

बाये हाथ पर गोदने से साँप की तस्वीर बनवा रखी थी उसने, यह तस्वीर क्या उसकी मानसिक वृत्ति को सूचित नही करती ?

हेल्थ पास कराने को जब मै उसके सामने गया, मेरे ही साथ उसने अजब व्यवहार किया। कैदियो की 'हिस्ट्री-टिकट' पर एक खाना होता है कि यह पहली बार जेल आया है या पुराना मुजरिम है। उस खाने को भरने के पहले मुझ से कुछ पूछा, जो उसके अटपटे उच्चारण के कारण मै समझ नही सका। जेलर ने जवाब दिया, उसने वह खाना भर दिया। पीछे पता चला, वह मुझ से पूछ रहा था, कितनी बार चोरी की है ?

किन्तु उसके लिए यह कोई बडी बात नही थी। अभी कुछ दिन पहले उसने एक राजबन्दी के साथ जो व्यवहार किया था, वह किस्सा लोगो ने कह सुनाया।

दानापुर से कुछ राजबंदी आए थे। उनमे से एक नौजवान ने अपना नाम मजिस्ट्रेट के सामने 'कामरेड' बताया था। उन दिनो ऐसा होता था, विनोदी लडके अपना नाम बन्दर बताने से भी नही चूकते थे। मजिस्ट्रेट इन बातो पर ध्यान नही देते थे, जो कहा लिख दिया और सजा दे दी। कामरेड के साथ यही हुआ। किन्तु दानापुर के वह कामरेड जब हजारीबाग के इस किरूप किमाकार गोरे के सामने पेश किये गये, तो एक काड ही मच गया। बर्क कहता,—यह नाम नही हो सकता, बताओ असली नाम। कामरेड कहते,—जो

है, सो बता दिया। बर्क गरजा : कामरेड तन गये। बर्क ने जमादार से कहा—जवान को सीधा करो।

इसके बाद बर्क की वह प्रक्रिया शुरू हुई जिसकी कल्पना से ही कैदी काँप उठते। दो सिपाहियों ने कामरेड के हाथ पकड़ लिए और दो ने पीछे से पैर पकड़े। बर्क चार डग पीछे हटता फिर बडे वेग से बढ़कर अपनी बँधी हुई वज्र-मुष्टिका से कामरेड के होठ पर, जबडे पर, छाती पर, पेट पर प्रहार करता। हाँ, प्रहार के लिए इन्हीं मर्मस्थानों को वह चुनता था। थोडी देर में ही कामरेड का चेहरा लहूलुहान—मुँह से लोंदे-के लोंदे खून भी गिरने लगा। जब कामरेड बिल्कुल बेहोश हो गये, तभी बर्क ने छोड़ा।

यह भी सुना, बर्क ने अपने बेटे की जीभ काट डाली थी, क्योंकि वह बच्चा तुतलाता था और यह उसकी जीभ का आपरेशन कर उसकी तुतलाहट दूर करना चाहता था। तुतलाहट कहाँ तक दूर होती, वह बच्चा अपने इस क्रूर बाप को सदा के लिए सलाम करके चल बसा।

ज्यों-ज्यों राजबंदियों की सख्या बढ़ने लगी, बर्क की झझटे भी बढती गईं। एक दिन उसकी छोटानागपुर के शेर बाबू रामनारायण सिंह से ठन गई।

बाबू वार्ड की जगहे भर गई थी, अतः रामनारायण-सिह जी को पजाबी सेल में जगह दी गई थी। सेल के आगे के पेड के चबूतरे पर बैठकर वह कुछ लिख-पढ़ रहे थे कि बर्क वहाँ जा पहुँचा।

वह पढ़ने-लिखने मे तल्लीन थे कि आवाज़ हुई—उठो, पैर मिलाओ, हाथ उठाओ। इसी रूप मे साधारण कैदी अफसरो के सामने खड़े किये जाते थे। शिष्टतावश रामनारायण बाबू उठते ही, किन्तु इस हुक्म में उन्होने अपमान देखा। फिर क्या था, सिपाहियो द्वारा वह उन्हे खड़ा करवाने और हाथ उठवाने लगा और जब उन्होंने विरोध प्रकट किया, तो उनके सारे कपड़े उतार, बोरियो के जाँघिये और कुर्त्ते पहना कर, हाथों मे खडी हथकडी डाल कर उन्हे सेल मे टँगवा दिया और हुक्म दे गया, इसे 'पेनल डायट' दो—यानी वह लपसी जो जबान से नीचे नही उतरे और उतरे तो पेट में जाकर कुहराम मचाये।

हाँ, जजीरे यहाँ भी बोल रही है और स्वय तुलकर हमें तोल रही है।

जब यह खबर फैली, हममे से अधिकांश का खून खौलने लगा, किन्तु आश्चर्य, हममे से ऐसे लोग भी निकल आये, जो उसका समर्थन करने लगे। और समर्थन करने लगे गाँधी जी के नाम पर—हमे जेल के सारे नियम मानने चाहिये। कैसा तमाशा, जेल के अधिकारियो ने गाँधी जी द्वारा बताये जेल के नियम-पालन के आदेशों को लिखवा कर जगह-जगह टँगवा दिया।

हम लोग गद्दे पर सोये, हलवा खाये और हमारे एक बुजुर्ग नेता हथकडियो मे लटके रहे, लपसी चाटते रहे। किन्तु गाँधी जी का आदेश है, हमे चुप ही रहना चाहिए!

एक और विशेष बात हुई। मजिस्ट्रेटों ने तो जिन्हे उचित समझा, अपर डिवीजन में रख दिया। किन्तु, सरकार छानबीन कराने लगी और बहुत-से लोगो को फिर अपर डिवीजन से सी० क्लास मे रखने लगी। 'क्षीणे पुण्ये मृत्युलोके विशन्ति' का सिलसिला शुरू हुआ। अजब दृश्य—एक ओर नये-नये लोग आ रहे हैं, दूसरी ओर यहाँ से झुंड-के-झुंड लोग दूसरे जेलो में भेजे जा रहे हैं। जब वे जाने लगते, हृदय मे अजीव तूफान उठता—

क्या जतीनदास ने अपने को इसीलिए बलिदान किया था? क्या लाहौर के बंदियों की माग का यही अर्थ था? सरकार द्वारा जिन शर्तों को स्वीकार किये जाने पर भगतसिह आदि ने अनशन तोड़ा, क्या उसकी मन्शा यही थी? कुछ पुलिस के अफसर मनमानी जाँचकर मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये डिवीजन को तोडवा दे, प्रान्त के हजारो राजबदी सी० क्लास की तकलीफे झेले और हम कुछ लोग हलवा-माँड़ा उडाते रहे! फिर, राजबदियो मे डिवीजन का यह विभेद डालकर क्या सरकार हममे फूट नही डाल रही है?

किन्तु इन बातों का सुनने वाला कौन था?

कि, एक भाई ने यहा भी अनशन कर दिया। वह भागलपुर से आये थे। उनके साथ जो लोग आये थे, उनमें से कुछ नौजवानो का डिवीजन तोड दिया गया था। उनके अनशन से उन नौजवानो का तबादला तो रुक गया, किन्तु डिवीजन तो टूटा ही। हाँ, हम अपने भोजन से खिलाते-

पिलाते। उनमे से एक सज्जन आज कांग्रेस के बड़े पदाधिकारी हैं और उस बेचारे अनशन करने वाले का कोई पुरसांहाल नही है!

जैलर होशियार हैं, कान से कम सुनते है, किन्तु बिना सुने ही सारी बाते समझ जाते है। सरकार ने सब कुछ दे रखा है, किन्तु जिनकी आवश्यकताये इनसे पूरी नही होतीं, उनके सारे अभावों को पूरा कर देते है। बिना पास किये हुए खत पढा दिया करते है, अपने कमरे मे मुलाकात करा देते है, जिन्हे टाट का गद्दा गड़ता है, उनके लिए रूई का गद्दा बनवा देते है, कुछ लोगो के लिए खास घी-दूध का भी प्रबन्ध कर दिया गया है। बडे लोग उनसे खुश है, इतना खुश कि यदि स्वराज्य तुरन्त मिल गया होता, तो बेचारे को आई० जी० बनने मे क्या देर लगती?

यह भेदभाव भी लोगों मे असन्तोष फैला रहा है। बर्क के खिलाफ तो जबर्दस्त मोर्चा बन रहा है. यदि नेता लोग नही सुनेगे, तो कुछ हम करेगे। मैने उसी समय एक 'बर्क-बतीसा' बनाई, तुलसीदास जी की 'हनुमान-चालीसा' के तर्ज पर। उसकी वन्दना है—

गुरुपद 'लोटस'-'डस्ट' से मन 'मियर' हि सुधारि
बरनौ बर्क हि बिमल जस जो दायक फल चारि
घानी, चक्की, सेल पुनि, ऊपर से कुछ मार
ये चारो फल देत हैं चोरन के सरदार!

उसी की एक चौपाई थी—"भूत पिशाच निकट चलि

आवे, जब पजाबी सेल पठावे।" कितना आश्चर्य, इसके दस वर्षों के बाद भी १९४० मे एक पुराने जमादार ने बर्क-बतीसा सारा कंठस्थ सुनाया। हजारीबाग जेल मे यह बर्क-बतीसा कितना लोकप्रिय हुआ, इसीसे कल्पना कीजिये !

लगता है, हमारा असन्तोष अनसुना नही गया। बर्क की बदली हो गई। वहाँ से वह गया-सेन्ट्रल जेल भेजा गया। गया मे तो उत्पात की अति कर दी। किन्तु अचानक एक दिन वह अपने बंगले मे मरा हुआ पाया गया। जनश्रुति थी, किसी क्रान्तिकारी ने उसके जुल्मों की कथा सुनकर उसकी हत्या कर दी। यों कहा गया, उसने आत्महत्या कर ली है !

बर्क के साथ एक और अग्रेज अफसर की चर्चा होनी ही चाहिए। वह था मैकरे, जो बिहार के जेलो का आई० जी० था। वह एक बार भागलपुर गया। भागलपुर जेल में एक विद्यार्थी था, नाम था रामजी प्रसाद वर्मा। वह हिन्दू विश्वविद्यालय मे इजीनियरिग पढता था। बहुत ही मेधावी विद्यार्थी। उसके आइरिश प्रिसिपल उसे बहुत मानते। वह जब गिरफ्तार हुआ, उससे भेट करने प्रिसिपल साहब भागलपुर जेल तक पहुँचे।

जेल वालो से रामजी के साथ सद्व्यवहार रखने की उन्होने सिफारिश की। रामजी का अक्षर बहुत सुन्दर था, उसे दफ्तर की लिखा-पढी का काम दिया गया। उसके लिए अन्य सुविधाये भी दी गई।

किन्तु, यही उसके लिए अभिशाप सिद्ध हुआ ! जब मैकरे

जेलो का निरीक्षण करते भागलपुर पहुँचा, रामजी से उसकी मुठभेड हो गई। रामजी मेधावी ही नही था, तेजस्वी भी। मैकरे ने दस बेत की सजा उसे दी और कहा—बेत मेरे सामने ही लगाए जाए। उसने शायद सोचा, राजबन्दियो को सबक भी सिखा दिया जाए।

झट रामजी को तिकटी पर चढा दिया गया। तिकटी लकडी का वह ढाचा होता है, जिस पर कैदी को औंधे मुह बाँध-कर उसकी चूतड पर बेत लगाए जाते है। सभी राजबन्दियों को कतार मे बिठला दिया गया यह दृश्य देखने को। मैकरे भी सदलबल वहा खडा हुआ। नगे चूतड पर बेत बरसने लगे। बरसो तेल मे पोसे हुए वे बेत। सटाक्-सटाक् जहा पडते, खाल उधड़ आती। किन्तु वाह रे, रामजी! हर बेत पर महात्मा गाधी की जय, भारतमाता की जय आदि नारे लगाता ही रहा। जब दस बेत पूरे हुए, मैकरे उसके निकट गया। रामजी ने कहा—बस इतना ही! वह गुस्से मे लाल हो उठा। हुक्म दिया—दस बेत और! अब तो चूतड़ से मांस कटने लगा, किन्तु वे ही नारे और अन्त मे फिर वही—बस इतना ही! मैकरे अब होश मे नही था, दस बेत और! फिर बेत–तड़ाक, तडाक। तिकटी के नीचे मास के टुकडे कट कर गिर रहे है, रक्त की बूदे टपक रही है, रामजी का समूचा शरीर थरथर काँप रहा है, किन्तु मुँह से क्षीण स्वर मे नारे जारी है। कहते है, इस दृश्य से मैकरे इतना प्रभावित हुआ कि दो बेत और रह गये थे, तभी बेत लगाना बन्द करवा दिया और उसके

निकट जाकर करुण स्वर में बोला—मैंने ईसा की कहानी सुनी थी, आज प्रत्यक्ष देख लिया। यही नहीं, वहा से लौटकर वह अपने पद से इस्तीफा देकर इंगलैंड वापस चला गया !

वही रामजी एक दिन बिहार इंजीनियरिंग कॉलेज का प्रिंसिपल हुआ, अब हीराकुन्ड-बांध-योजना का कार्यकारी अभियंता है !

ज़िन्दगी

धीरे-धीरे बिहार-उडीसा के सभी नेता आ गए है। और जिन नेताओं का जो रूप हमने वहां देखा, वही आज तक निखरता आया है। सबसे अन्त में राजेन्द्र बाबू आये और जब वह आए, सब पर छा गए—इसमे सदेह नही।

एक प्रश्न हमे सबसे अर्न्तजलन दे रहा था—राजबदियों मे यह जो वर्गविभाजन चल रहा था! हम सब समता के नारे देते थे, एक दूसरे को भाई समझते थे। अब हममे से किसी को ए० डिवीजन, किसी को बी० डिवीजन और किसी को साधारण कैदी मे शुमार कर क्या सरकार हमारे उस साम्य-भाव और बन्धुत्व पर प्रहार नही कर रही है? और उसे स्वीकार कर क्या, हम अपने को आदर्श से नीचे नही उतार रहे है?

हमने यह प्रश्न राजेन्द्र बाबू के सम्मुख रखा। किन्तु, उन्होने भी कुछ करने से असमर्थता प्रगट की—वह अपने लोगो की दुर्बलता को अच्छी तरह समझते थे, खुलकर कहा

भी। तब हमने निश्चय किया, कम से कम हम लोग तो अपने को इससे मुक्त ही कर ले। हमने तय किया, हम अपर डिवीजनो की सहूलियत नही लेगे।

हमने पंलग, गद्दे हटा दिए; सी० क्लास का खाना ही खाते। जेल वाले हमें सी० क्लास का भोजन देने को तैयार नही थे, फलत. हम अपना भोजन उन भाइयों को दे देते जिन्हे अपर डिवीजन से नीचे कर दिया गया था और उनका साधारण कैदी का भोजन ग्रहण करते।

इससे मन मे थोडी शान्ति आई। अब निश्चित कार्यक्रम बना कर जेल-जीवन का प्रारम्भ किया।

ज्यों ही सेल का फाटक खुलता, मुह-अन्धेरे ही मैं उठ जाता। शौच आदि से निवृत्त हो स्वय पानी लाकर अपना सेल धो लेता। जमीन पर ही सोना था, अत. स्वच्छ बनाकर रखना आवश्यक था। फिर स्नान करता, साबुन नही लेता था, अत. अच्छी तरह देह मलमल कर नहाता। फिर थोड़ी कसरत करना—उन दिनो सूर्यनमस्कार और शीर्षासन आदि नियमित रूप से चलते। थोडा सुस्ता कर चना-गुड़ खा लेता और एक गिलास पानी चढ़ा लेता। तब पढना-लिखना शुरू करता। बाजाप्ता शिक्षा तो अच्छी पाई नही थी, जेल में तरह-तरह की किताबें लोगो के पास थी, उनसे लेकर पढता। लिखना तो मेरा पेशा ही ठहरा—अपनी पत्रकारिता जारी रखने के लिए 'क़ैदी' नामक एक हस्तलिखित पत्रिका निकालने लगा। वहा लेखकों और कवियो की कमी नही थी, पत्रिका बड़े ठाठ

की निकलती थी। मेरा सौभाग्य, पहले अक के लिए राजेन्द्र बाबू ने भी एक लेख लिख दिया। 'प्रजा का धन' उसका शीर्षक था—राजेन्द्र बाबू का कहना था, हम जेल मे प्रजा का ही तो धन खा रहे है, अत. उसकी भरपाई के लिए हमे कुछ काम यहा जरूर करना चाहिए।

पढने-लिखने के बाद भोजन—बस वही मोटा चावल, पतली दाल, उबली तरकारी। किन्तु आदर्शरक्षा की भावना ने उनमे कितना स्वाद भर दिया था। खा-पीकर यारों से गपशप होती, हा-हा-हू-हू मचता। हसना-हसाना मेरा काम रहा है जेलो मे तो मै हगामा ही मचा डालता। एक बार इतना शोर मचा कि जेल वालो ने समझा, कही कोई बलवा तो नही हो गया, सभी हमारे वार्ड की ओर दौडे।

सध्या मे खेल-कूद या सेवादल का परेड। मशहरी के डडो को हम लाठी की तरह इस परेड में प्रयोग करते। कबड्डी हमारा प्यारा खेल था। उडीसा के वर्तमान मुख्यमन्त्री भाई नवकृष्ण चौधरी बडे चाव से इसमे भाग लेते और अच्छे खिलाडी समझे जाते! महताब साहब को खेल मे अच्छा अनुराग था।

इस जेल-यात्रा के पहले मै अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रचार मन्त्री बनाया गया था। अत· उडीसा के भाइयो को हिन्दी पढाने का काम भी मै करता। मानभूम के बगाली भाई भी बड़े प्रेम से सीखते! उन दिनो बगला-हिन्दी के झगड़े का नाम-निशान नही था।

संध्या को प्राय: कवि-सम्मेलन या मुशायरा जुटता। मै ही इसका स्वनिर्वाचित सयोजक था। मै उन दिनों कविता भी किया करता था। गद्य मे जिस तरह मै चिनगारियाँ उगलता, पद्य मे उसी प्रकार हास्य को पुट भरता। लोग खूब हँसते। अब भी उन दिनों की अपनी कवितायें अपने मित्रों के मुँह से सुना करता हूँ। अपनी कविताओं का सग्रह मैंने कभी नही रखा। किन्तु कभी सोचता हूँ, काश, उनकी कापी मेरे पास होती। उनका साहित्यिक मूल्य नही हो, जीवन के इतिहास मे तो उनका कुछ स्थान है ही। सबसे बड़ी दिक्कत रात को होती। लालटेन भी हटा दिया था, यद्यपि राजेन्द्र बाबू तक ने उसे रखने के लिए आग्रह किया था। साँप, बिच्छू का भय दिखाया गया था। किन्तु आखिर सी० क्लास वालों की रक्षा जो भगवान करता है, वह क्या हमारे ही लिए सो जाएगा ?

कुछ देर तक गुनगुनाता रहता, कबीर, विद्यापति, तुलसी, सूर के कितने पद, जो कभी याद थे, लेकिन अब भूल गये थे, फिर स्मरण आने लगे। कबीर ने तो जैसे मोह ही लिया। बलवेडियर प्रेस से कबीर की पूरी रचनाये मँगाईं। कबीर के पद तुरन्त याद आ जाते और गाने मे एक अद्भुत तन्मयता मैं अनुभव करता। कभी-कभी कबीर के पदों मे दूसरे कवियों की कुछ पक्तियाँ भरकर मै उन्हे और भी मजेदार बना लेता। "कैसे दिन कटि है जतन बताई जइओ"—मे विद्यापति,

बिहारी आदि की विरह-सूचक पक्तिया जोड़ कर मैने एक लम्बी लडी बना ली थी।

इस लड़ी ने ही मुझसे मेरा पहला उपन्यास लिखवा लिया।

एक दिन मै गुनगुना रहा था कि एक कैदी ने उसमें एक देहाती कडी जोड़ दी। मै चकित—पीछे पता चला कि वह रेप-केस का कैदी है। उसकी प्रेम-कथा ही 'पतितो के देश में' परिणत हुई। मै चाहता था, इस सिरीज मे कुछ और उपन्यास लिखूँ—डकैतो पर, हत्यारो पर, गिरहकट्टों पर! ऐसे कैदियो से रब्त-जब्त बढाई। जेल मे आदमी थोड़ा फक्कड़ हो जाता है—अपनी पाप-कथा कहने मे झिझक कम रह जाती है। और यदि बीड़ी-सुर्ती की लालच मिल जाय, तो लीजिए न, पूरा जीवन-पुराण सुन लीजिये।

रात के एकान्त मे एक और काम करता। कहाँ तक गुनगुनाता या गाता; अपने जीवन की पिछली घटनाओं को सिलसिले बार याद करना शुरू किया। जब मै बच्चा था, मेरी माता जी मर गई थी। वह कैसी थी, उनका चेहरा-मोहरा, उनकी पोशाक, उनकी चाल, उनका व्यवहार आदि कैसे थे। यो ही एक-एक व्यक्ति और घटना की बारीक-से-बारीक यादगारी एकत्र करने लगा—मेरी शादी कैसे हुई—कहाँ-कहाँ के अगुआ आए, क्या-क्या बाते की, अपनी भावी पत्नी की मेरी कल्पना क्या थी, किस तरह सगुन पड़ा, तिलक चढ़ा, बरात चली, परिछावन हुआ और जब लावा छितराने के समय

एक अपरिचित लड़की मेरे अकवार में आई, तो मैं किन भावनाओं मे डूबा। इसी प्रकार अपने ननिहाल, ससुराल, स्कूल, गुरु आदि के सम्बन्ध मे एक-एक बात को ब्योरेबार याद करता। लगा, कहानियो का, चित्रों का एक बड़ा पोथा ही मिल गया—उस छोटे-से सेल का अँधेरा एकान्त, रोमांस और रंगीनियों से, जगमग कर उठा!

किन्तु जिस दिन बाहर चांदनी खिली होती, मैं अधीर हो उठता। चाँदनी मे सोना, टहलना, चाँद को देखना, चाँदनी मे नहलाना—मुझे सदा भाया किया है। किन्तु कितनी लाचारी—मुझसे चार गज दूर पर चाँदनी खड़ी मुस्कुरा रही है और मै लोहे के छड़ो के भीतर छटपटा रहा हूँ। एक दिन जब बहुत सबेरे नीद टूटी, देखा, पूर्णिमा की चाँदनी मेरे पैताने मे आ गई है! आह, किस तरह हड़बडाकर उठा, इच्छा हुई, उसे गोद मे समेट लूँ कि वार्डर के बूटों का चरमर सुनाई पडा—"हाय, कमबख्त को किस वक्त खुदा याद आया!"

नेताओ के निकट जाने से मैं सदा घबराता रहा हूँ; कोई आत्माभिमान के सिंहासन पर शान से बैठा हो और मैं उसके चरणों के निकट बैठकर उसका मुँह जोहूँ, उसकी हाँ-में-हाँ मिलाऊँ, जी-हजूरी करूँ—यह मुझे कभी नही पसन्द हुआ। किन्तु यहाँ उत्सुकता जगी, देखूँ तो, इनमें से कौन कैसा है? प्रायः दूर से ही देखता, दो-चार क्षणों के लिए बैठ भी जाता तो चारों ओर दृष्टि डालकर उनके आसपास की एक-एक चीज देखता—बात तो सिर्फ दो-चार; शिष्टाचार की।

समूचे हजारीबाग जेल पर राजेन्द्र बाबू का व्यक्तित्व छाया हुआ था। ए० डिवीजन मे रहकर भी बहुत ही सीधा-सादा जीवन व्यतीत करते—सीधा-सादा और नियमित। चरखा चलाना और पढना उनका मुख्य काम। चर्खा चलाते हुए ही लोगो से बाते भी करते जाते। फैक्टरी में आकर प्रति दिन कुछ घटे नियमित काम करते—नेबार बुनने का काम उन्होने वहाँ सीखा था। जेल मे प्रति दिन उठने वाली समस्याओं के हल करने मे भी उनका समय लगता। प्रान्त भर के लोगो से निकटतम सम्पर्क स्थापित करने की उनकी चेष्टा होती। अचानक एक दिन मेरे सेल मे आ गये, बाते की, घर का हलचाल पूछा—हर बात से आत्मीयता टपकती। बातें करते हुए उनका ध्यान मेरी पुस्तको पर गया। उन दिनो मै सेक्स-समस्या पर अध्ययन कर रहा था, कई पुस्तके इस सम्बन्ध की मगा भी ली थी। मै झेप गया। किन्तु साहस बटोरकर कहा—बाबू, बरट्रैंड रसेल की यह पुस्तक आपने पढी है—'मैरेज एण्ड मौरल्स' नामकी पुस्तक मैने उनके हाथ मे रख दी। बरट्रंड रसेल ऐसे लोग सैक्स पर लिखते है, यह जानकर उन्हे आश्चर्य हुआ। वह पुस्तक ले गये और फिर तो इस विषय की एक-एक पुस्तक पढ़ डाली।

जेल भर मे शाहाना ढग था बाबू दीपनारायणसिह का। उन दिनो वही बिहार-केशरी कहलाते। शेर की तरह का शानदार चेहरा-मुहरा। ऊँची गरदन, कटी-छँटी कडी-कडी मूँछे, सजधजकर रहते, रोब से बाते करते! एक दरबार जुटा

रहता उनके आसपास—कालीन बिछे है, पान है, सिगरेट है, चाय के दौर चल रहे हैं, जब जाइये, नाश्ता हाज़िर। उनके लिए प्रतिदिन बाहर से भोजन बनकर आता। उनकी श्रीमती जी ने हजारीबाग मे ही डेरा डाल दिया था—वह बंगाल के सुप्रसिद्ध विद्वान् और धनपति सर तारकदास पालित की पुत्री थी। दीप बाबू को जेल मे ज़रा भी कष्ट न हो, इसके लिए वह पानी की तरह रुपया बहाती।

सब से विचित्र शख़्शियत थी उडीसा के नीलकण्ठ दास की। वह दिन भर सोते, रात में उठकर पढ़ते। हर विषय का अपने को अधिकारी विद्वान् समझते। चेलों का एक दल उन्हे घेरे रहता। उन्हे इस बात की ईर्ष्या थी कि उनका ऐसा व्यक्तित्व अपने बीच मे पाकर भी लोग राजेन्द्र बाबू को नेता मानते है, जो उनसे कही छोटे है ! दुनिया को वह मूर्ख समझते !

उडीसा के गोपबन्धु चौधरी को देखकर ही सम्मान मे सिर झुक जाता। उनका पूरा परिवार जेल मे था—उनकी पत्नी, उनके भाई, उनका पुत्र। गोप बाबू भी नियमित चर्खा कातते और फैक्टरी मे आकर काम करते—कालीन बुनने में उन्होने अच्छी व्युत्पन्नता प्राप्त की थी। उनके भाई श्री नवकृष्ण चौधरी तो हममे बिल्कुल ही घुलमिल गये थे। उनका पुत्र मनमोहन हम सब का प्रिय पात्र था।

एक दूसरे विचित्र व्यक्ति थे—स्वामी भवानी दयाल

संन्यासी। स्वामी जी बिहार के रहने वाले थे किन्तु उनका पूरा जीवन बीता था दक्षिण अफ्रीका मे। दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह मे उन्होने सपत्नीक भाग लिया था। किन्तु उनकी धारणा थी, गाँधी जी ने वहां गलती की, उनके समझौते से भारतीयों का अहित हुआ। संन्यासी की पोशाक थी, किन्तु भोजनपान मे पूरे अपटुडेट। सदा वायसराय तथा ऊंचे अंग्रेज अधिकारियो से ही लिखापढ़ी करते। मैंने 'कैदी' निकाला, तो उन्होने 'कारागार' निकाल दिया। सदा अपने को बड़ा दिखाते, कुछ लोग उनकी मखौल भी उड़ाते।

मानभूम के निबारण बाबू को सबकी प्रतिष्ठा प्राप्त थी। वह सन्त माने जाते। उनका सारा परिवार जेल मे था। राजेन्द्र बाबू नौजवानों को उनके पास शिक्षाग्रहण के लिए प्रेरित करते थे। एक बार मुझ नास्तिक को उन्होने ईश्वर के अस्तित्व पर विश्वास करने का उपदेश दिया था।

श्री बाबू उन दिनो भी पुस्तको के अध्ययन मे ही लीन रहते। अनुग्रह बाबू राजेन्द्र बाबू की छाया समझे जाते। रामदयालु बाबू पर आध्यात्मिकता का रंग चढ रहा था। एक दिन देखा, वह गीता के शब्दो की गिनती कर रहे है।

लगभग ढाई तीन सौ राजबन्दी कटछट कर रह गये थे। एक अद्भुत मेला था। कही कुश्ती चल रही है, कही पूजा हो रही है। कही आसन लगाये जा रहे है, कुशासन बिछाये जा रहे हैं। कही गीता पढ़ी जा रही है, कही रामायण का पाठ

हो रहा है, तो कही लेनिन और मार्क्स का अध्ययन चल रहा है। विवेकानन्द और रामतीर्थ की भी काफी पुस्तकें वहां थी। तिलक का गीता रहस्य अब भी अध्ययन का एक मुख्य ग्रंथ था। गांधी जी की रचनाओ को तो पूछिये मत—हमारी बाइबिल तो वे ही थी।

त्योहार बड़े धूमधाम से मनाये जाते। कृष्णाष्टमी के दिन जगत बाबू और कुमार कालिका ने जो रास-कीर्तन किया, अब भी नही भूलता।

नैतिकता और अनैतिकता का प्रश्न धीरे-धीरे धीमा पड़ रहा था। जिसके जी मे जो आता, करता। आपस मे तू-तू-मैं-मैं करने से क्या फायदा? कोई टोस्ट-अडे से भगवान का भोग लगाता है, तो तुम बोलने वाले कौन—जब उसके भगवान भी चुप है। किसी के सेल मे कटर के कटर घी पडा है, किसी के सेल मे मक्खन और विलायती दूध के डब्बो का अम्बार लगा है, किसी ने सेल में ही चूल्हा बैठा लिया है, जिस पर सदा कढाह चढा रहता है, किसी की अगूठी किसी जेल-अफसर के हाथ मे चली जाती है, किसी के घर से मनिआर्डर-पर-मनिआर्डर गुप्त नामो से पहुंचा करता है—तो इसमें तुम्हारा क्या बिगड़ जाता है? तुम आदर्शवादी बने रहना चाहते हो, तो बने रहो; जो औज-मौज को ही जीवन का सार समझते है, यदि जेल मे पहुंचकर भी वे उसके लिए प्रबंध कर लेते है—तो उन पर उगली उठाने का तुम्हारा क्या अधिकार?

वहां जो क्रांतिकारी राजबंदी थे, सबके सब निष्ठा से रहते, पढ़ते-लिखते, अपने काम आप ही करते। हम सत्याग्रहियो की यह लीला देखकर वे बिगड़ उठते--इन्ही से स्वराज्य प्राप्त हो सकेगा! न वे जानते थे, न हम--स्वराज्य चाहे जिनके द्वारा आवे, उस स्वराज्य को भोगेगे ये ही लोग, जिन्होने जेल मे भी सिद्ध कर दिया है कि भोगने की कला ये जानते है!

खुफिया

जेल की जिन्दगी इस प्रकार साधारण ढंग से जा रही थी कि एक दिन जैसे शान्त तालाब में एक ढेला आ गिरा !

जेल-अधिकारियों ने एक दिन एक सूची पेश की और कहा, इन लोगों के फोटो लेने के लिए खुफिया-विभाग के लोग गेट पर आये है।

उस सूची मे जिन लोगो के नाम थे, उनपर ध्यान देने से ही लगता था, कही दाल मे काला जरूर है !

इसके थोड़े दिन पहले ही, जब हम लोग जेल में कुछ दिन रह चुके थे, खबर मिली, बिहार के क्रान्तिकारियो के नेता जोगेन्द्र शुक्ल जी गिरफ्तार कर लिये गये। वह गिरफ्तारी जिस तरह, जिस स्थिति मे हुई, तरह-तरह की अफवाहे उड़ रही थी। एक बहुत बडा षड्यन्त्र केस चलकर रहेगा, यह तो स्पष्ट ही था।

क्या इस फोटो लेने की क्रिया का कुछ सम्बन्ध उस षड्-यन्त्र केस से है ?

उस सूची मे मेरा भी नाम था। शुक्ल जी मेरे ही स्कूल मे पढ़ते थे, मेरे ही जिले के रहने वाले है, मुझसे जानपहचान भी रही है, युवक-आश्रम मे भी कभी-कभी आते थे, फरारी के हालत मे भी मुझसे मिलते रहे हैं। जिस दिन मै गिरफ्तार हुआ, जुलूस के समय हाजिर थे। हम उन्हे प्रेम से भैया कहा करते। उनके कामो से मेरा कोई सम्पर्क नही रहा, किन्तु क्या इतने ही सम्वन्ध मुझे षड्यन्त्र-केस मे शामिल करने के लिए काफी नही है ?

जिनके नाम सूची मे थे, हमने मिलकर सलाह की। एक बार इतने ही से टाल दिया कि जब तक हमे यह नही वताया जाएगा कि किस दफा के अनुसार हमारा फोटो लिया जा सकता है और उसके लिए वाज़ाप्ता आर्डर नही आएगा, हम फोटो नही देगे।

इस जाब्तगी को पूरा करके खुफिया वाले फिर आ धमके। किन्तु उस दफा मे वे ही आ सकते थे, जिनकी सज़ा छः महीने से ऊपर की हो। मै वाल-वाल वच गया।

कि कुछ दिनों के वाद जेल-गेट से खबर आई, आपके मुलाकाती आये है, भेट करने चलिये।

इस दूर-देश मे कौन मिलने आया—वड़ी उत्सुकता हुई, उत्कठा मे जल्द-जल्द पैर वढाता गेट की ओर चला।

लेकिन जब बुलाकर ले जाने वाले वार्डर से रास्ते में वात

की, तो माथा ठनका। उसने बताया, वहाँ पुलिस के कुछ लोग है, कुछ अपरिचित लोग भी है, फोटो लेने वाले लोग भी फिर आये है। मेरी नजर तुरन्त जेल गेट की ओर गई—वहा उस छेद मे, जिससे होकर गेट खोलने को कहा जाता है, मैने कुछ हलचल अनुभव किया। क्या वे लोग उसी छेद से फोटो ले रहे है? इच्छा हुई, लौट जाऊं! किन्तु यदि फोटो ले चुके हो, तब? नही, मुझे आगे बढना चाहिये। अपने रूमाल को इस तरह सिर पर रख लिया कि चेहरा बहुत कुछ ढंका रहे और आडे-तिरछे चलता हुआ गेट पर पहुँचा।

गेट के अन्दर पहुँचते ही मैने हडकम्प खड़ी कर दी—मेरे साथ ऐसी शैतानी क्यो की गई, मेरे मुलाकाती, कौन है उन्हे मेरे सामने लाओ, मेरा फोटो कौन ले रहा था, कैमरा दिखलाओ, तस्वीर वापस करो नही तो मैं यहा कुहराम मचा दूँगा, अपना सिर फुडवाऊगा, तुम लोगो के सिर फोड़ूँगा।

बैठिये, बैठिये, उत्तेजित मत होइये—नायब जेलर बोलने लगा। मैंने कहा—यह हसीखेल नही है, आपने हमे भले मानस समझ रखा है, जिन पर जो कुछ भी किया जा सकता है? आज आपको बता दूँगा, हम कहा तक क्या कर सकते है!

"नाराज काहे होता है बेनीपुरी बाबू, आपका फोटो नही आया!"

मैने मुड़कर देखा, वही खुफिया-अफसर' जो चौबे को गिरफ्तार करके इन्सपेक्टर बन गया था! मेरा पारा और गरम हो उठा। मैने कहा, कैमरा दिखलाओ, नही तो…।

लेकिन वह भी घाघ। इधर आइये, बैठिये,—कैमरा आपको दिखला देगा, आप नाराज काहे होता है। बैठिये तो!

और जब बैठा, वडी चिकनी-चुपडी बाते करने लगा, हम तो गुलाम है, सरकार का हुकुम बजा लाता है। हम क्या करे, यही हुकुम था, लेकिन, फोटो नही आया, आप विश्वास कीजिए। एक आदमी से कैमरा लाने को कहकर वह पूछने लगा, आप तो अब छूटेगा, छूटकर क्या करेगा, कहा जायगा? मैने गुस्से मे ही कहा—जो अब तक नही किया, वही करूँगा, पटना पहुँचकर सबसे पहले तुम्हे पिटवाऊगा, पटनिया गुडो से शायद तुम्हारा पाला नही पडा है, अभी तक भलेमानसो को ही फसाते रहे हो, आदि-आदि।

किन्तु वाह रे उस्ताद। काहे नाराज होगा—हँसता रहा, अटसट बाते पूछता रहा। मुझे ऐसा लगा, दीवार की ओट मे खडा कोई आदमी हमारी बाते लिखता जा रहा है। यही नही, कुछ अपरिचित लोग इधर-उधर खडे हैं जो घूर-घूर कर मुझे देख रहे है!

मैंने समझा, इससे बाते करना या ठहरना उचित नही हो सकता है, कुछ लोगो से मेरी शिनाख्त करा रहा हो। मैंने तमककर फिर कैमरे की माग की और वह दात खिसोड़ कर फोटो नही आया, नही आया,कह रहा था कि मैं झमककर उठा और फाटक के निकट जाकर भीतर जाने देने के लिए नायब जेलर से कडककर कहा।

फाटक खोल दिया गया। मै तेजी से अपने वार्ड की ओर

चला। वहाँ वार्ड के फाटक पर कुछ लोग खडे प्रतीक्षा कर रहे थे कि बाहर का कोई दिलचस्प समाचार मै लाऊगा। जब-जब किसी का कोई मुलाक़ाती आता, लोग इसी प्रकार प्रतीक्षा किया करते। किन्तु जेल के फाटक तक पहुँचते-पहुँचते तो गुस्से से मेरी आंखों से आंसू आ गये थे। लोग सन्न—अरे, कोई बुरी खबर तो मुझे नही सुनाई गई। लेकिन रु'धे कठ से जब मैने सारी बाते की, एक समा बँध गया!

भोजन का समय था . खाना आ चुका था। सिद्धि बाबू तो ऐसे उत्तेजित हुए कि ठोकर देकर उन्होने खाना उलट दिया—और बोले, जेलर को बुलाओ, आज कुछ होकर रहेगा। आह! अब सिद्धि बाबू नही रहे; गया डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन—भव्य व्यक्तित्व क्षत्रित्व नस-नस में! उनकी बड़ी-बड़ी आँखों से अंगारे बरसने लगे।

एक कुहराम मच गया—जेलर आये, उन्होंने कैफ़ियत दी, मेरी गैरजानकारी मे ही ये सारी बाते हुई। उन्होने वादा किया, अब आगे से ऐसा नही होगा। राजेन्द्र बाबू को बीच-बिचाव करना पडा। एक आदमी गेट पर जाकर कैमरे मे जितने प्लेट थे, ले आया। सरकार के पास एक दरखास्त भेजी गई कि इस तरह का गैरकानूनी और गैरवाजिब व्यवहार क्यो की गई? आशका प्रगट की गई, कि कही पुलिस की कोई गर्हित मशा तो फँसाने का नही है? यह दरखास्त फूलन जी ने लिखी थी, राजेन्द्र बाबू ने उसे अच्छी तरह देख लिया था!

धीरे-धीरे छ महीने की सजा पूरी हो रही थी। ज्यों-ज्यो रिहाई का दिन निकट आता गया, त्यो-त्यों चिन्ता बढ़ती गई। 'युवक' का विप्लव-अंक निकाल कर आया था, उसे सरकार ने जब्त कर लिया था। ग्राहको के घर-घर मे उसके लिए खानातलाशी कराई गई थी। 'युवक' का क्या होगा ? सत्याग्रह चल ही रहा था, क्या उसमे फिर शामिल हुआ जाय ? घर का क्या प्रबन्ध होगा ? गरीबो के लिए राजनीति कितनी दुखदायी चीज उन दिनो थी ? यह आशका भी थी, कही सरकार इस षड्यन्त्र-केस मे नही उलझा दे। देवघर-षड्यन्त्र-केस की कहानी यहाँ सुनी थी, उनमे से कई इसी तरह फँसाये गये थे।

जेल दो ही समय अधिक खलता है। एक—आने के बाद थोड़े दिनो तक, और दूसरा—जाने के पहले थोडे दिनो तक! आदमी दिन गिनते-गिनते घटे गिनने लगता है। दिन कितने बड़े, रात कितनी भारी! पुरानी स्मृतियाँ सजग होने लगती है। सुख की स्मृतियाँ भी कसक पैदा करती है। दुख की स्मृतियो के वृश्चिकदशन का क्या कहना ? यहा राजबदियो का जो रगढग देखा, वह अलग खलने लगा।

किन्तु ये सब बाते तो होती ही है—जिस यज्ञ का प्रारम्भ किया उसकी पूर्णाहुति तो देनी ही होगी।

सयोग की बात, सी० क्लास के भोजन का स्वास्थ्य पर कुछ अधिक असर नही पडा था, हां, कुछ दुबला जरूर हो गया था। कुछ वजन कम हो गया था, किन्तु शरीर मे अधिक

स्फूर्ति मालूम होती थी। आदर्श स्वय एक खुराक है, जब कोई खुराक काम नही आती, यही पुष्टि देता रहता है। जिसके सिर मे प्रकृति आदर्शवाद भरती है, उसके बदन मे ऊँट के कूबड़ की तरह, कुछ अव्यक्त खुराक भी रख देती है। अपने कलेजे के टुकड़े खाना और अपने खून के घूंट पीना, यह उर्दू के आशिको का ही भाग्य नही है—आदर्शवादियो का भाग्य भी ऐसा ही होता है।

जब छ. महीने के बाद हज़ारीबाग सेन्ट्रल जेल की दीवारो से बाहर खडा हुआ, क्या सिर्फ प्रसन्नता ही अनुभव किया! मनुष्य तुम भी क्या हो—बधनो से भी तुम्हे मोह हो जाता है। गेट पर उसी तरह तरह-तरह की बेड़ियाँ और हथकड़ियाँ थी, उन्हे किस ममत्व से देखा। इन काली, ऊँची, अलघ्य दीवारों से भी जैसे ममता हो गई थी। इनके भीतर छः महीने का जीवन छोडकर जा रहा हूँ—जहाँ अपने जीवन का एक अंश हो, उसके लिए मोह-ममता क्यों न हो? चलते समय जेलर ने अपने कमरे मे बुलाकर भूलचूक भुला देने को आग्रह किया था, नायब जेलरों ने नमस्कार-आदाब किया था। जमादार-सिपाही सब जुहार दे रहे थे। ये भी तो समझते थे, हम कोई अपराधी तो है नही, जो काम कर रहे हैं, जिस काम के लिए कष्ट उठा रहे है, उनसे उनका भी तो कोई फायदा होगा ही। मै साहित्यिक हूँ, आदर्शवादी हूं, यह बात भी जेल मे फैल चुकी थी। कुछ इसका असर भी ज़रूर था। सिर्फ उन लोगो के हृदयो पर नही, अपनी दृष्टि पर भी। तभी तो

मन मे न कही कटुता है, न कोई शिकवा-शिकायत ! वे और हम सब अपनी-अपनी जगह पर है, सब अपने-अपने काम पर हैं।

सलाम ओ फौलाद की जजीरो, तुम बोलती रहो, स्वयं तुलकर हमे तोलती रहो। तुम्हारी तोल हमे मालूम हुई और हमारी तोल मे कहाँ पोल है, तुम जान गए !

सलाम ओ पत्थर की गुमसुम, काली, कठोर, अलंघ्य दीवारो, तुम्हारे भीतर अपने को छः महीने का जीवन रखे जाता हूँ, ज़रा हिफाजत से रखना और याद रखना, फिर आऊंगा और अपनी थाती तुमसे माँगूंगा। समझे ?

धावा

उस घनघोर देहात मे जब सशस्त्र पुलिस के एक पूरे दस्ते ने मेरे घर पर धावा बोल दिया, तो सारे गाँव मे कोलाहल मच गया।

पहली बार जेल से लौटने पर मैंने अपने गाँव के निकट ही नदी-किनारे 'बागमती-आश्रम' की स्थापना की और आस-पास के गावों से युवको को इकट्ठा कर सत्याग्रह की धूनी वहा रमाने लगा। किन्तु थोड़े दिनों के बाद ही गांधी-इरविन-पैक्ट हुई, सत्याग्रह स्थगित हुआ। तब फिर पटना पहुंचकर मैंने 'युवक' निकालने की योजना की। दो अक निकले। अपना प्रेस भी हो गया।

कि, घर से खबर आई, मेरा दूसरा बच्चा एक शीशी पर गिर जाने के कारण बुरी तरह जख्मी हो गया है। मै तुरत घर की ओर चला।

जब शाम को सोनपुर स्टेशन पर पहुंचा, गाड़ी खुलने में बहुत देर हुई। लोग कानोकान बाते करने लगे, हाजीपुर मे

ट्रेन-डकैती हुई है, स्टेशन-मास्टर मारा गया है। डकैती किन लोगो ने की, तरह-तरह के अनुमान लगाये जा रहे थे। एक ने कहा, क्रान्तिकारियो का यह काम है। उन दिनो हाजीपुर क्रान्तिकारियों का अड्डा समझा जाता था—शुक्ल जी का घर इस सबडिवीजन के ही अन्दर था।

मेरा मन अपने बच्चे पर टंगा था। मुजफ्फरपुर पहुँच कर मै सीधे बेनीपुर के लिए रवाना हो गया था। वहाँ से बच्चे को लेकर सैदपुर के अस्पताल मे डेरा डाल कर पड़ा था।

ज्यों ही गांव मे सशस्त्र पुलिस का दस्ता पहुंचा, और मेरा घर किधर है, लोगों से पूछा जाने लगा कि मेरा चचेरा भाई वहां से दौड़ा और चार मील लगातार दौड़ता हुआ सैदपुर मे यह सम्बाद सुनाया। मुझे बड़ा अचरज हुआ, किंतु तुरत ही मैने समझ लिया, हो-न-हो उस डकैती-केस मे ही मुझे गिरफ्तार किया जाएगा। सयोगवश मै उस दिन पटना से गैरहाज़िर था, जिस समय डकैती हुई, मै सोनपुर मे था, पुलिस को मेरे फसाने के लिए ये बाते अनायास मिल गई। हज़ारीबाग जेल की फोटो वाली घटना मेरी आंखों के सामने नाचने लगी।

मैंने वहाँ से टल जाना ही उचित समझा। हो सकता है, बेनीपुर से वे लोग यहां आवे। बगल के गांव के एक मित्र के घर चला गया।

उधर बेनीपुर मे अजीब दृश्य रहा। ज्योंही एक बुजुर्ग

सज्जन से पुलिस अफसर ने पूछा, मेरा घर किधर है, वह ताड़ गए। उन्होने कहा, वह तो अब पटना ही रहते है, यहां उनका घर कहां ? कभी-कभी तो आते होगे ? आते तो है, हाल ही आये थे, आते है, तो क्या हम लोग उनके परिवार के नहीं हैं। कभी किसी के घर, कभी किसी के घर ठहर गए ! पुलिस अफसर भौचक। किन्तु उसका आश्चर्य तो बढ़ गया, जब कि हर पूछे जाने वाले से वह यही उत्तर सुनता। बच्चे तक यही कहते।

तब पुलिस का दस्ता गांव में घूमने लगा। अचानक एक जगह उन्होंने देखा, एक बक्स उठा कर कोई लिए जा रहा है। झट उस आदमी को रोक दिया। वह बक्स मेरा था, पुराने क़ागजपत्र थे उसमे। उस बक्स के सहारे मेरे घर की तलाशी लेने को वे बढे। किन्तु तलाशी के लिए कोई गवाही चाहिए, कोई भी गवाह बनने को तैयार नही हुआ। तब उन्होंने चौकीदार को खबर भेजी—उसकी बीवी ने कहा, वह बाहर चले गए है। गांव का रुख देखकर चौकीदार भी छुप गया था।

पुलिस बड़ी पशोपेश मे पड़ी। किन्तु फिर तो पुलिस—मेरे घर की तलाशी ली, कुछ मिला नही, कुछ पुराने पत्र उठा ले गई और गुस्से मे मेरे गाँव के दो आदमियों पर मुकदमे चलाए ! पीछे मुकदमे मे उनकी रिहाई हुई। मैं सैदपुर हूं, इसकी भनक भी पुलिस को नही लग सकी।

जब बड़ी रात तक वे लोग सैदपुर नही पहुँचे, तो मैं वहा आया। डाक्टर से बातें की, कि यदि डकैती का मुकदमा

चला जाए, तो बचाव का कोई रास्ता निकल सके। डाक्टर सज्जन पुरुष थे, मैंने जैसा कहा, उन्होने कर दिया।

कल ही पटना आदमी भेजा। वहां से खबर आई, 'युवक' के दो लेखो के लिए सरकार ने पहले अक को जब्त कर लिया है और मुझ पर राजद्रोह के अभियोग मे वारट निकाला है। यही नही, अब वह मुझे फरार घोषित करने जा रही है। वकीलो ने राय दी है, मैं तुरत आकर हाजिर हो जाऊ। हां, मुझे इस तरह आना चाहिए कि बीच मे गिरफ्तार नही हो जाऊं। क्योकि तब पुलिस दावा करेगी, मै भागा जा रहा था, उसने पकड़ लिया। फिर जमानत मिलने मै दिक्कत होगी।

मैं बचते-बचाते पटना पहुँचा। मेरे वकील बाबू बलदेव सहाय मुझे अपनी गाड़ी पर लेकर जिला-मजिस्ट्रेट के बंगले पर पहुँचे। पुलिस ने उनके कान मेरे खिलाफ भर रखे थे, किन्तु वह थे सज्जन आदमी, फिर बलदेव बाबू का व्यक्तित्व! पांच हजार की जमानत पर मै छोडा गया।

एक विशेष अदालत मे मुकदमा चला। सरदार भगतसिह और उनके दो साथियो की फासी पर मैने 'इन्कलाब-जिदाबाद' शीर्षक से एक लेख लिखा था। अपनी चीज भी अपने को कितना आश्चर्यचकित कर देती है, यह तब पाया, जब अदालत मे सरकारी वकील ने उस पूरे लेख को पढ सुनाया। पूरी अदालत मे निस्तब्धता छा गई—शब्द-शब्द से जैसे बम का धड़ाका निकल रहा था!

एक और भी आपत्तिजनक लेख था—वह लेख जापान से श्री आनन्द मोहन सहाय ने भेजा था ! नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने जब पूर्व एशिया में आजाद हिन्द सरकार कायम की, तो सहाय उस मन्त्रिमडल के प्रमुख सदस्य थे। आजकल वह भारत-सरकार के राजदूत है।

सरकार का कहना था, मेरे लेख से हिसा के लिए उत्तेजना फैलती है। इन्कलाब शब्द को ही वह हिसा से सराबोर समझती थी। हमारी ओर से बर्नार्ड शा का एक कथन पेश किया गया था, जिसमे ब्रिटिश आम चुनाव को भी इन्कलाब कहा गया था।

"लेकिन इन्कलाब सदा जिन्दा रहे, इसका मतलब ।"

बलदेव बाबू की हाजिरजवाबी मशहूर है; उन्होने मुँहलगे कहा—"इसका मतलब यह कि जहा आप बैठे है, वहां कोई गाँधीटोपी वाला हाकिम बैठा होगा, जहा सरकारी वकील है, वहाँ मै होऊँगा, किन्तु मेरा मुवक्किल उन दिनो भी अभियुक्त के कटघरे मे ही होगा, जिसमें वह आज खड़ा है।" अदालत अट्टहास से गूँज उठा। किन्तु बाद में उनकी भविष्यवाणी कितनी सार्थक हुई ! काग्रेमी सरकार मे भी मुझे जेल जाना पड़ा और बलदेव बाबू उस सरकार के एडवोकेट जनरल बनाये गये !

मुझे डेढ साल की सजा दी गई। हाईकोर्ट ने उस सजा को बहाल रखा। हाईकोर्ट का चीफ जस्टिस सर कुटनी टरेल था। उसने स्वयं इस मुकदमे को देखा था। अपने स्वभाव के

कारण उन दिनों वह 'मिस्चीफ ज्रस्टिस' के नाम से प्रसिद्ध था। पीछे एक मानहानि के मुकदमे के सिलसिले मे उसकी भिड़न्त प० मोतीलाल नेहरू से हुई थी। मोतीलाल जी ने उसके छक्के छुडा दिये थे!

हाइकोर्ट के फैसले के बाद मैंने तुरन्त अपने को जेल में भेज दिये जाने के लिए अदालत के सामने उपस्थित किया। डर था, पुलिस कोई बहाना लगाकर मेरे जमानतदारो को कही तग न करे। किन्तु तबतक अदालत मे हाइकोर्ट का फैसला नही आया था। भलेमानस मुसलमान नाजिर ने कहा—तब तक आप घर से हो आइए, मै जरूरी कारंवाई कर देता हूँ, आप पन्द्रह दिनो के बाद आइयेगा!

घर गया, बुखार हो आया, कर्णमूल सन्निपात मे वह परिणत हो गया! वह पीडा, वह जीवन-मरण के बीच झूले मे झूलना! किन्तु उसके वर्णन के लिए यह स्थान नही है। उसे अन्यत्र कलमबद किया है।

मुजफ्फरपुर के अस्पताल मे भरती हुआ। पेरोल की दरखास्त पड़ी, वह मंजूर हुई। मै धीरे-धीरे अच्छा हो रहा था कि उसी समय राउण्ड टेबुल कान्फ्रेंस से गाँधी जी वापस आये—गाँधी-इरविन-पैक्ट हवा मे उड गई, नेताओ की गिरफ्तारिया शुरू हुई, काग्रेस गैरकानूनी सस्था करार दी गई। मेरा पेरोल तोड दिया गया, उस अशक्त अवस्था मे ही मै पटना को रवाना हुआ।

इस समय सरकार ने बडे जोरों से काग्रेस पर झपट्टा मारा था। काश, वह जान पाती, कॉंग्रेस की जड़ कितनी नीचे चली गई है। ज्यों ही कॉंग्रेस के दफ्तर पर कब्जा हुआ, अस्पताल में मेरे बिस्तरे के नीचे रात-भर साइक्लोस्टाइल चला करता!

पटना जाते समय रास्ते मे ही बुखार ने फिर मुझे दबोच दिया। अब पटना-जनरल हास्पिटल में। वहाँ पथ्य खाया नहीं कि पटना जेल मे—"फिर वही कुजे-कफस, फिर वही सैयाद का घर।"

वे ही जंजीरे, वे ही दीवारें। तब तक सत्याग्रहियों की फौज की कई टुकड़ियाँ वहा पहुंच चुकी थी। जजीरें फिर बोल रही थी, स्वयं तुलकर हमें तोल रही थी!

लेकिन हममें एक कैदी ऐसा भी था, जिसने एक विचित्र स्थिति मे हथकड़ियों की स्वय माँग की। वह आज ही आया था, संध्या हुई कि वह श्यामनन्दन बाबा के निकट जाकर फूट-फूटकर रोने लगा—मेरे लिए हथकड़िया मँगा दीजिये! हथकड़ियां—यहाँ, किस लिए? पता लगा, वह बेचारा एक भयानक बीमारी का शिकार है। कभी-कभी रात मे उसे ऐसी कामोत्तेजना होती है कि वह सुधबुध खो देता है। गॉव में था, तो इधर-उधर निकल जाता, यहां क्या होगा? कही किसी पर टूट पडे, तो? पाँच हाथ का दैत्याकार वह जवान! जहाँ गिरेगा, अनर्थ कर डालेगा। श्यामनन्दन बाबा—हरफन-

मौला ! विश्वास मानिये, उन्होंने बड़ी मुश्किलों से उसे काबू मे रखा !

एक और कैदी वहाँ मिले—जिन पर जजीरे और दीवारे बेतरह हावी थी। पता चला, यहा एक क्रान्तिकारी क़ैदी है, जो अनशन कर रहे है, एक काम से अस्पताल गया, तो उन्हें देखा। पता चला, आप हजारीलाल है। हजारीलाल का नाम सरदार भगतसिंह के केस मे आया था, वह फरार थे। पटना सिटी मे पकड़े गये और इस जेल मे डाल दिये गये। जेल में आने पर उन्हे बेड़ी-हथकड़ी पिन्हाकर सेल मे रख दिया गया। इसके विरोध मे उन्होने अनशन शुरू कर दिया है, फलतः अस्पताल मे ले आये गये है ! वह बड़ी शान से हथकड़ी-बेड़ी को झनझनाते अस्पताल के एक कमरे मे घूम रहे थे और गीत भी गुनगुनाते जाते थे ! डाक्टर ने कहा, जरा इनसे कहिये, अनशन छोड दे—हमारा क्या कसूर है, हम तो सरकार की आज्ञा का पालन करने वाले है ! किन्तु हजारी-लाल जी तो सत्याग्रहियों से नफरत करते थे। हाँ, मेरा नाम सुन रखा था, इसलिए शिष्टता दिखलाई—किन्तु अडे रहे, जब तक ये जजीरे नही कटती, मै अनशन छोड़ नही सकता !

जब पटना जेल मे ही था, एक दिन एक जमादार ने कहा, बाबू, उस बमवाले बाबू के पास रात मे बहुत लोग आते है, खुफिया वाले भी आते है, क्या बात है बाबू। और, क्या बात है, थोडे ही दिनो के बाद पता चल गया—हजारीलाल

जी दूसरे लाहौर-षड्यन्त्र-केस के मुखविर बन गये ! जब उनके बयान पत्रों में छपने लगे, बार-बार उनकी वह शान मेरी आँखों के सामने नाच उठती !

जंजीरों ने उन्हें कैसा तोला ? कितने भारी-भरकम दीखते थे—तुला पर चढ़े कि पंख से भी हल्के साबित हुए, एक ही फूक में उड़ गये !

नई नीति

दूसरी बार जब पटना जेल से हजारीबाग जेल भेजा गया, वहा नया ही समां देखा ! न वह रेलपेल, न वह औजमौज। सरकार ने इस बार एक नई नीति अपनाई थी। उसने देखा, अपर डिवीजन देने से लोग जेल से नही डर रहे है, इसलिए उसने तय किया, कम से कम लोगों को ही अपर डिवीजन दिया जाए। बिहार-भर से सिर्फ चार-पाँच आदमियो को ए० डिवीजन मे रखा गया था। प्रोफेसर बारी साहब तथा बाबू रामदयालुसिह ऐसे आदमियो को भी उसने सी० क्लास में रखा था।

एक दूसरी नीति थी, सजा से अधिक जुर्माना करो और उसके लिए तुरन्त जब्ती-कुर्की कार्रवाई की जाय। सरकार की यह नीति सफल हो रही थी, यह मजे मे कहा जा सकता है। जब घर से हाथी-घोड़े, बैल-गाय, जेवर-गहने आदि की जब्ती की खबरें आती, बड़े-बड़े अगरधत्तो के होंठ सूख जाते !

कम ही लोग थे, अतः सब को बाबू वार्डों में ही रखा गया था। बल्कि उनमें भी कई वार्ड खाली पडे थे।

इस बार सरकार की ओर से ही कार्रवाई शुरू हुई थी। लार्ड इरविन चले गये थे, लार्ड विलिंग्टन वायसराय होकर आये थे। उनका दावा था, वह कांग्रेस को कुचल डालेंगे। कांग्रेस ही गैरकानूनी संस्था करार नही दी गई थी, कांग्रेस के फंड को भी ज़ब्त कर लिया गया था। नौकरशाही कैसी अंधी हो गई थी, इसका सबूत था बाबू ब्रजकिशोरप्रसाद जी की गिरफ्तारी। ब्रजकिशोर बाबू गठिये से परीशान थे, चलने-फिरने से बिल्कुल अशक्त। तो भी उन्हे गिरफ्तार किया गया और तमाशा यह कि उन्हे बी० डिवीजन दिया गया था।

बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद—गाधीजी ने अपनी 'आत्मकथा' मे उनकी बडी मधुर चर्चा की है। उन्होंने ही गाँधी जी को चम्पारण बुलाया था। बडे चतुर, बड़े कर्मठ। एक पीढ़ी तक बिहार की राजनीति का सूत्र उनके हाथो में था। सगठन की अद्‌भुत क्षमता थी उनमे। जो वह चाहते, वही होता। सदाक़त आश्रम के किसी कोने मे एक पगु आदमी बैठा है और वहाँ से बैठे-ही बैठे पूरे बिहार के कोने-कोने के कांग्रेस संगठन मे जब जहाँ जिसको चाहे, बैठाता, उठाता, दौड़ाता है! राजेन्द्र बाबू गद्दी पर दीख पडते है, किन्तु प्रान्त का बच्चा-बच्चा जानता है, शासन की बागडोर किसके हाथ मे है! चाणक्य और चन्द्रगुप्त की जोड़ी पटना मे फिर लौट आई हो, जैसे! हाँ, ब्रजकिशोर बाबू की यह खूबी थी कि यश का सारा सेहरा तो

वह राजेन्द्र बाबू के सिर पर रखते, हलाहल स्वयं पी जाते ! कैसी विचित्र बात—बिहार अपने इस सपूत को इतना जल्द भूल गया !

मै इस बार वार्ड न० ६ मे रखा गया था। संयोग से मै उसी सेल मे था, जिसमे हमारे जिले के नेता मौलबी सफी साहब १९२१ मे रखे गये थे। एक पुराने जमादार ने बताया, किस तरह सफी साहब १९२१ की ३१ दिसम्बर को १२ बजे रात तक जगे रहे थे, इस आशा मे कि जेल का फाटक अवश्य खुलेगा, क्योकि गाँधी जी ने घोषणा कर रखी थी कि एक वर्ष मे स्वराज्य जरूर मिल जाएगा ! वह बेचारे क्या जानते थे कि उनका एक मामूली स्वयसेवक उसके बारह वर्ष बाद उस सेल को सुशोभित करेगा और वह साम्प्रदायिकता के बवडर मे फसकर कभी कांग्रेस को गालियाँ देते फिरेगे, कभी लदन जाकर राउण्ड-टेबुल-कान्फ्रेन्स मे अग्रेजों की कठपुतली का पार्ट अदा करेगे !

सरकार की नई नीति जेल के नियमो की कड़ाई के सम्बन्ध मे भी है। पिछली बार स्वराजी कैदी स्वयं खानपान की निगरानी करते थे—जो सामान मिलता था, उनसे मनमाने व्यजन बनवाते, खाते। इस बार जो कुछ बनवाकर भेज दिया जाता है, खाना पडता है। कभी हलवा कच्चा होता है, कभी भात गीला पक जाता है। कपडो के बारे मे भी सख्ती—बी० डिवीजन वालों को सरकारी कपड़ा ही पहनना होगा और ए० डिवीजन वालों को भी नियम के

वृत्त के बाहर नही जाना होगा। ज़ब जेल के अन्दर लोग घुसने लगते है, पूरी नंगाभोरी कर ली जाती है। बी० डिवीजन वालों को अपने कपडे वही उतार देने होते है, वही से सरकारी पोशाक उन पर मढ दी जाती है।

अभी एक मैथिल सत्याग्रही आये है—पूरे श्रोत्रिय। जिन्दगी में साँची धोती के सिवा कभी दूसरी पोशाक नही पहनी। उनके सुथने का इजारबन्द रह-रहकर खुल जाता है—बेचारे परीशान-परीशान है ! इस विचित्र पोशाक मे शौचादि से कैसे निवृत्त हुआ जाता है, यह भी नही जानते !

किताबों के बारे मे तो और भी सख्ती। सिवा धार्मिक ग्रंथो के और कोई भी पुस्तक नही दी जा सकती। मै अपने साथ बुक-ऑफ़-नालेज ला रहा था, बच्चों के लिए कुछ पुस्तके लिखने की इच्छा थी। उसे भी रोक लिया गया है। कहा गया है, एक दिन सुपरिन्टेन्डेन्ट उसके पन्ने उलट रहा था, तो उसमे उसने देखा, ताले कैसे बनते है, इस पर छोटा-सा लेख है ! बडी खतरनाक पुस्तक—इसे पढकर तो कैदी ताले खोलने की कला जान जाएगे और भाग निकलेगे ! भला ऐसी पुस्तक को जेल के अन्दर जाने दिया जाय !

एक चर्चा है, श्री बाबू ने राजेन्द्र बाबू को सम्वाद भेजा है कि यदि यह स्थिति रही तो मुझे अनशन करना होगा—बिना पुस्तक के मै रह नही सकता !

लेकिन नया सुपरिन्टेन्डेन्ट पूरा अकड़खां है—हिन्दोस्तानी है; किन्तु वैसा हिन्दोस्तानी, जिसमें अंग्रेजो की वफादारी करना

एक धर्म बन गया है। हाथ मे एक डडा लेकर घूमता है, उसे हिलाता-चलता है, कभी-कभी बाते करते समय उसे ऐसा उछालने लगता है कि लगता है, बात करने वाले के सिर पर अभी दे मारेगा।

बीमारी का असर अभी तक मुझ में है। दुर्बलता अभी गई नही है। चलता हूं, तो पैर डगमगाने लगते है। उस दिन कबड्डी हो रही थी, मैं भी शामिल हो गया, जब दौड़ा, भहराकर गिर पड़ा। अचानक आंखो के सामने अन्धकार छा गया था।

उस दिन किसी ने सुपरिन्टेन्डेण्ट से कहा, इनके लिए खास भोजन का प्रबन्ध कर दीजिए, हंसकर बोला—मैं डाक्टर हू, मै जानता हूं यहां जो भोजन दिया जाता है, वह स्वास्थ्य के लिए आदर्श भोजन है। उसकी हसी में विप था। मैंने उस सज्जन को डांटा, क्यों आपने मेरे बारे मे इस बदमाश से कुछ कहा। यों ही एक दिन एक सज्जन ने उससे कहा—मुझे डिस्पेसिया की शिकायत है। झट उसने व्यवस्था दे दी–कुछ लाल मिर्च खाइए! डिस्पेसिया मे लाल मिर्च?—उसने कहा, डाक्टर मै हूं या आप! एक बड़े आदमी ने एक दिन उसे सुझाया, यह डंडा भाजते चलना अच्छा नही लगता। उसने कहा—आपको हमेशा याद रखना चाहिए, आप जेल मे है! सरकार भी कैसी चतुर है, जब जैसी नीति होती है, उसी के अनुसार अफसर भी चुन भेजती है!

न अब वे जल्से है, न उत्सव, न हाहा-हूहू! लोग बहुत कम

है, जो हैं, वे ऐसे ऊंचे तबके के हैं, जो किसी तरह निभा ले जाने मे ही शराफत समझते है।

जजीरे चुप है किन्तु बधनों से सारा शरीर जकड़ा है। दीवारे कुछ नीची लगती है, किन्तु दम घुटा जा रहा है!

इस प्रकार का जीवन जा रहा था कि एक दिन हमे मालूम हुआ सरहदी गाधी खान अब्दुल गफ्फार खा साहब और उनके भाई डाक्टर खान साहब इस जेल मे भेजे गए है और वे दोनों 'छोकरा किता' में रखे गए हैं! उनके बारे मे वार्डरो और जमादारो के मुह से बहुत कुछ सुनने को मिलता है। दोनों भाइयों को बडी शान से रखा गया है—वे नजरबन्द है, एक बडी रकम उन्हें यहा खर्च करने को मिलती है, परिवार वालो के लिए भी बडी-बड़ी रकमे भेजी जाती हैं। छोकरा-किते को उनकी रुचि के अनुसार सुधारा-सवारा जा रहा है। टहलने को पगडडिया बन रही है, खेलने को कोर्ट बन रहे है, फूल के पौदे लग रहे है, कई पेड भी उन्होने अपने हाथ से लगाये है। खाने-पीने की चीजो की इतनी इफरात कि जो उस किता मे गया, बिना मुह मीठा किये नही लौटा। एक दिन उन्होने जेल-अधिकारियों से इजाजत मागी, कुछ चीजे बनाकर वे हम लोगो के पास भेज सके। सुपरिन्टेन्डेन्ट ने इजाजत नही दी, कहा—आप चाहें, तो फूल भेज सकते है! कभी-कभी थाल में फूल सजा कर भेज देते है!

बड़ी इच्छा होती है उन्हे देखने की। एक दिन सरहदी गांधी जेल-गेट पर किसी काम से जा रहे थे, हमने दूर से ही

उन्हे देखा । एक दिन एक नीबू का पौदा लेकर वह अस्पताल की ओर से लौट रहे थे, हमने उस दिन भी उन्हे देखा । वे अधिकाश अपने किते मे ही रहते, जब-जब बाहर निकलते, जेल मे हलचल मच जाती । जेल-गेट पर उनके पार्सलों का तांता लगा रहता ।

उन दिनो दोनों भाई भारतीय स्वातंत्र्य युद्ध के प्रतीक समझे जाते थे । आज वे हमसे कितनी दूर है—एक गद्दी पर; एक जेल मे ! जमाना भी क्या-क्या कराता है ?

जेल मे इतनी सख्ती है, किन्तु एक है हमारे साहूजी जो इस सख्ती को भी कम करने पर तुले है । एक प्रतिष्ठित खान्दान के । जब गाधी जी चम्पारण आए थे, तभी से उनके भक्त । जब-जब आन्दोलन होता है, पहली कतार मे ही पहुँच जाते है । लाखपति आदमी, तो भी उन्हे बी० डिवीजन में ही रखा गया है । जब यहा पहुँचे, हमारे वार्ड मे ही उन्हें भेजा गया । आते ही कहने लगे, बडा अनर्थ है, ससुरो ने जेलगेट पर पूरी नगाझोरी की है । लेकिन, क्या करेगे साले ? इस सुथने मे ही 'कुछ' लपेट-सपेटकर ले ही आया हूँ । फिर मुस्कराते हुए कहा—यह कोई बुरा काम नही है, जेल बिना तिकडम के नही कटता, हम लोग क्या गांधी बाबा हैं । यह कहकर पूरी बतीसी चमका दी ।

खैर, 'कुछ' ले तो आये, लेकिन उसका उपयोग क्या ? बी० डिवीजन को तो सरकारी राशन पर ही रहना है । किंतु साहूजी ने इसके लिए भी एक दिन रास्ता निकाल लिया ।

जब सुपरिन्टेन्डेन्ट आया, अपने कलेजे पर आह-ऊह करते हुए हाथ फेरने लगे। उसने पूछा, क्या शिकायत हैं। बोले, पुरानी बीमारी है, इसे हमेशा सेंक देनी होती है, गरमें पानी का ही प्रयोग करना पडता है, आदि-आदि। जब तक सुपरिन्टेन्डेट कुछ दवा बताये,सलाह दे दी—कुछ नहीं, एक दिन का चूल्हा, थोड़ा कोयला और एक पानी औटने का बर्तन भेज दीजिए, फिर हम सेंक-साक कर लिया करेंगे। वह चकमे में आ गया और ज्यों ही चूल्हा आया, साहूजी का अखंड जलपान-यज्ञ शुरू हो गया। खाने से भी अधिक खिलाने का शौक! मैं बीमारी से उठा हूँ, मुझ पर तो खास मेहरबानी। भोर-भोर गरमागरम हलवा बनाकर कहते है, कलेजे पर यह जरा गरम पुलटिस रख लीजिए और एक कप दूध ले लीजिए, दिन भर मिजाज मस्त रहेगा।

एक दिन अजीब बात हुई। देखा, साहूजी अंगनाई के अमरूद के पेड़ के निकट ताबड़-तोड़ मिट्टी खोदते जा रहे हैं। क्या है साहूजी, मैने पूछा। रुआंसा होकर बोले—मार लिया किसी साले ने, मार लिया! साहूजी ने उसके निकट'कुछ' गाड़ रखा था, न-जाने किस की बुरी नजर पड़ी। मैने समझा, अब सारा खेल खत्म हुआ, लेकिन ऐसा कहते ही साहूजी की आंखे चमक उठी—बबुआ, बनिए का बेटा इतना कच्चा सौदा नही करता। साहू जी का यज्ञ अखंड चलता रहा, चलता रहा!

किन्तु अफसोस, उस यज्ञ की हवि सदा पाने का मेरा ही

सौभाग्य समाप्त हो गया। एक दिन खबर आई, मेरा डिवीजन भी तोड़ दिया गया है और मुझे तुरत ही कैम्प जेल भेजा जाने वाला है!

यहा के जीवन से मै भी ऊब उठा था। चूंकि बीमारी से उठा था, पथ्य के रूप मे बी० डिवीजन की सहूलियते ले रहा था, किन्तु सदा लगता था, मै आदर्श-भ्रष्ट हो रहा हूँ। मेरा कोई साथी भी यहा नही था, अम्बिका आदि सभी मित्र कैम्प जेल मे ही थे। पढ़ने-लिखने का भी कोई सिलसिला नही था। गीता कभी छुई नही थी, धार्मिक साहित्य देखकर ही मेरे मन में कुढ़न होती। इस तरह मेरी मानसिक भूख भी शान्त नही हो पाती थी। फिर एक ही जगह रहते-रहते और कुछ ही लोगों के चेहरे देखते-देखते मन ऊब उठा था! अतः इस समाचार को मैने वरदान ही की तरह लिया—यद्यपि मेरे हितैषी चाहते थे, मै कुछ और दिन यहा रह जाता, तो मेरी तन्दुरुस्ती के लिए अच्छा होता!

एक दिन पॉच वर्षो के लिए इस हजारीबाग की पथरीली दीवारो को सलाम करके पटना कैम्प जेल के लिए रवाना कर दिया गया!

कैम्प जेल

उसका सनकी सुपरिन्टेन्डेट कहा करता—पहले हिन्दुस्तान मे दो चीजे देखने की थी, हिमालय और ताजमहल। अब तीसरी चीज भी जुड गई है, वह है हमारा कैम्प जेल।

१६२०-३२ के आन्दोलन मे देश मे कई कैम्प जेल खुले। अन्य कैम्प जेलो के बारे मे मुझे जानकारी नही। पहले कह चुका हूँ, सब जेल एक-से होते है। लेकिन इस कैम्प जेल की कुछ विशेषताए थी, जिनमे सबसे बड़ी विशेषता थी, उसका यह सुपरिन्टेन्डेन्ट !

विचित्र आदमी था वह। वह कब क्या कर बैठेगा, कोई ठिकाना नही। कब तिकटी पर चढा देगा, हथकड़ी डाल देगा और कब पीठ सहलाएगा, दुलारेगा, जो भी आवश्यकता होगी, पूरी कर देगा—यह कहा नही जा सकता था !

सफाई से उसे विचित्र स्नेह था। इतने बड़े कैम्प जेल मे उसने ऐसी व्यवस्था कर रखी थी कि कही आप एक भी मक्खी और मच्छर नही पा सकते थे। पटना तो मच्छरों की

राजधानी है। उसी पटना के एक कोने में उसने एक ऐसी पुरी बना रखी थी, जहाँ मच्छर का नामनिशान भी नही था। और इसके लिए उसने जो प्रबन्ध किया था, वह महज मामूली था—जादू ही समझिये !

हर आदमी को वह 'जवान' कहकर पुकारता—चाहे कोई बूढा ही क्यो न हो ? इस जवान शब्द को जबान पर लेकर ही लोग कैम्प जेल से लौटते !

पटना से पश्चिम, फुलवाडी स्टेशन के निकट यह कैम्प जेल बनाया गया था। चारो ओर काँटो से घेर दिया गया था। कोई दीवार नही। काँटेदार तारो से इस प्रकार बैरीकेड बना दिया गया था कि कोई भाग नही सकता था। और भागता भी कौन ? यहाँ तो स्वेच्छा से लोग जेल आते थे। दीवारे नही होने के कारण बाहर के दृश्य लोग देखा करते। बाहर हल चल रहे हैं, ट्रेन जा रही है, मोटरे दौड़ रही है, अपने बैरिक मे बैठे-बैठे देखा कीजिये।

जब मुलाकाती आते, विचित्र दृश्य होता। मुलाकाती काँटे के घेरे के बाहर खडे है, आप भीतर है और बातचीत हो रही है। एक ही साथ दो-चार सौ कैदी मुलाकात कर रहे है। थोड़ी-थोड़ी दूर पर सिपाही खडे है कि कही कोई चीज उछाल-कर बाहर से भीतर या भीतर से बाहर फेक न दी जाए, बस !

आन्दोलन जब सघन हो चला था, साढे चार हजार क़ैदी इसमें रखे गये थे। यह आबादी आन्दोलन के रुख पर घटती-

बढ़ती रहती। प्रतिदिन कुछ लोग आते, कुछ लोग जाते। ससार के आवागमन का दृश्य यहां प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता।

काटो के अन्दर इस विस्तृत क्षेत्र मे लगभग सौ वार्ड बने थे। कुछ वार्डो मे रसोई होती, कुछ वार्डो को अस्पताल में परिणत किया गया था, दो वार्डो को सेल का रूप दे दिया गया था, बाकी मे हम राजबन्दी रहते ! एक वार्ड में चालीस-पचास कैदी रखे जाते थे।

ये वार्ड लोहे की चादरों से बने थे—चादरों की दीवारें, चादरो के छप्पर, चादरो के किवाड। खिडकियों के नाम पर जहाँ-तहाँ छोटे-छोटे छेद। गर्मियों मे ये चादरे इतनी तप जाती, कि वार्ड भट्टी बन जाते—तपिये, तड़पिये। जाडे मे इतनी ठडी हो जाती कि बाहर से भी अधिक इनके अन्दर जाडा लगता—ठिठुरिये, ठुड्डी हिलाइये या घुटनो में मुँह सटा-कर लम्बी राते काटिये। बरसात में तो और भी दुर्गत। गच तो बनाई नही गई थी, सिर्फ मिट्टी डाल दी गई थी। जब घनघोर वर्षा होती, मिट्टी नीचे की ओर धँसने लगती। जगह-जगह से पानी भी निकल आता। फिर दीवारो के छेदो से भी फुहारें आती। कहावत है, बरसात में सियारों की दुर्गत होती है—हम बरसात की रातो मे सियारो की ही तरह वार्ड मे इधर-उधर कोको-कॉकाँ किये करते !

कई वार साँप भी निकले थे, विच्छुओ की भी कमी नही थी। किन्तु इन सबके बावजूद लोग बड़े मग्न रहते। राज-बदियों की इतनी बड़ी जमात तो भाग्य से ही एकत्र होती है।

राजबंदी भी तरह-तरह के। प्रोफेसर अब्दुल बारी और बाबू रामदयालुसिंह जैसे लोग थे, तो लंगडों, बहरों और अंधो की भी कमी नही थी। सरकार पागल हो गई थी, और लोग पागल थे ही। अच्छी जोड़ी बनी थी—जिसके मन में खब्त हुई, झडा लेकर नारे लगाने लगा! तो दूसरी ओर जो भी मिला, उसे ही गिरफ्तार कर लिया गया, सजा दे दी गई। बहुत से लोग थे, जिन्होने अपना अंटसंट नाम बता दिया था। इतने लोग थे कि जेल-अधिकारी कहाँ तक पहचानते। जिन्हें छोटी सजा थी, वे खोजते फिरते ऐसी लम्बी सजावालों को जो घर जाना चाहे। 'क' के बदले 'ख' रिहा हो जाता—'ख' की सजा 'क' भुगत लेता।

बिहार के हर जिले के लोग आए थे, प्राय. एक जिले के लोग एक साथ रहते, किन्तु कुछ वार्ड 'इन्टरनेशनल' थे! ऐसा ही वार्ड था वार्ड न० २। कई जिलो के लोग उसमे थे, मैने उसीमे अपना अड्डा जमाया। अम्बिका, गगा, श्यामनन्दन, रामचन्द्र—मन के ही लोग थे। इस वार्ड के ठीक सामने सदर गेट था, जेल से निकलने और उसमे घुसने वालो की झलक घर बैठे ही हम पा जाते। और, बगल मे ही सेल वाला वार्ड था।—जहा कुछ लोग सदा बेडी-हथकडी झनझनाते रहते। जिस दिन सुपरिन्टेन्डेन्ट गश्त पर आता, सेल वाला वार्ड जरूर ही भर जाता।

कैम्प जेल मे गवैये थे, कवि थे, चित्रकार थे—कलाकारो ने भी अपने को देश के लिए अर्पित किया था! लोकगीत से

लेकर शास्त्रीय गीत की टाग तोड़ने वाले गवैये तक थे। प्राय: ही गवैयो की मजलिस जुटती—गला तो था ही, रही बात साज की ! सो ऐसे-ऐसे उस्ताद कि लोहे के तवे पर तबले का स्वर निकालते, नाक से ही सारगी बजा लेते, कुछ कटोरे इकट्ठे कर जलतरंग बना लेते ! कवियो की भी भरमार थी—बाबा नरसिह दास उनमें खूब जनप्रिय थे। कुछ हल्के-फुल्के कहकर लोगों को खूब हँसाते ! हमारे सरदार रामसिह अकाली जब खड़े हो जाते, तब उनकी जबान रुकने का ही नाम नहीं लेती। और चित्रकार मिट्टी के ढेले से, ईंट के टुकड़े से तरह-तरह के चित्र बात-की-बात मे बना देने वाले अपने हाथ का कमाल दिखाने से नही चूकते।

लफगों की कमी नही थी, तो रईसों की आबादी भी कम नही थी। उन रईसो के बाजाप्ता दरबारी थे, दरबार लगते थे। एक रईस दूसरे रईस के वार्ड में जाते, तो खातिरदारी की धूम मच जाती। पकौडे बने, चाय छनी, पान के बीड़े लगे। ये चीजे यहा कैसे पहुँची—मत पूछिये। हमारा सुपरिन्टेन्डेट कहा करता, खैरियत है कि हमारे वार्डर की जेब मे आदमी नही समा सकता, नही तो तुम लोग अपनी बीवियो को भी जेल मे बुला लेते।

तरह-तरह के सम्मेलनो की धूम थी। कवि-सम्मेलन, किसान-सम्मेलन, आर्यसमाज-सम्मेलन, ब्राह्मण-सम्मेलन—कौन-कौन सम्मेलन नही होते। किन्तु एक बार जो बेवक़ूफ़-सम्मेलन हुआ, उसने सारे सम्मेलनो को मात दे दी। कूड़ा-गाड़ी पर

बिठलाकर हमने सभापति का जुलूस निकाला, झाड़ुओं के चवर डुल रहे थे उन पर। इस सम्मेलन मे ऐलान किया—होशियार लोगो के चलते ही दुनिया रसातल की ओर जा है, एक मुट्ठी होने पर भी वे लोग हमे नचाया करते है। अतः दुनिया के बेवकूफो, सावधान! देखो, स्वराज्य आने वाला है, कही ये होशियार लोग गद्दी को कब्जे मे न कर ले! "बेवकूफ राज कायम करेंगे, इसके चलते जो कुछ हो"—इस नारे से सारा कैम्प जेल गूज उठा था।

दिन-ब-दिन का जीवन भी बडा ही रगीन था।

सबेरे ही वार्ड खुल जाते। वार्ड खुलते ही लोग पाखानों की तरफ टूटते, जिसमे साफ पाखाने मिल जायँ। कुछ लोग आदत से भी लाचार थे। एक पाखाने मे बैठा है, दूसरा मग लिए खडा है। कही-कही बाजाप्ता क्यू लग गया है। फिर पानी-कल के निकट भीड जमी—मग से मग टकरा रहे है। कोई नहा रहा है, कोई कपडे फीच रहा है। उसके बाद कोई पूजा पर बैठ गया, कोई टहलने निकला, किसीने आसन लगाया। कोई डड पेल रहा है, कोई कुश्ती खेल रहा है। कुछ एकड़ जमीन के अन्दर चार-पाच हजार लोगो की ये हलचले—ओहो, कैसी दिलचस्प लगती!

फिर जलपान आया—पारी-पारी से चना, मूगफली और चिउडा। चिउडे के लिए तो जेल-अधिकारियो से बाजाप्ता सघर्ष हो चुका था। "चना के बदले चिउड़ा लेगे · भगतसिंह का बदला लेगे।" यह अनोखा नारा था उसका! भगतसिंह

का बदला चिउड़े के रूप में।—आप हँसिये नहीं, जेल में आदमी का दिमाग बहुत कम काम करता है।

दिन मे भात-दाल तरकारी : रात मे रोटी-गुड़ तरकारी! मेरे ऐसे भी लोग थे, जो दोनो जून भात-दाल ही पसद करते। यो ही दोनो जून रोटी खाने वाले भी थे। यह आपस के प्रबंध से ठीक हो जाता। जिसे एकाध प्याज मिल जाता, वह बड़-भागी। कुछ लोग इसके लिए सदा तिकड़म में जुटे रहते। एक प्याज को महीन काटकर भात में सान लेते और थोड़ा-थोडा प्रसाद की तरह बॉटकर किस प्रेम से खाते! जेल में मामूली चीजों की कीमत भी कितनी बढ़ जाती है!

किसका तवा कितना साफ रहता है, किसके कपड़े कितने बगाबग होते हैं, चटनी का बन्दोबस्त कौन कर पाता है—इन छोटी-छोटी चीजों पर भी प्रतिद्वद्विता होती। कपड़े मे तो हमारा गगा सदा बाजी मार लेता। भोर से ही अपना भारी-भरकम बदन लिए वह नल के निकट कपड़ों को पटकता रहता। कभी-कभी मुझपर भी दया कर दिया करता।

मै स्वभावत. ही देर से उठता। तबतक पाखाने और नल पर की धक्कमधुक्की खत्म हो गई रहती। निश्चिन्त से नहा-धोकर चना-चबेना, जो कुछ बचा रहता, फाँकता। फिर लिखने-पढने बैठ जाता। अम्बिका एक ग्रंथ ले आया था—आधुनिक सामाजिक विचारधाराओ पर बड़े अच्छे ढंग से प्रकाश डाला गया था। सोशलिज्म, कम्यूनिज्म, फैसिज्म, डिमोक्रैसी आदि विषयो पर व्यौरे के साथ प्रामाणिक ढंग से

विचार किया गया था। उसमे कम्यूनिष्ट मैनिफेस्टो भी था, उसका अनुवाद किया। कुछ कहानिया भी लिखी–'कही धूप,कही छाया' मेरी पहली कहानी थी। 'चन्द्रगुप्त' पर एक नाटक लिखा, जिसे बडे शानदार ढग से वही खेला गया था। न-जाने उसकी प्रति कहा खो गई। एक जेलर से दोस्ती हो गई थी—उन्होने कागज और किताबों का अच्छा प्रवन्ध कर दिया था। मुझे जो चीजे चाहिये, उनके क्वार्टर मे पहुँचा दिया जाता, वह अवसर पाकर कभी पहुँचा देते। दुपहरिया के वाद मै अन्य वार्डो मे घूमता। हम लोगो ने विहार सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना कर रखी थी—वारी साहव उसके अध्यक्ष थे। मै वार्ड-वार्ड मे जाकर समाजवाद पर लोगो को समझाता। विहार मे समाजवाद की नीव कैम्प जेल मे ही पडी, दावे के साथ कह सकता हूँ।

कैम्प जेल मे ही बिहार की किसान-समस्या से अवगत हुआ। हर जिले के किसानो से मिलता, उनसे जमीदारी-जुल्मो के बारे मे पूछताछ करता और नोट तैयार करता जाता। इस सम्बन्ध की कुछ किताबे भी पढी। मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जमीदारी प्रथा का अन्त किये वगैर न तो बिहार को आर्थिक स्थिति सुधर सकती है, न यहा की जनता की सुख-समृद्धि मे वृद्धि हो सकती है। इस वार जब मै जेल से लौटा. किसान-सभा मे जबर्दस्त भाग लेने लगा। अपने लेखो और भाषणो के द्वारा जमीदारी प्रथा उठाये जाने के लिए घनघोर आन्दोलन करने लगा। जेल से लौटते ही

'बिहार के किसान' नामक एक विस्तृत लेख 'विशाल भारत' मे दिया और 'जमीदारी क्यों उठा दी जाय?' शीर्षक लेख 'प्रताप' में। एक युग तक मेरे ये दो लेख किसान-सभा के लिए दीपस्तम्भ का काम करते रहे।

रात होते ही कैम्प जेल मे जिन्दगी का एक नया पहलू शुरू होता। पहले प्रार्थना होती; फिर किसीका किसी विषय पर प्रवचन होता। प्रवचन के बाद कही व्याख्यानों की झड़ी लगती, कही गीत की कड़ी फूट पडती! कही बिरहा, कही बिदेशिया, कही लोरकाइन, कही आल्हा! मेरे बगल के वार्ड मे सारन जिले के लोग थे। एक लड़के का स्वर बहुत मीठा था। जब रात के सन्नाटे मे वह बिरहा और बिदेशिया की तान छोडता, किस सरस हृदय में तरगे नही उठने लगती! कही-कही से शास्त्रीय सगीत की ताना-रीरी भी सुनाई पडती। पीछे के वार्ड मे गया के बच्चा बाबू थे, पुराने रईस, शास्त्रीय सगीत के शौकीन! जब-तब वह भी गा उठते—समा बँध जाता!

मेरे वार्ड मे एक स्वामी जी थे, बोलने का उनको रोग था। जब हम लोग सोने का उपक्रम करते, स्वामी जी से हम बोलने का आग्रह करते। स्वामी जी तो सदा तैयार! वह उठकर खड़े हो जाते! हम लोग रोशनी गुल कर देते, स्वामी जी बोलना शुरू करते। न जाने वह कबतक बोलते जाते—हम तो नीद मे खुर्राटे लेते होते।

कैम्प जेल—वह एक ही साथ चिडियाघर और अजायबघर

था। तरह-तरह के जानवर : तरह-तरह के लोग ! यहाँ दीवारे नही थी, हाँ, कभी-कभी नीद टूटती, तो बगल के सेलवार्ड से जजीरो की आवाज अवश्य सुनाई पडती, जब हाथ-पैर जकडा हमारा ही कोई साथी करवटे वदलता होता।

वह संध्या !

ऊपर से हम अपने को भुलाने के लिए जो भी खेल-खिलवाड़ रच लेते हों, गा-बजा लेते हो, किन्तु इस कैम्प जेल मे भीतर-भीतर पुराने घाव की तरह कुछ बह रहा है, कुछ सड रहा है। कभी-कभी उसकी दुर्गन्ध से नाक फटने लगती है।

सुपरिन्टेन्डेट बहुत मुस्तैदी दिखाता है, हमे मच्छरों और मक्खियो से बचाता है, सफाई पर बहुत ध्यान रखता है, रोगियो के लिए यथासम्भव प्रबन्ध करता है, खाने-पीने पर भी देखभाल रखता है। किन्तु जहां चार-पांच हजार आदमी हो और उन्हे इस तरह लोहे की चादरों के घरो मे रखा जाए, लाख कोशिश करने पर भी भोजन, पानी, हवा को दूषित होने से कौन बचा सकता है ? सी० क्लास के भोजन के आदी कितने लोग थे ? गोरस का पूरा अभाव। नतीजा यह हुआ कि बीमारियो की संख्या दिन-दिन बढने लगी, अस्पताल मे रेलपेल मची। अस्पताल भी कैसा—कोई विशेष दवा-दारू या पथ्य का प्रबन्ध नही। कुछ ही दिनों मे लोग मरने भी

लगे। कोई सप्ताह ऐसा नहीं जाता, जब कुछ अर्थियाँ इस गेट से बाहर नही जाती।

पहले कुछ लोग मरे, तो बड़े सम्मान के साथ हमने उनकी अर्थिया बाहर जाने दी, किन्तु जब यह आये-दिन का व्यापार हुआ, तो फिर कहा तक फूल-आरती-चन्दन सजोये जाए। यही नही, प्रत्येक मृत्यु जीवित लोगो के मन मे दहशत पैदा करने लगी।

डिसेन्टरी के मारे तो आधे लोग परीशान थे। रात चार बजे से भोजन बनने लगता, तो बारह बजते-बजते उस भोजन की क्या दुर्गत हो जाती रहती होगी, कल्पना कीजिए! फिर बारह बजे से जो बनना शुरू होता, तो सात बजे संध्या तक उसकी दुर्गत हो जाती। उस अधपके, बासी, बेस्वाद भोजन पर दो-चार महीने हँसी-खुशी मे काट दिए जा सकते थे, किंतु साल-दो साल मे तो फौलाद की अतडिया भी खराब हो जा सकती थी! और डिसेन्टरी की दवा क्या—घोल पीजिए या साबूदाने की लपसी चाटा कीजिए। घोल—जिसका दही सड चुका हो! लपसी—जिससे अजब ढग की बदबू आती! न्यूमोनिया, टायफायड का भी दौरा चलने लगा। गर्मियो मे कुछ मृत्युए लू के कारण भी हुई।

उधर आन्दोलन की गति धीमी हुई, तो जेल की सख्तियाँ भी बढने लगी। ऐसा करो, वैसा करो। चक्की पीसो, नही तो भोजन मे रोटी नही मिलेगी। अमुक समय वार्ड से मत निकलो; रात मे शोर मत मचाओ। खाना-तलाशी के लिए

समय-कुसमय वार्डों पर धावे होने लगे और जिनके पास कोई अवैध चीज मिली—कोई पुस्तक, कागज, ब्लेड, एकाध प्याज या लालमिर्च—तुरत उसे हथकड़ी-बेड़ी पहनाकर सेलवार्ड मे भेज दिया जाता। जिस दिन सुपरिन्टेन्डेट मुआइने मे आता, हगामा मच जाता। हर आदमी सोचता, न जाने आज किसके सिर वज्र गिरेगा!—सनकी वह, कोई कैफियत तो सुनने वाला नही था, जिसको पाया, सेलवार्ड की तरफ सीधे मार्च करा दिया।

सबसे बुरी बात यह हुई कि उसने वहां पहुंच गए कुछ नेताओ से सम्पर्क स्थापित कर लिया और उन पर उसका जादू भी चल गया। जब लोग विरोध में आवाज उठाते, नेता लोग उसका समर्थन करते—बेचारा क्या करे, सरकार ने उसके भी हाथ-पॉव बांध रखे है, यह तो बड़ा भला आदमी है! नेताओ के ये तर्क जले पर नमक का काम करते। कैदियों के सामने तो सरकार का मूर्त्त रूप यह सुपरिन्टेन्डेट ही था। किसने इसको कहा था कि अपने हाथपाव बंधवा लो। हम मर रहे हैं, रोगो से छटपटा रहे है और इसे जेल की डिस्प्लिन सूझी है! जब बिस्तरे पर पैर रगड़-रगड़कर ही मरना है, तो इसकी भलमनसाहत से हमें क्या फायदा? ऐसा हुआ कि नेताओ और उनके अनुयायियों के बीच दीवार खडी हो गई। कुछ नेताओ के लिए उसने भोजन-दवा आदि का खास प्रबन्ध कर दिया था, लोगों ने मान लिया, हमारे

नेता एक पाव दूध, दो अडे और विटामिन की चार गोलियों पर बिक गए।

एक दिन मै किसी वार्ड से लौट रहा था, देखा, एक नेता जी की गर्दन मे जेल की अंगोछी लपेटकर दो आदमी उनकी दुर्गत करने पर तुले है। मुझे देखते वे सहम गए, नेता जी की जान मे जान आई।

ऊट की पीठ का आखिरी तिनका हुआ, यह हुक्म कि अब कैदियो को सूर्यास्त के पहले ही अपने वार्डो मे बद हो जाना पडेगा। अब तक आठ-नौ बजे तक हम बाहर टहलते-घूमते रहते थे। वार्ड बन्द होते-होते दस बज जाते थे, थके-थकाये हम सो गये। शाम के ये तीन-चार घण्टे उस अन्ध-गुफा मे किस तरह हम काट सकेंगे। वार्ड के अन्दर पाखाने और पेशाबखाने की कोई समुचित व्यवस्था नही थी। इतनी देर तक उसके भीतर रहने के कारण तो हम दुर्गन्ध से ही मर जाएगे।

एक रात एक विचित्र घटना हो चुकी थी। भोजन मे न जाने क्या हो गया था कि ज्यो ही वार्डबन्दी हुई, लोगो के पेट गुडगुड-गडगड करने लगे। हर आदमी ने समझा, मेरे ही पेट मे कुछ गडबड है—आखे मूँदकर सोने की चेष्टा करने लगा। किन्तु, यह छलावा कितनी देर तक ? हमने नियम बना रखा था, रात मे वार्ड मे कोई पखाने का इस्तेमाल, जहा तक सम्भव हो, नही करे। उस रात इस नियम के बावजूद, एक-एक कर लोग उठते और पॉव सम्हालते पाखाना जाते। किन्तु

यह लुकाचोरी कब तक ? हर वार्ड में कुहराम मच गया—दुर्गन्ध के मारे नाक फटने लगी। तब लोग अपने-अपने तवों से लोहे की दीवारे पीटने लगे। एक वार्ड से यह तवा-पीटन-काड शुरू हुआ, तो कोने-कोने मे फैल गया। शोर सुन-कर जेल-अधिकारी दौडे। वार्ड खोले गए। बाहर के पाखाने मे भी उतनी जगह कहां ? जगह-जगह गड्डे खोद दिए गए। पानी का कल चालू किया गया। दवाये दी जाने लगी। रात-भर यह सिलसिला रहा ! खैरियत यही हुई कि कोई मरा नही। जेल मे मुश्किल से बीस-तीस आदमी होगे, जो इससे बचे होगे। आश्चर्य, उनमे एक मै भी था।

और, अब जब सूर्यास्त से पहले ही हम बंद कर दिये जायेगे, तो क्या होगा ? क्या लोहे की चादरो का घर प्रतिदिन कुम्भीपाक नही बन जायगा, जिसमे हम सडते रहेगे, दुर्गन्ध मे मरते रहेगे।

चार-साढे चार हजार बन्दियों में हलचल मची थी। वार्ड-वार्ड में सभा होने लगी। सब ने तय किया, हम यह सब अब अधिक दिनो तक बर्दाश्त नही करेगे। हमने अपनी मागो की फहरिश्त बनाई—वार्डो मे खिड़कियाँ, पक्की गच, पाखाने-पेशाब की पक्की व्यवस्था की मांग, भोजन मे अधिक सब्जी और दही-दूध की माग, अस्पताल में फल, दूध, दवा, डाक्टरों की सख्या मे वृद्धि की मांग, पढ़ने के लिए पुस्तकालय और अखबारो की मांग, मुलाकात के समय निकट से बाते करने के प्रबन्ध की माग आदि-आदि। उन मागो के लिए हम लड़ेगे,

लड़ने के लिए एक युद्ध-समिति वनी, मैं उस समिति का अध्यक्ष चुना गया। जेल-अधिकारियो के पास मागो की लिस्ट भेज दी गई। इस माग पर सुपरिन्टेन्डेन्ट आगवबूला हो गया, वह हमारी सामूहिक मांग पर विचार कर नही सकता, कैदियों का क्या सगठन ''जिसे कहना हो, व्यक्तिगत रूप से कहे।

युद्ध का रूप क्या हो ? वस, हम सूर्यास्त के पहले वन्द होने की हुक्मअदूली करेगे। कुछ लोगो ने अनशन करने का सुझाव दिया, मैंने उनकी मुखालफत की। मैने प्राय देखा है, अनशन से मामला सुलझता नही, उलझता ही है। जव फैसला करना है, तो तुरन्त फैसला जिससे हो जाय, उस रास्ते को अपनाओ। वार्ड मे बन्द होने से इन्कार करना जेल का सवसे बडा अपराध है—जेल-अधिकारियो के शव्द मे, यह 'म्यूटनी' है, वगावत है। हम वगावत का ही रास्ता पकडेगे। लाठी-चार्ज होगे, गोलियाँ चलेगी। जो होना ही है होगा। पैर रगड़-रगड़कर मरने से गोली की मौत कही अच्छी। दो-चार-दस मरेंगे—फैसला हो जाएगा। पचासो लाशे निकल चुकी है, एकाध दर्जन और निकले—खून से लथपथ।

सुपरिन्टेन्डेन्ट साम-दाम-दड-भेद सव नीतियो का प्रयोग कर थक गया। अन्तत जिस दिन से सूर्यास्त के पहले वद होना था, उस दिन उसने जेल को युद्ध-शिविर के रूप मे परिणत कर दिया।

भोर से ही कैदियो को इधर-उधर जाने से रोक दिया गया। हर मोड पर सिपाहियो को लट्ठ लेकर खडा कर दिया

गया। दोपहर के बाद दानापुर से फौज के नौजवानों को बुलाकर काटो के उस पार जेल के चारों ओर कतार में खडा कर दिया गया। उनकी बंदूको की सगीनें चमकने लगी। आज कुछ होकर रहेगा, सबने निश्चित रूप से मान लिया।

मेरा वार्ड ठीक गेट के सामने था। जो कुछ होगा, उसकी शुरूआत मेरे ही वार्ड से होगी। मेरे वार्ड के सामने ही जेल-अधिकारियो के क्वार्टर थे। उन क्वार्टरो की खिडकियों से कुछ मासूम आंखे हम लोगों की ओर करुण दृष्टि से देखती। बच्चे बरामदों पर खडे कभी हम लोगों की ओर, कभी उन चमकती सगीनो की ओर भय से, आश्चर्य से देखते।

आज भोजन सबेरे ही आया। भाई, आज स्नेह से अन्न-देवता को ग्रहण करो, न-जाने, ईसा की तरह, किस-किस के लिए यह 'लास्ट सपर'—अन्तिम रात का भोजन हो। खा-पीकर हमने प्रार्थना कर ली और फिर वार्ड के बाहर कतार मे बैठ गये। पहले तय हो चुका था, ज्योंही सिपाही हमें उठाकर वार्डों मे ले जाना चाहें, हम एक दूसरे की बाहो को इस तरह पकड़ लेगे कि वे इसमे सफल न हो सके। मरना है, तो साथ ही मरें।

वार्डवदी की घटी बजते ही जमादार वार्डरो के साथ पधारा और हम से वद होने को कहा। हमने इन्कार किया। जमादार इसकी रिपोर्ट करने को चला, वार्डर खड़े रहे। वार्डरो की आँखें क्या कह रही है? जेल-अधिकारियो को भी इन

वार्डरो पर कहा विश्वास है ? यदि विश्वास होता, तो फौजी जवान क्यों बुलाए जाते ?

सुपरिन्टेन्डेन्ड जेल से बाहर था , हम उत्सुकता से जेलगेट को देख रहे है। किन्तु, वहा कोई हलचल नही। तूफान के पहले की निस्तब्धता हम अनुभव कर रहे है। धुँधलका क्षण-क्षण सघन होता जा रहा है। मौत और जिन्दगी के बीच की रेखा क्षीणतर हो रही है!

दिमाग मे तरह-तरह के विचार उठ रहे हैं। हृदय में तरह-तरह की भावनाये तरंगे ले रही है। आंखो के सामने तरह-तरह की तस्वीरे बन रही है, बिगड रही है! सामने खडे फौजी जवान वही से गोली चलायेगे। हममे से कई ढेर हो जाएगे, कुछ की लाशे तड़पेंगी, कुछ के मुंह से चीखे नि लेगी। कुछ पत्नियां विधवा होगी, कुछ माताए निपूती वनेगी, कुछ वच्चे अनाथ होगे, कुछ बापों का बुढापा दूभर बन जाएगा। तुरन्त मै बेनीपुर पहुंच जाता हू—अरे, रानी की यह दशा। किन्तु दिमाग़ कहता है मूर्ख, तूने क्या सोचकर इस रास्ते पर कदम रखा ? मौत को कौन रोक सकता है ? जीवन को कौन रौद सकता है ? यदि मरना लिखा है, तो अस्पताल की मौत से तो यह रणभूमि की मौत कही श्रेयस्कर! दवा की बेकार गोलियों से रायफलो की ये गोलिया कही अधिक शान्तिदायिनी होगी!

कि, जेलगेट पर टनटन की आवाज—यह घटा सुपरिन्टेन्डेन्ट की अवाई की सूचना मे बजा है। सब की नजरे

उस ओर। सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल में प्रवेश करता है और सीधे हमारे वार्ड मे आ जाता है।

—गंगा, गंगा, यह क्या हो रहा है? गंगा कहता है—जो कुछ पूछना हो, बेनीपुरी से पूछिए। पहले से तय था, जिससे भी जेल-अधिकारी पूछेंगे, सब लोग मेरा ही नाम बताएंगे। युद्ध में एक ही सेनापति होता है न? बेनीपुरी,—चिल्लाता हुआ वह मेरे पास आ जाता है और अपने पूर्व स्वभाव के अनुसार, मुझे झकझोर देता है। बद हो जाओ—देखो, इतने लोगों की जान लेने का पाप अपने सिर मत लो। देखो, उन फौजी जवानो को देखो, मैने हुक्म दिया कि उन्होने गोलिया चलाईं! मैने स्थिरता से सिर्फ यह कह दिया—हमारी मागे जब तक मजूर नही होगी, हम बंद नही होगे!

माग, माग की ऐसी-तैसी, बंद होना होगा—वार्डर, इन्हे बद करो। वार्डर मेरी बाह पकड़ते है, किन्तु यहां तो चालीस बाहों की जजीर बन चुकी है। अच्छा हम देखेंगे—कहकर सुपरिन्टेन्डेन्ट तमककर चल देता है। उसी के साथ जमादार और वार्डर भी चल देते है।

हा, गोलियों के लिए जमीन खाली कर दी गई। अब हम उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। थोड़ी देर में सुपरिंटेन्डेट को जेल-गेट से बाहर जाते देखते हैं। अब गोलिया चलेगी ही, शायद उसकी रस्म-अदायगी हो रही है।

किन्तु, अरे, यह क्या? जेलगेट पर कुछ गांधी-टोपिया बिजली के प्रकाश मे जगमगा उठी। वे कौन है? हम यही

से पहचानने की कोशिश मे है। श्रौर थोडी देर में ही यह खबर कि उन आगत अतिथियों के आग्रह पर एक जिले के वार्ड बद हो चुके। तो इसीलिए ये आए है। ये गद्दार! गद्दार!! गाधी बावा, काश तुम जान पाते, तुम्हारे नाम पर कुछ लोग क्या-क्या करते-कराते है? हमारे गुस्से का क्या कहना?

एक नायब जेलर आए, आपको गुमटी पर अमुक बाबू बुला रहे है। जाओ, उनसे कह दो, मै नही जाता। पहले सभी वार्ड बद करवा ले, तब हमसे बाते करें। किन्तु कुछ मित्रो की राय हुई—नही, तुम्हे जाना चाहिए, कम से कम अपनी माग श्रौर विरोध तो कह दो, न-जाने लोगो ने क्या-क्या कहा हो।

गुमटी पर राउण्ड-टेबुल कान्फ्रेंस। आप लोगो की सब मागे जायज़ है। जो जेल-अधिकारी कर सकते है, कल से ही शुरू कर देंगे। जो सरकार को करना है, हम उसके लिए दबाव डालेंगे, श्रौर विश्वास रखिए, हम तब तक चैन नही लेंगे, जब तक कि वे पूरी नही कर दी जाएं। इसकी अवधि क्या रहेगी—बस, दो-तीन सप्ताह!

श्रौर वह दो-तीन सप्ताह कभी पूरे नही हुए। हा, शहादत का एक मौका हमपर व्यग्य कसता हुआ चला गया—

यह रुत्बए बलद मिला जिसको, मिल गया,
हर मुद्दई के वास्ते दारोरसन कहा?

आचार्य

यह रामदयालु बाबू की प्रतिभा का फल था कि कैम्प जेल में एक संगठन बन सका। जहाँ कैम्प जेल मे बड़े-बड़े नेता बेभरम हुए, इज्जत खोई, वहाँ रामदयालु बाबू ही ऐसे थे, जिन्होने अपनी शान निभाई। वह न तो कभी सुपरिन्टेन्डेन्ट से मिलते, न अपने लिए जेल से कोई सुविधा ही माँगते। भक्त-प्रकृति के आदमी तो थे ही, चुपचाप कोई धार्मिक ग्रथ पढ़ते होते, या जो कोई उनके निकट पहुँचता, उससे धार्मिक बाते किया करते। जेल मे जो राजनीति चल रही थी, नेतृत्व के लिए होडाहोड़ी मची थी, उससे अपने को पूर्णतः पृथक् रखते।

जेल में जब बड़ी अव्यवस्था फैली, लोगों की तकलीफे बढ़ने लगी, तो उन्होने एक रचनात्मक संगठन बनाने के लिए प्रयत्न किया। हर जिले से चुनकर प्रतिनिधि आए, जिनसे एक जेल-कमेटी बनाई गई। इस जेल कमेटी ने खास-खास कामों के लिए एक-एक व्यक्ति पर जिम्मेवारी सौपी। गगा-

शरण इस कमेटी के अध्यक्ष चुने गए, मेरे जिम्मे शिक्षा का काम सौपा गया। सफाई के लिए, भोजन के लिए, व्यायाम के लिए, अस्पताल के लिए, अलग-अलग लोगो को जिम्मेदार चुना गया।

जेल मे एक नियमित राजवदी-महाविद्यालय खोल दिया गया, जिसका आचार्यत्व मुझे दिया गया था। मैने उस विद्यालय को सुचारु रूप से चलाने की कोशिश की। चार-पाच सौ लोग उसमे नियमित रूप से शिक्षा ग्रहण करते। बीसेक अध्यापक थे, जो भिन्न-भिन्न विपयो की शिक्षा देते। अक्षरारम्भ से लेकर सैद्धान्तिक विचारो तक के शिक्षण का प्रवन्ध किया गया। विद्वानो की वहा कमी नही थी, अत जिस पर जिस विपय के अध्यापन का भार दिया गया, उसने वड़ी लगन और मुस्तैदी से अपना उत्तरदायित्व निवाहा।

जीवन मे पहली वार मैने अध्यापन का कार्य किया। उस समय विहार और उडीसा एक ही प्रदेश था। उडीसा के लोगो को हिन्दी पढाने के लिए मैने विशेष प्रवन्ध किया। हमारे उड़िया-भाई वडी लगन से पढते। मुझे आचार्य की पदवी उन्होने ही दे डाली। जव मेरे सामने मेरे उडिया-विद्यार्थी आते, वडे अदव से घुटनो के वल झुककर, चरण छूकर प्रणाम करते।

उनमे से एक विद्यार्थी को मै भूल नही सकता। अभी वच्चा ही था। एक इन्सपेक्टर-पुलिस का वेटा था, वाप से विद्रोहकर सत्याग्रही बना था। पढने की वडी धुन थी उसमे।

मेरे वार्ड में भी प्रायः आया करता—उसका गोरा, मासूम चेहरा, उसकी प्रेमल आखे, अभी भी नही भुलाई जा सकी है। इस बेचारे बच्चे की कैम्प जेल में ही मृत्यु हो गई ! बुखार हुआ, निमोनिया हो गया, दो-तीन दिन के अन्दर ही चल बसा ! जब तक उसका पिता खबर मिलने पर आवे, गंगा-किनारे उसकी अन्त्येष्ठि भी हो चुकी थी।

कैम्प जेल मे शहीद हो जाने वालो की मैने एक लिस्ट बनाई थी, उनका सक्षिप्त परिचय भी सकलित किया था। संयोग कि वह कागज कही खो गया। सोचता हूं क्या हम लोगो की अपनी सरकार का एक यह भी कर्त्तव्य नही है कि जेलों मे शहीद हो जाने वालो की सूची उन दिनों के कागजात से एकत्रकर सकलित कराए ?

खैर, मै अपने उस राजबन्दी-महाविद्यालय की बात कर रहा था। सयोग से सेठ नागरमल मोदी उसी जेल मे थे। हमने उनसे पुस्तक, स्लेट, कागज, पंसिल के लिए प्रार्थना की : उन्होने काफी संख्या मे अपने पैसे से मगवा दिए। हम लोगो के पास भी कुछ पुस्तके थी ही, उन्ही को एकत्रकर विद्यालय का एक अच्छा पुस्तकालय भी तैयार हो गया था।

भोर और शाम को तीन-तीन घटे के लिए क्लास बैठते। शिक्षक और विद्यार्थी समय पर आते, पढ़ते-लिखते। विद्यालय को सास्कृतिक कार्यो का भी केन्द्र बना दिया गया था। भिन्न-भिन्न विषयों पर व्याख्यानमालाए आयोजित की जाती थी। वाद-विवाद-प्रतियोगिता के भी आयोजन किए जाते थे। लोग बड़ी

संख्या मे आते । कैम्प जेल के जीवन मे इस विद्यालय ने अपने लिए एक खास स्थान बना लिया था ।

१६३०–३१ का आन्दोलन जन-आन्दोलन था । घोर देहात के बूढे, जवान, बच्चे राष्ट्रीयता की तरग मे बहकर वहां आ पहुचे थे । हमने अपने विद्यालय मे बहुत से बूढों को भी अक्षरारम्भ कराया था और थोडे ही दिनो मे उन्होने पढना-लिखना अच्छी तरह सीख लिया था । नौजवानो को तो यह सस्था बडी प्यारी थी । अब भी बिहार मे सफर करता हूं, तो यदाकदा उन लोगो से भेट हो जाया करती है, जिन्होने इस विद्यालय मे ज्ञानार्जन किया था । वे अब भी आचार्य की ही तरह मेरी आवभगत करते है । मैने अपने इस विद्यालय को दलबदी से सदा बचाने की कोशिश की, अत. इसे सबका स्नेह प्राप्त था ।

इस प्रकार मेरा जेल का जीवन सरल गति से समाप्त हो रहा था । इस विद्यालय ने मुझे बड़ी मानसिक शान्ति दे रखी थी । मेरा स्वास्थ्य भी मेरा साथ दे रहा था । मुझे कभी अस्पताल जाने की जरूरत नही पडी । नियमित रूप से आसन और व्यायाम करना मै नही भूलता था । रामदयालु बाबू ने ही आसन और सूर्यनमस्कार मे मुझे दीक्षित किया था । अब जब स्वास्थ्य कुछ धोखा-सा दे रहा है, कभी-कभी सोचता हूं, सूर्यनमस्कार और आसन फिर से प्रारम्भ करू ! किन्तु कई बीमारियों ने भीतर-ही-भीतर ऐसा दबोच रखा है कि हिम्मत नही होती ।

मुझे डेढ़ साल की सजा हुई थी—एक वर्ष की सजा और ढाई सौ रुपये जुर्माना, जिसे नही देने पर छः महीने की सजा और। जेल के नियमानुसार एक वर्ष में लगभग दो महीने की छूट मिल जानी चाहिए थी। जब दस महीने पूरे हो गए, तो मेरी रानी ने जुर्माने के रुपये जमा करवा दिए। उस बेचारी ने मुझे बीमारी मे ही जेल जाते देखा था, उसे दिन-रात मेरे जीवन की चिन्ता थी। इसके लिए उसे अपने गहने बेच देने पडे थे। तब से फिर उसके शरीर पर गहने नही चढे। किन्तु वह बेचारी क्या जानती थी कि उसे दो महीने और इन्तजार करने पड़ेगे। एक नायब जेलर ने एक दिन आकर मुझे सूचना दी, वार्डबदी के खिलाफ आन्दोलन करने के अपराध मे मेरी दो महीने की छूट रद्द कर दी गई है।

मेरे ससुर जी मुझे लेने को पटना आए थे, उन्हे निराश लौट जाना पड़ा। किन्तु मुझे इस घटना से विशेष हर्ष-विषाद नही हुआ। मैने सदा इसे खेल का एक अग माना है—जब मेरी पारी थी, जो कुछ हो सका मैने किया, अब तुम्हारी पारी है, तो मै क्यो शिकायत करूँ कि तुमने यह क्या किया?

मुझे दो महीने तक और भी अध्यापन का मौका मिल गया। हमारे देहात के ये भाई कितने अज्ञान मे थे और ज्ञान की कैसी तीव्र पिपासा उनमे जग गई थी। भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान का साधारण ज्ञान भी उनमे नही था। यह पृथ्वी क्या है, कैसे बनी, इस पर जीव कैसे आये, कैसे उनका विकास हुआ, मनुष्य का अवतार कैसे हुआ, कैसे

उसने उन्नति की,—आदि बाते सुनते समय उनकी उत्कठा जग जाती। फिर इस पृथ्वी पर अपना देश कहाँ है, क्या उस की विशेषता है, उसकी प्राचीन गरिमा कैसी थी, क्यों वह गुलाम हुआ और फिर किस प्रकार हम आजाद होंगे, उस आजादी का क्या नक्शा होगा—ये प्रसग उन्हे कितने रोचक लगते! पृथ्वी के अन्य देशों के लोगों की जानकारी की भी उनमे उत्सुकता थी और विज्ञान के करिस्मो की कथा सुनते हुए वे अघाते नही थे। हिसाब-किताब की ओर भी उनकी रुचि थी। बडे-बूढे सिलेट पर कुछ लिख रहे है, बिना पढा आदमी अब अपने हाथ से लिखकर घर पर चिट्ठी भेज रहा है, नौजवान लोग आधुनिकतम ज्ञान मे गोते लगाने मे तल्लीन है, हा बच्चे कुछ डरते है। अभी उस दिन दो बच्चे इस ओर आ रहे थे। एक ने कहा, उस ओर मत जाओ, बेनीपुरी पकड़कर पढा देगा।

आज भी देहातो की तो वही अवस्था है। बच्चो के पढाने का तो प्रबध है, किन्तु वयस्क शिक्षा की तो कागजी कार्रवाई ही चला करती है। क्या यह अच्छा नही होगा कि कुछ चलते-फिरते विद्यालय खोले जाए। शिक्षको का एक दल शिक्षा के साधनो से लैस होकर एक-एक गाव मे जाय, यहाँ चार-छ महीने रहकर अक्षरज्ञान के साथ विज्ञान, इतिहास, भूगोल, स्वास्थ्य आदि की कामचलाऊ जानकारी गाववालो को देकर आगे बढ़ता जाए। शिक्षको की ऐसी सेना तैयार करने से शिक्षितो की बेकारी की समस्या भी हल हो जायगी। मेरा

दृढ़ विश्वास है, हमारे देहात के भाइयों में ज्ञान के लिए बड़ी तीव्र पिपासा है। आवश्यकता यह है कि हम शिक्षण की कोई ऐसी प्रणाली निकाले, जिसके द्वारा अपने कामकाज में लगे हुए भी फुर्सत के समय वे ज्ञान की उपलब्धि कर सके।

दो महीने भी जैसे-तैसे बीत गए, मेरे शिष्यो की राय ली जाती, तो मेरी सजा बढ़ा देने की ही शिफारिश करते। कैम्प जेल से मै किस स्नेह और श्रद्धा के साथ विदा किया गया! किन्तु जब मै जेल-गेट से बाहर होकर सुपरिन्टेन्डेंट के आफिस मे आखिरी रस्मअदाई के लिए आया, तो उसने कडककर कहा—देखो, फिर इस जेल मे मत आना, मै तुम्हे पूर्णिया भेज दूगा। पूर्णिया—जहा अफसरों की भी बदली होती, तो वे समझते, उन्हे कालापानी भेजा जा रहा है।

वह बेचारा क्या जानता था, अभी कई बार मेरी-उसकी भेट होगी और अन्तत: वह मुझे पहचान सकेगा और मुझसे दोस्ती करने लगेगा।

नया विधान

चार वर्षों के विराम के बाद फिर मै दीवारों के अन्दर बद हू। दीवारे—गुमसुम। अभिशापो की तरह, काली ! काली, कठोर, अलघ्य ! चीखते रहो, कराहते रहो, तुम्हारे लिए दिशाओ के द्वार वन्द हो गए !

अभी एक घंटा पहले हम कहा थे ? इस समय कहां है ?

१६३७, पहली अप्रील। आज ही भारत मे नए विधान का श्रीगणेश हुआ है, जो विधान तीन-तीन राउड-टेबल कान्फ्रेन्सो के वाद छ साल मे तैयार हुआ है, उसी विधान की धज्जिया कुछ क्षण पहले हम पटना की गली-गली मे उडा रहे थे !

इस विधान के अनुसार नया चुनाव हुआ। सात प्रान्तो मे कांग्रेस का वहुमत आया। किन्तु विधानत जब गवर्नर ने कांग्रेसदल के नेताओ का आह्वान मन्त्रिमडल बनाने के लिए किया, तो उन्होने अस्वीकार कर दिया। क्योकि इस विधान मे गवर्नरो को इतने अधिकार दिए गए थे कि जनता द्वारा चुने

गए मंत्रिमंडल को भी जब चाहें भंग कर दे सकते थे, उन्हे अपनी उंगलियों के इशारे पर नाचने को मजबूर कर सकते थे। महात्मा गांधी के नेतृत्व मे कांग्रेस ने तय किया है कि जब तक गवर्नर अपने विशेषाधिकार का प्रयोग नही किए जाने का आश्वासन नही दे, कांग्रेसजन मंत्रित्व की जिम्मेवारी नही स्वीकार करे।

गवर्नरों ने ऐसा आश्वासन देने से अस्वीकार किया, फलत. उन सात प्रान्तो मे अल्पमत का मन्त्रिमडल बनाया गया है, जिसने आज शासन का सूत्र अपने हाथों मे लिया है। बिहार मे मि० यूनुस की सरकार बनी है। मन्त्रिमण्डल क्या है—गवर्नर के हाथ का खिलौना! कही की ईंट, कही का रोड़ा-भानमती ने कुनबा जोड़ा!

मै पटना शहर काग्रेस कमेटी का अध्यक्ष था। हमने तय किया, हम इसका जबर्दस्त विरोध करेंगे, दिखला देंगे, इस मन्त्रिमडल को हम बर्दाश्त नही कर सकते!

एक सप्ताह से शहर की गली-गली मे सभाये हो रही थी—पहली अप्रील को ऐसी शानदार हड़ताल करो कि सड़कों पर कही एक चीटी भी चलती नही दिखाई पड़े। दिनभर हड़ताल, शाम को जुलूस, अन्त में सभा। सारा शहर हमारे साथ। जिन्हे उन्होने अपने वोट दिए, चुनाव जिताया, जो गद्दी के जायज हकदार थे, उन्हे उस पद से वंचित कर अंग्रेजी सरकार ने हम सबका एक ही साथ अपमान किया है। इस अपमान को हम पी नही जाएंगे। हड़ताल करो, ऐसी

शानदार हडताल कि पटना ने कभी नही देखी हो। और सचमुच आज ऐसी ही हडताल हुई है : प्रिंस आफ वेल्स के स्वागत-बहिष्कार के वाद पटना ने ऐसी हडताल कभी नही देखी थी!

किन्तु यह वददिमाग सरकार! कल अचानक इसने १४४ धारा के अनुसार हम पर एक नोटिस जारी कर दी—मुझपर, जयप्रकाश जी पर, तथा अन्य साथियो पर। पहली अप्रील को तुम हडताल कराने के लिए सडको पर मत निकलो, न जुलूस निकालो! क्या हम इस नोटिस को मान सकते थे? यह नोटिस नही, यह तो चुनौती है—हमने चुनौती स्वीकार कर ली!

भोर से ही सडको पर घुडसवार पल्टन गश्त लगा रही है! वाह! नए विधान का कैसा अच्छा रूप। पटना के मुख्य बाजार मे मुसलमानो की अधिकांश दुकाने है। सरकार ने मि० यूनुस को गद्दी पर विठलाकर सोच रखा था, मुसलमान उसका साथ देगे। किन्तु उसका भ्रम दूर हुआ, जो लोग कुछ हिचक मे थे, इस घुडसवार पल्टन ने उनको भी फैसले पर मजबूर किया—हडताल, मुकम्मिल हडताल, शानदार हडताल! दानापुर से सिटी तक कही एक दुकान खुली नही! हमे किसी से जाकर कहने की जरूरत भी नही पड़ी!

अब जुलूस! यदि हम जुलूस निकालने की घोषणा कर दिए होते, हमें तुरन्त गिरफ्तार कर लिया गया होता! फिर क्या मजा? हमने सारा प्रबन्ध गुपचुप किया। कुर्ते के नीचे कमर

में झंडे खोंसे और हाथ में पतली-पतली छड़ी लिए हम लोग ठीक चार बजे पटना कालेज के निकट पहुंचे और पीपल के पेड़ के चबूतरे पर खड़े होकर झट झंडे को छड़ी में लगाकर उसे हिलाते हुए नारा दिया—इन्कलाब जिन्दाबाद : नया विधान तोड दो ! नारे सुनते ही पटना कालेज से विद्यार्थी निकल पड़े, इधर-उधर खडे नागरिक आ जुटे और वहां से जुलूस पश्चिम रुख अदालत की ओर चल पड़ा !

मुश्किल से दस आदमियो ने पहले नारे लगाए थे, चन्द मिनटों के अन्दर न-जाने कहा से लोग उमड आए। अस्पताल तक पहुंचते-पहुंचते तो चारों ओर नरमुंड-ही-नरमुंड थे ! सच्ची बात है, हमने भी ऐसे जन-सहयोग की कल्पना नही की थी।

मै बीच मे था; एक ओर जयप्रकाश जी, एक ओर बसावन ! मै नारे देता जाता था, लोग दुहराते जाते थे। सारा वायुमंडल प्रकम्पित हो रहा था। मैने चाहा था, जयप्रकाश जी ही इस जुलूस का नेतृत्व करे, किन्तु उन्होने पटना कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से, मुझे ही नेतृत्व करने की सलाह दी थी।

जब हमारा जुलूस मुरादपुर पहुंचा, उधर से पुलिस की लारिया आ पहुँची और हमे गिरफ्तार कर लिया गया। हमारी गिरफ्तारी और शहर मे जैसे दावानल फैल गया। जैसा कि जयप्रकाश जी ने अपने बयान मे कहा था—उस संध्या को नया विधान पटना की गलियो से पनाह मांगता फिर रहा था। जो जहां था, वही से उसने जुलूस निकाल दिया। आधी रात तक सारे शहर मे होहल्ला मचता रहा। कुछ लोग यूनूस

साहब की कोठी को घेर कर लगातार नारे लगा रहे थे—गद्दी छोड दो, नया निजाम तोड़ दो ।

गिरफ्तारकर हमें पीरबहोर थाने मे लाया गया । वहां राजेन्द्र बाबू हमसे मिलने आये । थाने से हमे सिटी जेल में लाकर रखा गया ।

अभी-अभी हम यहा आये है । कितना छोटा जेल है यह । कोई जेलर भी नही, बस जमादार ही सब कुछ । जमादार का होश उड़ा जा रहा है, ऐसे अतिथियो का वह किस प्रकार का आदर-सत्कार करे । वह जयप्रकाश जी के सामने दस्तबस्ता खडा है । जयप्रकाश जी उसे आश्वस्त करते है, आप हमारी चिन्ता न करे, अभी हम विचाराधीन कैदी है, हमारा प्रबन्ध बाहर से ही होगा । बस आप वार्ड आदि धुलवा दे ।

हर जेल से न-जाने एक कैसी गध निकलती रहती है । जितना ही छोटा जेल, उतनी ही तीखी गध । कितना धोया-धाया गया, गध के मारे उस रात नीद ठीक से नही आई ।

जयप्रकाश जी के साथ यह पहली बार जेल आने का मौका मिला था । १९२९ मे वह अमेरिका से लौटे थे, १९३० मे उनका कार्यक्षेत्र प्रयाग था, ३२ मे बम्बई । ३२ मे वह गिरफ्तार हुए थे मद्रास मे, रखे गये थे नासिक मे । ३४ मे बिहार मे काम करना शुरू किया । वह कॉंग्रेस-सोशलिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी थे, देश मे दौरे करते, किन्तु अपना हेड-क्वार्टर पटना ही रखा था और हम लोगो के साथ सोशलिस्ट पार्टी, किसान-सभा, मजदूर-सघ आन्दोलन मे सक्रिय भाग

ले रहे थे। अभी तक हमने नेता जयप्रकाश को ही मुख्यतः देखा था, यहां मानव जयप्रकाश का रूप निखरने लगा—अरे यह आदमी कितना स्नेही, कैसा साथी, किस कोटि का यार है। हाँ यार!

सिटी कोर्ट मे हमारा मुकदमा हुआ। मुकदमे को देखने राजेन्द्र बाबू, अनुग्रह बाबू, बलदेव बाबू आते। बलदेव बाबू की राय थी कि इस मुकदमे को बाजाप्ता लड़ा जाए, वह हमारे स्थायी वकील थे ही। किन्तु जयप्रकाश जी ने इस सलाह को सादर अस्वीकार कर दिया। हा, मुझे जिरह करने का आदेश किया। थोड़ी जिरह मे ही पुलिस-अफसरों के पैर उखड़ जाते—हमे मजा आता। सचमुच बलदेव बाबू ने पैरवी की होती, तो मुकदमा हवा मे उड़ जाता किन्तु हमने तो अपने को सत्याग्रही मान लिया था— गाँधी जी के सत्याग्रह-नियम के अनुसार चलना चाहते थे। पैरवी क्या, वकालत क्यों?

मेरी जिरह की वकील दोस्तों ने बड़ी तारीफ की। बचपन मे मै सोचा करता था कि वकालत करूंगा—वकील बनने की साध पहली और अन्तिम बार इस रूप मे पूरी हुई!

हमने दो बयान दिये। एक मैने, पटना शहर काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष के रूप मे, दूसरे जयप्रकाश जी ने, काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के अन्यतम नेता के रूप मे। जयप्रकाश जी का वह बयान इग्लैंड के पत्रों मे भी छपा था। यही नहीं, उनकी तस्वीर और पोस्टरो के साथ लदन की 'इण्डिया लीग' के द्वारा 'इण्डिया हाउस' के सामने प्रदर्शन भी किया गया था।

हमे तीन-तीन महीने की सजा हुई। सजा होने पर हम सिटी-जेल से जिला-जेल मे भेज दिये गये। उस दिन और भी कुछ लोगों को गिरफ्तार किया था, जिन्हे जिला-जेल मे ही रखा गया था। सभी साथियो से भेट हुई। कुछ दिन वहा जो कटे, कितने आनन्द मे। फिर हम चार व्यक्तियो को हजारीबाग जेल मे भेज दिया गया—जयप्रकाश जी को, मुझे, अब्दुल बाकी साहब को और फुलवारी के शाह साहब को। दो हिन्दू, दो मुसलमान—यूनुस साहब की मिनिस्ट्री ने एक ही झटके मे बिहार के दस प्रतिशत मुसलमानो को जेल भेजे जाने मे पचास प्रतिशत का रुतवा दे दिया।

हजारीबाग जेल मे हमे उस वार्ड मे रखा गया था, जहाँ खान अब्दुल गफ्फार खा और डा० खान साहब को रखा गया था। खान-बन्धुओ के लगाये वहुत से फूल के पौधे अभी जिन्दा थे। इस जेल की भूमि गुलाब और बेल के पौधो के लिए बड़ी ही अच्छी है। ऐसे गुलाब और इतने गुलाब शायद ही कहीं फूलते हो—एक ही डाल मे एक ही साथ दर्जन-दो-दर्जन गुलाब एक साथ फूलते हुए आप यही देख सकते है। बेले भी खूब आते है। तीन-चार वर्षो की असावधानी के कारण बहुत से पौधे उजड गये थे, कुछ अधमरे खडे थे। हमने सबसे पहले उन्ही पर ध्यान दिया। हजारीबाग मे जो इस समय जेलर थे, अयूब साहब, वे बडे ही शरीफ आदमी थे। सुपरिन्टेन्डेट भी बड़े ही नेक थे। उन्होने हम लोगो के साथ वडा ही अच्छा बर्ताव किया। खाने-पीने, रहने-सहने का पक्का बन्दोबस्त। हमारे

कहने पर कुछ कैदी इन फूलों को सीचने के लिए दे दिये। बेले और गुलाब का यही मौसम था। थोड़ी सिचाई और देखभाल से ही वे लहलहा उठे।

जब हम इस जेल मे ही थे, एक दिन यूनुस साहब पधारे। हमारे प्रान्त के मुख्यमन्त्री ने इतनी तो कृपा की कि जेल भेजकर भी हमारी सुध लेते रहे। जब वह आये, बाकी साहब ने उन्हे कुछ सख्त-सुस्त सुनाना चाहा, किन्तु जयप्रकाश जी ने उन्हे मना कर दिया। बस, शिष्टाचार के साधारण दो-चार शब्द—मुख्य मन्त्री सदलबल आये और चले गये।

सारी सुविधाए और तीन ही महीने तक रहना। किन्तु हजारीबाग तो हमारी इस जेल-यात्रा को अमर बना देना चाहता था। इस छोटे-से अर्से के दरम्यान दो ऐसी घटनाये हो गई, जिन्होने मेरी और जयप्रकाश जी की भावनाओ को इतना उभाड दिया कि मै तो उनका अनन्य अनुरक्त ही नही, भक्त बन गया। मीरा ने कहा है—अँखियन जल सीच-सीचि प्रेम-वेलि बोई। हम दोनों ने इतने आसू बहाये कि दुई की दीवार ढह गई, मैने अपने को उनके साथ विलीन कर दिया। आज लगता है, जैसे वह अलग खड़े है, मै अलग खड़ा हूँ, बीच-बीच मे ऐसे और भी अवसर आये है, किन्तु जहा तक मेरा अपना प्रश्न है—क्या चाह कर भी अपने को उनसे अलग रख सकता हूँ ?

अंसुअन जल सींचि-सींचि

हजारीबाग सेन्ट्रल जेल का इस बार का जीवन बडा ही दिलचस्प, काम-काजू और आनन्दप्रद था।

हम सवेरे ही उठते। शौच से निवृत्त होकर टलहने निकल जाते। खानबन्धुओ के टहलने के लिए छोकरा-किता के चारों ओर एक पगडडो बना दी गई थी। एक तरफ ऊंची, काली, कठोर, अलघ्य दीवारें—पत्थर की दूसरी ओर बेले की क्यारिया, जो इस मौसम मे कलियो और फ़ूलो से लदी थी। उनकी भीनी मीठी-मीठी सुगध। हम लंबे-लबे डग से, लबी साँसे लेते हुए टहलते, टहलने का वैज्ञानिक तरीका यही है न? खूब टहल लेने के बाद हम वार्ड मे आ जाते और उसके बरामदे पर व्यायाम शुरू कर देते। जयप्रकाश जी के पैर शरीर के अनुपात मे वहुत पतले थे, अपनी टाँगो पर उन्हे अफसोस था। अत ऐसी कसरतों पर वह विशेष ध्यान देते, जिनसे टाँगो पर कुछ गोश्त चढे, कुछ उभाड़ आए। यो ही उनके शरीर का छाती से ऊपर का हिस्सा आगे की ओर झुका हुआ

था । कहते थे, अमेरिका मे इसे सीधा करने के लिए वह स्प्रिग का भी इस्तेमाल कर चुके थे । कसरत मे, टहलने में, यहा तक कि बैठने मे भी वह इस पर ध्यान रखते । तेल की मालिश भी कसरत का एक अग था ।

कसरत के बाद हम लोग स्नान करते । बड़े प्रेम से स्नान करते—एक सेल को हमने स्नान-घर मे परिणत कर लिया था । साबुन लगा-लगाकर, तौलिये से मल-मल कर शरीर को इतना स्वच्छ कर लेते कि स्वय अपने शरीर पर गर्व होता ! फुर्सत और पानी की कमी थी नही । खूब चुभका कीजिए !

तब नाश्ता । जयप्रकाश जी को भोजन बनाने का कितना शौक है, यही देखा ! नाश्ते की सारी चीजे तैयार होतीं, तो भी झटपट एकाध चीज अपने हाथो बना ही लेते । नाश्ते के बाद कुछ पढना-लिखना । मैने इस छोटी-सी अवधि मे ही बच्चो के लिए दो-तीन पुस्तके लिख डाली । पढ़ना तो खूब ही होता—जयप्रकाश जी की सगति का लाभ तो उठाना ही था । अपनी बाजाप्ता शिक्षा के अभाव की पूर्ति का ध्यान जेल मे सदा ही रखता ।

भोजन तैयार होने से पहले जयप्रकाश फिर रसोईघर मे जाते और कोई नई चीज बना लेते । कभी-कभी तो वह अपना पूरा समय रसोईघर मे ही दे देते । 'ईटिंग अम्बुल पाई'—यह मुहावरा पढ रखा था । किन्तु यह 'पाई' क्या है, जयप्रकाश जी की ही कृपा से जाना । एक दिन सबजी में कुम्हड़ा आया, उसी की पाई बनाई उन्होने । उसके लिए एक

खास ढग का चूल्हा भी बनाना पड़ा । फिर तो पाई की कई किस्मे तैयार करते रहे । खिचड़ी, खीर, भात, रोटी—सबमें एक नयापन पैदा कर देना उनके बाये हाथ का खेल था । खिलाने का शौक अत्यधिक । अपने हाथो परोसते और भोजन करते समय बारीकियो पर ध्यान दिलाते । मेरी जीभ भोजन की बारीकियाँ ग्रहण करने मे सर्वथा असमर्थ रही है । एक दिन मैने उनसे कह भी दिया, आप किसे वारीकिया समझा रहे हैं—मेरे बाप-दादे मडुआ और अलुआ (गरीवो के भोजन) पर जीते रहे, मै उनका सपूत हलवा तक पहुंच गया, यही क्या बहुत नही है ? वह खूब हसे ! किन्तु हमारे दो मुसलमान दोस्त खाने के कद्रदान थे—खूब सराहते ! मै सिर्फ हाँ मिलाता जाता !

भोजन के बाद विश्राम : फिर चाय । कभी-कभी एकाध हाथ ताश जम जाता या शतरज की बिसात बिछ जाती । सध्या को बैडमिंटन के कोर्ट मे हम उतरते । मै खेलना तो जैसा-तैसा ही जानता था, उछलकूद में कोई कसर नही रखता उसके बाद फिर वही टहलना—बेले की कुछ कलियां भी चुन लेता, जिसे तश्तरी मे सजाकर पानी से तरकर रख देता, आधी रात को वे जब खिलती, तो वह गीत वरबस याद आ जाता—'बेला फूले आधी रात, गजरा केकरे गरे डारूँ !' भोर मे कुछ गुलाब के फूल तोडकर इन बेलो के साथ सजा दिये जाते—बीच मे गुलाब, चारो ओर वेले ! कुद के बीच कमल खिला है—कैसी अपूर्व शोभा ! तश्तरी मे थोड़ा पानी

रख देते, वह नन्हा-सा तालाब बन जाता।

रात को वार्डबन्दी के बाद कुछ गप्पे होती। शाह साहब सुनते कुछ कम थे, इसलिए 'किस्सा साढ़े तीन यार' को हम चरितार्थ करते। हम मे से हरएक को कुछ कहना पड़ता। उसी समय मैंने जयप्रकाश जी से उनके अमेरिका-प्रवास की घटनाएं खोद-खोदकर पूछ ली, जिन्हे उनके जीवनचरित मे मैंने इस्तेमाल किया। जयप्रकाश जी की प्रवास-कथा से उत्तेजित होकर बाकी साहब ने ईरान-प्रवास की कथा सुना दी—ऐसी-ऐसी बाते कही कि हम बाग-बाग हो रहे!

चिडिया पालने का हमे शौक हुआ। जेल के एकान्त मे चिडिये घोसले बनाने की बडी सुविधा पाती हैं। कभी-कभी घोसले से उनके बच्चे गिर जाते। मैंने एक कबूतर पाल लिया, शाह साहब ने एक बगला और जयप्रकाश जी ने एक गौरय्या। मेटरलिंक की एक पुस्तक मेरे पास थी, जिसका नायक था टिलटिल नामक एक बच्चा। इस गौरय्ये के बच्चे को हमने टिलटिल नाम दे रखा था। अहा! हम अपने पालतुओ को किस स्नेह से खिलाते, पिलाते, रखते, जयप्रकाश जी तो अपने टिलटिल को सदा हथेली पर लिए रहते।

एक रात हम सोए थे कि बगल के जामुन के पेड़ से अजीब आवाज़ आने लगी—बड़ी डरावनी। यह क्या हो सकता है? अजीब कराह थी उसमें, जो उस सन्नाटे मे रोंगटे खड़ी कर देती। हम लोग सब जग गए। थोड़ी देर मे आवाज़ बद हो गई। दूसरे दिन हमने वार्डरों से दरयाफ्त किया। एक पुराने

वार्डर ने बताया, वह कोई चिड़िया है, बडो अशुभ है , जब-जब वह बोलती है, कोई न कोई शोकजनक घटना होती है। कई कहानिया सुनाई उसने । मुझे बचपन की बात याद आ गई। एक प्रकार की चिडिया जब पेड़ों पर बोलती, तो लोग समझते, गांव मे महामारी होगी । हम दिन-भर ढेले लेकर उसे खोजते और गांव से बाहर करके ही दम लेते ।

और, यह लीजिए, एक दिन जयप्रकाश जी का टिलटिल मरा पाया गया ! शोक की घटना तो आ घटी । जयप्रकाश जी को वडा दु ख हुआ, हम भी उदास थे । काश, यदि यही तक रह जाती । अरे, यह तो शोक की शुरूआत थी ।

एक दिन गेट से बुलाहट हुई । प्रभावती जी आई थी, गंगाशरण आए थे । जयप्रकाश जी पहले चले गए, मै बाद मे गया । वहा गया, तो जाते ही गगाशरण से मैने अपने घर का हालचाल पूछा । इधर मेरे घर से एक भी पत्र नही आया था। मैंने कई पत्र लिखे थे । क्या बात है ? गगा ने कहा, मै तुम्हारे घर जाने वाला हूं । भला अब क्या होना था ? इधर-उधर की बाते होने लगी । स्वभावानुसार मे खूब हस रहा था, खिलखिला रहा था । पर मैंने अनुभव किया, जयप्रकाश जी कुछ उदास हो चले हैं। प्रभा जी तथा गगाशरण भी उखडे-उखडे लग रहे थे।

जब गेट से हम वापस आए, खाने-पीने के बाद, हम सांध्य भ्रमण को निकले । मै टहल रहा था कि देखा, जून की झुलस ने बेलो की कितनी ही कलियो को कुम्हला रखा है । मैने बाकी साहब से कहा—ओहो, इन कलियो को देखो—"हसरत इन

गुंचों पे है जो बेखिले कुम्हला गए ।"

मेरी इस बात से बाकी साहब सहमे । बोले—क्या बोल रहे हो बेनीपुरी ? मै और भी बोलता गया । वार्ड मे जाने के पहले जयप्रकाश जी ने चर्चा चलाई— न जाने क्या बात है, जब-जब मुलाकाती आते है, कोई बुरी खबर ही लाते है । इसके पहले जब प्रभावती जी आई थी, उन्होने बताया था, उनके किसी प्रियजन को टी० बी० हो जाने की आशका है । मैने समझा, ऐसी ही कोई बात होगी, जयप्रकाश जी के मन को हल्का करने के लिए मैने इधर-उधर की बाते चला दी । किन्तु इस तरह की आखमिचौनी कब तक ?

जब हम वार्ड मे बद हो गए, किस्से की बारी आई । आज मुझे ही कुछ कहना था । मैने एक मजेदार कहानी कहकर यारो को हसाना चाहा । किन्तु कोई हस नही रहा है । बनावटी हंसी होंठो तक आ-आकर टूक-टूक हो जाती है । अन्त मे बाकी साहब ने यह तिलस्म तोडा । उन्होने पूछा—बेनीपुरी, तुम्हारे कितने लडके है । मैने बताया, तीन । उनमे सबसे अधिक प्यारा कौन है ? कैसी बेवकूफी की बात करते हो, बाप के लिए सब बच्चे समान । लेकिन मझला लडका कुछ विचित्र प्रतिभा-शाली है । और मै कहूं कि वह नही रहा तो ' मैने हसने की चेष्टा करते हुए कहा—ऐसी बात मत कहो । अब जयप्रकाश जी उठे और हाथ मे एक पत्र रख दिया । यह पत्र मेरे चचेरे भाई का लिखा हुआ था और सचमुच उसमे मंझले लडके की दुखद मृत्यु का समाचार था ।

उफ, आज बीस वर्षों के बाद भी जब उस रात की अपनी स्थिति की कल्पना करता हू, रोम-रोम खडे हो रहे है, आखे तर हो रही है ! दो-तीन मिनट तक मै स्तब्ध रहा, फिर उस लडके की सूरत-शक्ल, प्रतिभा, सहज ज्ञान आदि की चर्चा करने लगा। मै चाहता था, नही रोऊ, जो हो चुका, उसके लिए रोना क्या ? मै अपने को भुलाना चाहता था। इतने मे अनुभव किया, जैसे समूचे शरीर का खून सिर की ओर दौड रहा है—मै मूर्च्छा का मरीज। झट मै बिछावन पर लेट गया और मसहरी गिरा दी। किन्तु यह क्या, लगा, जैसे हृदय का कोई सजीवन-सूत्र अचानक टूट गया ! और लीजिए—मै हिचकियो पर हिचकिया लेकर रो रहा हू ! आसुओ का ऐसा प्रवाह शुरू हुआ, जो सात दिनो तक रोके नही रुकता था !

मेरे सभी साथी सन्न ! जयप्रकाश जी की कुछ नही पूछिये। चुपचाप मेरे बिस्तरे की बगल मे आकर बैठते। जब कभी मै शौचादि के लिए बाहर जाता, सदा पीछे लगे रहते ! मुझे धीरज दिलाने को उन्होने आसुओ को रोक रखा है, किन्तु उनकी सुर्ख आखे, गीली बरौनिया, भर्राया चेहरा, मूक-मौन वृत्ति—ये सब डका पीट रहे है, कि—

शक न कर मेरी खुश्क आंखो पर,
यो भी आसू बहाए जाते है !

मै कह सकता हूं, अपने जीवन मे इस तरह शोक-विह्वल कभी नही हुआ था। उसके कई कारण थे। एक तो मै उस लड़के को बहुत प्यार करता था। बडा ही सुन्दर, भोला और

प्रतिभाशाली बच्चा था वह। विलक्षण उसकी वृत्ति और प्रवृत्ति थी। फिर, सयोगवश, उसके आगमन की सूचना १६३० मे इसी जेल मे मुझे मिली थी और यही उसके प्रयाण का समाचार सुनना पडा। यों तो वह भोला था, किन्तु कभी-कभी अजीब जिद कर बैठता। एक बार उसकी जिद से उत्तेजित होकर उसे एक चाटा जड़ दिया था। चाटा लगते ही उसके गोरे शरीर पर लाल ददोरे उग आए थे। लगता था, जैसे वह बार-बार मुझे उन ददोरो को दिखा रहा था। फिर जब रानी की याद आती, कलेजा मुह को आ जाता। वह बेचारी कैसे होगी? अभी विक्टर ह्यूगो का 'नाइनटी थ्री' समाप्त किया था। उसमें एक माता के रुदन का ऐसा मार्मिक वर्णन ह्यूगो ने किया है कि पत्थर का कलेजा भी पिघल जाय! मैं उस रुदन के आईने मे अपनी रानी की तस्वीर देखता! एक बात और! मुझे अपने सुकर्मो पर बड़ा विश्वास था, सोचता था, मुझे शोक कभी नही होगा—आज जैसे मेरा आत्माभिमान चूर-चूर हो गया! अरे, बडा जिन्दादिल बना था मै—वही मै किस तरह बिलख रहा हू—आत्मग्लानि से भी मै मरा जा रहा था।

एक विचित्र बात हुई। उस शोकाभिभूत दशा मे ही मैने उस बच्चे पर लिखना शुरू कर दिया। उसे हम 'गाधी' कह कर पुकारते थे। धीरे-धीरे एक 'गाधीनामा' तैयार हो गया। मेरा दिल कुछ हल्का हुआ। मैने मान लिया, कलम सिर्फ तलवार ही नही है, ढाल भी है! वह प्रहार ही नही करती,

बचाती भी है। मेरी कलम ने मुझे एक गाढे वक्त मे बचा लिया था, आज भी मै उसका अत्यन्त अनुगृहीत हूं!

उस दिन वह चिड़िया बोली थी, कहा गया था, उसका बोलना अशुभ है। हमने उस दिन उस कथन को मूढ धारणा समझा था; किन्तु कौन जानता था, सचमुच वह शोक का पैगाम देने आई थी!

किन्तु, यदि वह अशुभ सूचना इतने से भी पूरी हो जाती! एक दिन जयप्रकाश जी को गेट पर बुलाया गया। वहा से वह लौटे, तो सिर नीचा किए, अजब ढग से आए और कुर्सी पर बैठते ही उनकी आखो से लगातार आसू बहने लगे! अरे, यह क्या? उसके पीछे ही जमादार उनका सामान लेने आया, एक नायब जेलर भी साथ था। उसी से पता चला, जयप्रकाश जी के पिता की मृत्यु हो गई है, अभी ट्रक टेलीफोन आया था कि उन्हे रिहा कर दिया जाए! थोडी ही देर मे जयप्रकाश जी तो चले गए, मुझे अथाह शोक-सागर मे रख गए!

मै बार-बार सोचता, यह क्या हुआ? इन तीन महीनो मे ही ये दो-दो दुर्घटनाए! उनके पिता जी चल बसे, मेरा बेटा चल बसा। उनके प्रेमल पिता जी की बार-बार याद आती। नहर-विभाग मे एक मामूली कर्मचारी थे, तो भी बेटे को पढने के लिए अमेरिका भेजा—कर्ज किए, जमीन बेची। क्या-क्या न आशा लगाए हुए होगे, इस बेटे से। किन्तु, बेटे ने आकर ऐसा पथ पकडा जो पग-पग काटो से बिछा था। तो भी उन्हें

जरा भी विषाद नही हुआ, अपने बेटे की कीर्ति को देखकर वह फूले नही समा रहे थे। जब कभी हम उनके निकट जाते, अपने बेटे के साथी समझ, हम पर भी पुत्र-स्नेह उडेल देते ! बेचारे अन्त समय मे इस बेटे के लिए कितना छटपटाते होगे ! यह तो पीछे पता चला, उनकी मृत्यु जयप्रकाश जी के पहुंचने के बाद हुई ! जेल वाले सुनने मे थोड़ी गलती कर गए थे।

जयप्रकाश जी से मेरी तदात्मता इन शोक-घटनाओ के कारण हुई—सचमुच हमने आसुओ के जल से अपने मैत्रीभाव को अभिषिक्त किया !

मै तीन महीने की अवधि पूरी करके छोडा गया। मै जिस बस से हजारीबाग से लौट रहा था, वह एक स्थान पर ठहरी, तो पता चला, यूनुस साहब की मिनिस्ट्री खत्म हो चुकी है, आज श्रीबाबू गवर्नर से शासन-सूत्र लेने रांची जा रहे है। हमारी बस वही खड़ी थी कि श्रीबाबू की मोटर तिरंगा लहराती हुई वहा आई, मुझे देखकर उन्होने गाडी रुकवाई, कुशल पूछी ! मैने हंसते-हसते कहा,—मै बडा बदबख्त आदमी हू, तीन महीने की यूनुस की मिनिस्ट्री हुई, तो भी मुझे जेल मे ही रहना पडा, कही ऐसा न हो···। श्रीबाबू हस पडे, पटना मे मिलने को कहा, उनकी मोटर भागी, मेरा बस भी रवाना हुआ !

कौन जानता था, श्रीबाबू के राज्य में भी फिर मुझे इन जजीरो और दीवारो के दर्शन करने पड़ेगे ? अपना-अपना भाग्य !

हड़ताल

यदि हम चाहते हैं कि किसान और मजदूर राष्ट्रीय आन्दोलन मे भाग ले और उसकी सफलता के बाद देश में समाजवादी राज्य कायम हो तो हमे मजदूरो और किसानों के सगठन पर ध्यान देना होगा, उनके दिन-ब-दिन के संघर्ष मे सम्मिलित होना पडेगा, हमारी यह धारणा हो चुकी थी। विहार मे किसान-आन्दोलन तो बडे जोरो से चल रहा था, अब हमने मजदूरो के आन्दोलन और सगठन पर ध्यान दिया। सबसे पहले बसावन ने डालमिया नगर के मजदूरो को संघबद्ध किया और वहा एक शानदार हडताल चलाकर मजदूरों को जीत दिलवाई। मैं किसान-आन्दोलन मे अपना हिस्सा ले ही रहा था, अब मजदूरो की समस्या की ओर अनुरक्त हुआ।

'जनता' निकल चुकी थी, मैं उसका सम्पादक था। अत स्वभावत. ही मेरा कार्यक्षेत्र पटना से बाहर नही हो सकता था। किन्तु पटना कोई औद्योगिक शहर तो है नही। हा, तीन छोटी-छोटी मिले पटना सिटी मे चल रही थी, जिन

मे लगभग एक हजार मजदूर काम कर रहे थे। उन्ही मजदूरो मे काम शुरू किया गया और थोड़े ही दिनों मे एक अच्छी खासी यूनियन कायम हो गई—पटना सिटी मजदूर यूनियन के नाम से।

और जहा यूनियन बनी, हड़ताल अनिवार्य हो गई। हमारे पूंजीपति नही चाहते कि मजदूर सगठित हों, अतः ज्यो ही मजदूरों की यूनियन बनाइये, उसे तोडने की फिक्र में वे लग जाते है। अच्छे यूनियन-कार्यकर्ता को मिल से निकालने की तरकीबे वे सोचने लगते है। इधर ज्योही सगठन हुआ, मजदूरो मे अपने बल का अनुभव हुआ, अपने पर किये गये अन्यायो को दूर करने के लिए वे उतावले हो उठते है। इन दोनो ओर के खिचाव से हडताल अनिवार्य हो जाती है। एक बार की सफल हडताल के बाद ही स्वाभाविक सम्बन्ध स्थापित हो सकता है—यद्यपि देखा यह गया है कि हमारे देश मे हड़तालों की एक लम्बी कडी बनती ही जाती है। यहां के पूंजीपति अब तक इतने बुद्धिमान् नही हुए है कि मजदूर की उपयोगिता समझ सके।

हमारी यूनियन ने मागो की एक सूची बनाई और मिल-मालिको से उसकी पूर्ति के लिए अनुरोध किया। सूची देखते ही वे आग बबूला हो गये। बार-बार याद दिलाने पर भी उन्होने उस पर विचार करना उचित नही समझा। इधर मजदूरों का सगठन दृढ़ होता गया, यूनियन का बाजाप्ता आफिस खुल गया। वहा मजदूरो का अक्षरारम्भ से लेकर

मजदूर-सगठन के बुनियादी सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाने लगी। मजदूरो का एक वर्दीधारी स्वयसेवक जत्था भी तैयार कर लिया गया। वर्दी पहनते ही नौजवान मजदूरो मे जैसे नई जान आ गई। एक वाचनालय भी खोल दिया गया। मै वहाँ प्राय जाता, कामो की निगरानी करता, मजदूरों मे आत्मविश्वास भरने की कोशिश करता। थोड़े ही दिनों मे मजदूरो का जबर्दस्त सगठन बन गया। कई बार उन्होने जुलूस निकाले, मजदूरो के नारों से शहर गूँजने लगा। जुलूसों मे लाल वर्दीधारी मजदूर स्वयसेवको की उपस्थिति और भी शान बढा देती। कई सभायें हुईं, इन सभाओं ने शहर के नागरिकों की सहानुभूति मजदूरो के पक्ष मे कर दी। पूंजीपतियों की बेरुखी देखकर अन्तत. हडताल के लिए अल्टिमेटम भेज दिया गया।

और, एक दिन हडताल होकर रही। पहले एक ही मिल मे हडताल की गई। इससे सहूलियत यह रही थी कि बाकी दो मिलो मे काम करने वाले मजदूर अपने हडताली भाइयों की आर्थिक सहायता भी करते रहे। हडताल मुकम्मिल रही। हा, कुछ बाबू लोग दफ्तर मे जाते रहे। इंजीनियरिंग स्टाफ के लोग भी हिचक मे पड़े रहे। उन्हे कैसे रोका जाय; पिकेटिंग शुरू की गई।

कांग्रेसी मन्त्रिमंडल था। हमने समझा था, इस जायज हड़ताल की ओर मन्त्रिमंडल की स्वाभाविक सहानुभूति होगी। किन्तु यह क्या—एक दिन पुलिस ने जबर्दस्त लाठीचार्ज कर

दिया। मै जनता-आफिस मे था। घटनास्थल पर जोगेन्द्र शुक्ल जी थे। उनके साथ भी बदतमीजी की गई। शुक्ल जी तुरंत जेल से छूटकर आए थे; उन्ही को लेकर मन्त्रिमण्डल ने इस्तीफा तक दिया था। जब उनके साथ ऐसा सलूक, तो फिर दूसरों की क्या बात? लाठी-चार्ज के बाद पुलिस ने हड़ताली मजदूरों में से बहुत-से लोगों को बस मे चढ़ाकर शहर से बहुत दूर पर छोड़ दिया। संध्या का समय था। हड़तालियों में बहुत-सी मजदूरिने भी थी। उन्हें इस प्रकार शहर से दूर, सुनसान जगह मे छोड आना—न इसमें नैतिकता थी, न मानवता। सारा शहर खलबला उठा!

हम डेपुटेशन लेकर मुख्यमन्त्री से मिलने गए। दोपहर से प्रतीक्षा करते-करते अन्त मे संध्या को बुलाहट हुई। सयोग-वश पुलिस-सुपरिन्टेडेट मन्त्रिमण्डल के प्यारे लोगों मे थे। इन्ही सज्जन ने शुक्ल जी के मुकदमे मे एक प्रमुख अभियुक्त को मुखविर बनाने का यश लूटा था। न जाने उन्होने क्या-क्या कह रखा था, मुख्यमन्त्री भरे हुए थे। बातों ने ऐसा रुख लिया कि हम बैरंग वापस आये। अब तो मजदूरों की ताकत पर ही सब कुछ निर्भर करता था। हडताल जारी रहे, पूर्ण शान्ति का पालन किया जाए, किन्तु ऐसी स्थिति ला दी जाए की मिल की चिमनी बद हो जाए।

यह तभी सभव था, जब इंजीनियरिंग विभाग के लोग साथ दे। वे सहानुभूति तो प्रदर्शित करते थे, किन्तु कदम बढ़ाने से डरते थे। मै दूसरे दिन सिटी गया और उन्हे मिल से

दूर, एक सज्जन के मकान पर, बुलाया। सबके सब आए। बाते प्राय तय हो चुकी थी कि ये भी हडताल में सम्मिलित हो जाएगे, किन्तु मै वहा से चलने वाला ही था कि पुलिस ने घर को घेर लिया और मुझे गिरफ्तार कर लिया। न मै पिकेटिग कर रहा था, न कोई कानून तोड रहा था—फिर मुझपर यह वार क्यों ? यह किससे कौन पूछे ?

मुझे गिरफ्तार कर मैजिस्ट्रेट के बगले पर ले जाया गया। मैजिस्ट्रेट सज्जन पुरुष थे। उन्होने मुझ से कहा, इस समय जेल मे भोजन का कोई प्रबन्ध नही हो सकेगा, इसलिए यदि आपको उज्र नही हो, तो यही खाइये और आराम कीजिये, सध्या मे आपको जेल पहुचवा दूंगा। उन्होंने पुलिस को वहा से रवाना कर दिया। मुझे मेहमान की तरह रखा। बडी आवभगत की। रह-रहकर उनका टेलीफोन बज उठता, कुछ बाते होती। उन्होने ही बताया, आज सध्या मे एक बडी सभा हुई है, उसमे जयप्रकाश जी बोले हैं—बहुत गरम भाषण था उनका। जब धुन्धलका हुआ, अपनी मोटर पर लेकर उन्होंने मुझे पटना-जेल पहुचा दिया, कहा, सिटी-जेल में आपको तकलीफ होगी !

फिर वही जंजीरें, वही दीवारे। सरकारे आती है, जाती हैं। किन्तु ये अपनी जगह पर जहा की तहा रहती है ! क्रोपाटकिन का अराजकतावादी साहित्य पढ़ा था। उनका कहना था, जब तक सरकारे रहेगी, तब तक जजीरे और दीवारे रहेगी। यदि इनसे मुक्ति पाना चाहते हो, तो सरकारो को

ही खत्म करो। मानव पर मानव का शासन ही अस्वाभाविक है, मानव मे स्वतः ऐसी सद्वृत्तियां है कि वह शासन-मुक्त समाज मे भी सुख और शान्ति से रह सके। क्रोपाटकिन के कथन की सत्यता समझ में आ रही है। इस काग्रेसी शासन की स्थापना के लिए हमने कितना किया था! गांव-गांव, गली-गली घूमे, किसानो से, मजदूरों से काग्रेस को वोट देने के लिए अपील की। पैदल चले, बैलगाड़ी पर चले, साइकिल से गये—मोटरें तो कम ही नसीब हुई। यही नही, तीन-तीन महीने की जो सजाएँ भुगती वह इसी काग्रेसी शासन की स्थापना के लिए ही न? और, कैसा तमाशा, काग्रेसी शासन के कुछ महीने ही गुजरे हैं और मैं जेल में हूं।

जजीरे फिर खनक रही है, बोल रही हैं, स्वयं तुलकर हमे तोल रही है और दीवारे गुमसुम—वैसी ही काली, कठोर, अलंघ्य हमे चारो ओर से घेर कर खडी है!

भोजन मैजिस्ट्रेट साहब के ही घर हो चुका था। यहा एक वार्ड मे मेरा डेरा डाला गया। सोने के समय मेरा खाट बाहर रख दिया गया था। रात में जेलर साहब बेले की एक माला दे गए थे। उसी की सुगन्ध मे तरह-तरह के सपने देखता कब सो गया, पता नही। कौए के कांव-काव से नीद टूटी, तो दिन के प्रकाश में १९३०-३२ की पुरानी स्मृतियाँ आँखों के सामने नाचने लगी।

शौच, स्नान से निवृत्त हो जलपान कर रहा था कि गेट पर बुलाहट हुई। वहा जाकर देखता हूं तो हमारे सुपरिचित सुपरि-

न्टेन्डेट साहब खडे हैं। मुस्कराते हुए बोले—मेरे साथ चलिये। मैंने कहा—कहा ? जहा मै ले चलता हूं—कहकर हाथ पकड़ लिया और मुझे अपनी मोटर पर बिठलाकर उसे स्टार्ट कराया, मोटर स्टेशन की ओर मुडी। तो क्या मुझे नजर बन्द कर फिर हजारीबाग भेज रहे है ? किन्तु स्टेशन से फिर उनकी मोटर सेक्रेटेरियट की ओर मुडी। क्या सेक्रेटेरियट मे ही मेरा मुकदमा करेगे ? सेक्रेटेरियट के निकट पहुंच कर गाड़ी उसके बाये बाजू से चलती रही और बाबू अनुग्रहनारायण सिह के बगले पर रुकी।

अनुग्रह बाबू—हमारे नये वित्तमत्री और श्रम एव उद्योग-मन्त्री भी। उसी सुपरिचित मुस्कान से मिले। उनके कमरे में एक ओर मिल-मालिक बैठे हुए थे, एक ओर सिटी मैजिस्ट्रेट। सरकारी लेबर-अफसर भी वहा थे। बाजाप्ता एक राउड टेबल काफ्रेन्स बैठी। अनुग्रह बाबू ने कहा, अच्छा बताइए, आप लोगों की माग क्या है ? मैने कहा—पहले मैं जान लेना चाहता हूं, मै कैद हूं, या आजाद। उन्होने उसी मुस्कान मे कहा—क्या मेरे घर को भी आपने जेल ही समझ रखा है ?

बाते शुरू हुई। तय हुआ, मिल-मालिक, यूनियन के सभापति और लेबर-अफसर की एक पचायत बोर्ड वना दी जाय, ये लोग जो निर्णय देगे, यूनियन और मिल दोनो को मान्य होगा। लेबर-अफसर पुराने क्रान्तिकारी थे। अत मैने यह स्वीकार कर लिया। मिल-मालिक और मैने दस्तखत

कर दिए; अनुग्रह बाबू ने श्रम-मन्त्री की हैसियत से उस पर स्वीकृति का हस्ताक्षर कर दिया। फिर उन्होने सिटी मैजिस्ट्रेट को कहा—अब इन्हें जयप्रकाश जी के पास पहुंचा दीजिए, जिसमे ईंट-से-ईट बजने की नौबत नही आये। रास्ते मे सिटी मैजिस्ट्रेट ने कहा, कल जयप्रकाश जी ने मिल और सरकार को चुनौती देते हुए कहा था, हम ईंट-से-ईंट बजा देंगे। अनुग्रह बाबू का व्यग्य उसी ओर लक्ष्य करता था।

मित्रों ने पीछे बताया, उन्होने ऐसा तेज भाषण जयप्रकाश जी के मुंह से कभी नही सुना था, जैसा कल सध्या को उन्होंने दिया। मेरी रिहाई की खबर से ही जयप्रकाश जी के घर पर साथियो की भीड लग गई। हंसी-खुशी मे यह शानदार हडताल समाप्त हुई और एक ही दिन के लिए सही बलदेव बाबू ने इन्कलाब की जो परिभाषा की थी और मैंने जो श्री बाबू से अपनी रिहाई के दिन हजारीबाग के रास्ते पर हसते-हसते आशका प्रकट की थी, वह पूरी हुई!

नेपाल

दूसरा महायुद्ध शुरू हो गया। काग्रेसी मन्त्रिमंडल ने इस्तीफा दिया। इसके बाद ही २६ जनवरी को जो स्वतन्त्रता-दिवस आया, उसके सिलसिले मे मुझे फिर जेल जाना पड़ा।

अब मैं पटना शहर काँग्रेस कमेटी का अध्यक्ष नही था। मुझे इस पद से हटाने के लिए काग्रेस मन्त्रिमडल की स्थापना होते ही, तरह-तरह की चाले चली गई। काँग्रेस मे नये-नये लोगो की पैठ हुई। सदाकत-आश्रम मे मोटरो का ताँता लगा। गाँधीटोपी ने खाजा-मार्का टोपी का नाम धारण किया। काँग्रेस चुनाव मे थैलियां खोली जाने लगी, सरकारी सूत्रो का भी प्रयोग किया जाने लगा। हम समाजवादी थे, समाजवादियो को काग्रेस-सगठन से निकाल कर ही दम लेने की प्रतिज्ञा हुई।

पर ज्यो ही काग्रेसी मन्त्रिमडल हटा, यह भानमती का कुनबा आप-ही-आप टूटने लगा। भारत-रक्षा-कानून की पहली किश्त आई। तब हमारे मन्त्रियो के बगलो पर कीमती

मोटरों की कतारे लगी रहती, अब उनके चढने के लिए फोर्ड की कार भी मुहाल हो गई। बैताल फिर पीपल की डाल से जा लटका।

गवर्नरी शासन था। हुक्म हुआ, स्वतन्त्रता-दिवस पर कोई जुलूस नही निकाले। शहर-कांग्रेस कमेटी ने घुटने टेक दिये। किन्तु हम किस प्रकार इसे सहन कर सकते थे! हम सदा जुलूस निकालते रहे हैं, इस साल भी निकालेंगे।

जुलूस निकला, शानदार ढंग से निकला। मुझे ही नेतृत्व करना पड़ा। जुलूस से कोई छेड़छाड़ नही की गई। किन्तु बाद मे मुझ पर वारन्ट निकला। फिर गिरफ्तारी, फिर मुकदमा, फिर सजा। बडी दया दिखाई गई—इतना जुर्माना दो, नही तो इतने दिन के लिए जेल भुगतो। इस मुकदमे की अपील चल ही रही थी कि फिर गिरफ्तारी।

मेरा जहां लालन-पालन हुआ, वह गांव जिस सबडिवीजन मे है, उसकी सीमा नेपाल से मिलती है। नेपाल के निकटतम कस्बे मे मैंने बहुत दिनो तक पढा-लिखा था। मेरे कुछ कुटुम्ब भी नेपाल के थे। जब-जब जनकपुर जाता, नेपाल की भूमि मे कुछ दिन गुजारता। इस प्रकार नेपाल से निकट सम्पर्क बचपन से ही रहा। जब 'बालक' निकाला था, उसमें पहला लेख नेपाल पर ही था। ससार मे एकमात्र स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य नेपाल का ही है, इसका भी कुछ गर्व था। नेपाल सम्बन्धी बहुत-सा सुलभ-दुर्लभ साहित्य पढ डाला था। गोरखा सैनिको की बहादुरी की भी अनेक कथायें पढ़ चुका था। बहुत दिनों

से इच्छा थी कि नेपाल पर एक अच्छी पुस्तक लिख डालूं। उसके लिए सामग्रिया भी एकत्र कर ली थी। एक बार काठ-मांडू जाऊं और बची-खुची सामग्रियाँ जुटा लाऊं, यह भी सोचा करता। किन्तु इधर राजनीति मे इतना गर्क हो चुका था कि इसके लिए समय नही निकाल पाता था।

जब 'जनता' निकाली, चाहा कि उसमे नेपाल-सम्बन्धी समाचार और लेख दूँ। कोई ऐसा व्यक्ति नही मिल पाता था, जो इसके लिए बराबर कुछ सामग्री दिया करे। नेपाल में सब कुछ ठीक नही जा रहा है—नेपाल-नरेश प्राय· वन्दी का जीवन व्यतीत कर रहे है, राणाओ का बोलवाला है, देश-सेवकों पर अधाधुन्ध दमन-चक्र चल रहा है—इन बातों की भनक कानो मे पडती थी। किन्तु जबतक कुछ प्रामाणिक चीजें नही मिले, कैसे लिखा जाय ?

एक बार घर गया। मेरे पडोस के गांव मे एक सज्जन है। डिप्टी कलक्टर थे, अब पर्यटक का जीवन अपना रखा है। कई बार कैलास और मानसरोवर की यात्रा कर आये हैं। गगोत्री, यमुनोत्री, आदि की दुर्गम यात्राए भी की है। उन्ही से मिलने उनके गांव पर गया। वह अभी-अभी नेपाल से लौटे थे। नेपाल की कुछ ताजा खवरे सुनाई और बडी सावधानी से छिपाकर लाये हुए कुछ कागजपत्र दिये। नेपाल मे अन्धेर मचा है, कोई अखवार सच्ची खबरे छापने को तैयार नही। राणाओ ने उनके मुँह या तो सोने से या लोहे से बंद कर रखे हैं। आप नेपाल की स्वतन्त्रता का पक्ष लीजिये, इन

कागजपत्रों का उपयोग कीजिये—उन्होंने अनुरोध किया और कुछ सूत्र बताये जिनसे नेपाल-सम्बन्धी खबरें सदा मिला करेंगी।

मैं यही तो चाहता था। उनसे प्राप्त हुई सूचनाओं और कागजपत्रों को लेकर मैंने नेपाल-सम्बन्धी एक लेखमाला 'जनता' में शुरू की। उसके पहले लेख से ही सनसनी फैली जनता में और दूसरा, तीसरा लेख छपते ही जैसे आग लग गई। एक ओर नेपाल से सामग्रिया पहुँचने लगी, दूसरी ओर 'जनता' की प्रतिया नेपाल की सीमा के कस्बों मे बड़ी संख्या मे बिकने लगी। वहा से बॉस के चोगे मे, कोट के अस्तर मे रख-रखकर 'जनता' की प्रतियां नेपाल के प्रमुख शहरो मे जाने लगीं। एक आने की प्रति इन स्थानों मे जाकर मुहरों में बिकती थी।

तब तक काग्रेसी मन्त्रिमंडल था ही। एक दिन सी० आई० डी० विभाग से मेरी बुलाहट हुई और उसके बडे अंगरेज अफसर ने मुझसे कहा कि लेख छापना बंद कर दीजिये, नेपाल हमारा मित्र राज्य है, नेपाली सेना पर ही युद्ध की विजय निर्भर करती है। यही नही, उन्होंने मित्र-राष्ट्र सम्बन्धी कुछ कानून भी दिखलाये, जिनके अनुसार ऐसे लेख छापना कानूनी दृष्टि से जुर्म है। मैंने स्पष्ट कह दिया, यह काग्रेसी राज्य है, जो कुछ कहना होगा, मुझसे हमारे मुख्यमन्त्री कहेंगे, आप कौन होते है हस्तक्षेप करने वाले। किन्तु, ज्योंही कांग्रेसी मंत्रिमंडल ने इस्तीफा दिया, एक दिन 'जनता' का कार्यालय

घेर लिया गया, कोने-कोने मे सर्च की गई, उन प्रतियो को उठा ले गये, जिनमे वे लेख थे। हां, मूल प्रति या नेपाल से भेजे गये कोई कागजपत्र नही प्राप्त कर सके।

हमारी लेखमाला शुरू ही रही। अन्तत एक दिन 'जनता' के उन अङ्को को जब्त करने की घोषणा हुई जिनमे वह लेखमाला छपी थी और 'जनता' तथा 'जनता प्रेस' से पाच हजार की जमानत माँगी गई। उसी के साथ हमारे प्रेस मे छपी एक नोटिस के कारण मुझ पर गिरफ्तारी का वारट निकला। इसका अर्थ यह हुआ कि जनता को बन्द कर देना पडा। पाच वर्षो तक जनता बन्द रही, फिर १९४६ मे, जेल से लौटने पर किसी न किसी प्रकार से फिर प्रकाशित करना प्रारम्भ कर सका।

जिस समय मुझ पर और 'जनता' पर यह प्रहार हुआ, उसके पहले ही जयप्रकाश जी जमशेदपुर मे एक युद्धविरोधी भाषण के कारण गिरफ्तार हो चुके थे। सरकार की धारणा थी, जनता-कार्यालय क्रान्ति का घोंसला है, उसे उजाड़ ही देना चाहिए। युद्ध दिन-दिन विकराल रूप धारण कर रहा था, मित्र-राष्ट्रो की हर मोर्चे पर हार हो रही थी। हमारी पार्टी ने तय किया था, इस युद्ध का उपयोग हम अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए करेगे। क्रान्ति की एक योजना भी हमने बना रखी थी। उधर पिछले युद्ध के अनुभवो के आधार पर गाधी जी भी तब तक सरकार को मदद देना नही चाहते थे जब तक कि वह स्वतन्त्रता के प्रश्न पर कॉग्रेस से समझौता

नहीं करले। जब उसने समझौते की बात अस्वीकार कर दी, कांग्रेसी मन्त्रिमंडलो ने इस्तीफा दिया। अब अगला कदम क्या हो, इसके लिए रामगढ-कॉंग्रेस फैसला करने वाली थी। किंतु बिहार मे होने वाली इस कॉंग्रेस के पहले ही उसने पार्टी पर प्रहार कर दिया—उसके नेता को गिरफ्तार किया, उसके मुखपत्र को वन्द किया, मुझ पर वारन्ट निकाला।

किसी प्रकार इस वारंट की खबर मुझे लग गई। नेपाल पर इस लेखमाला का प्रकाशन शुरू होते ही नेपाल के कुछ युवक मुझसे आकर मिलने लगे थे। मैने उन्हे सलाह दी थी कि अन्य देशी राज्यों की तरह वे लोग भी अपने देश मे प्रजा-परिपद् की स्थापना करे और इसके लिए प्रारम्भिक बैठक रामगढ मे ही वे करे। रामगढ़ मे भारत के नेताओं से मिलकर नेपाल की यथार्थ स्थिति पर उनसे बाते करने का भी तय हुआ था। मैने सोचा, चलो, रामगढ़ मे यह काम करके ही गिरफ्तार होऊँगा।

लुक-छिपकर मै रामगढ़ पहुँचा। किन्तु वहाँ तो दूसरी ही धूम मची थी। सुभाष बाबू ने काग्रेस से विद्रोह कर रखा था। सभापतित्व के चुनाव मे हमने सुभाष बाबू का पक्ष लिया था। किन्तु हम चाहते थे कि जब काग्रेस स्वयं आगे बढ़ रही है, तो उसके नेतृत्व मे ही स्वातंत्र्य-युद्ध छिड़े। रामगढ़ मे हमारा अधिक समय इसी प्रपंच मे बीता। उधर नेपाल की स्थिति इतनी गम्भीर वन गई थी कि वहां से लोग आ नही सकते थे। हा, उन लोगो ने वही मिलजुल कर प्रजापरिषद्

की स्थापना की । इस परिषद् के सचालको को कितनी मुसीबतें झेलनी पडी, कितने फासी पर लटकाये गए, कितने जेलों में सडकर मरे, कितनो ने लम्बी-लम्बी सजाए भुगती । चार आदमियो को फासी हुई थी, उनमे एक हमारे प्रमुख सम्वाद-दाता थे। और एक का अपराध यही था कि 'जनता' के एक लेख की प्रतिलिपि उनके पास निकली थी।

रामगढ से लौटकर मै पटना मे गिरफ्तार हुआ । मुक-दमा चला। एक साल की सख्त कैद की सजा हुई । फिर वही पटना जेल, फिर वही हजारीबाग जेल।

इस बार हजारीबाग मे हमे क्रांतिकारी कैदियो के लिए हाल ही मे बनाये एक नए वार्ड मे रखा गया। जमशेदपुर से सजा पाकर जयप्रकाश जी पहुँच चुके थे, स्वामी सहजानन्द सरस्वती भी आ गये थे। प्रान्त के कई हमारे प्रमुख साथी भी पहुँच चुके थे ।

हम लोग अधिक नही थे, किन्तु इस बार एक विचित्र स्थिति थी। वामपक्ष के ही लोग अब तक पहुचे थे, उनमे तीन स्पष्ट दल थे। कुछ लोग कम्युनिस्ट बन चुके थे, स्वामी जी ने सुभाष बाबू का साथ दिया था, सोशलिस्ट पार्टी के हम लोग थे। सब मे बडा तनाव । स्वामी जी तो हम लोगों से बोलना भी नही चाहते थे। जयप्रकाश जी चाहते थे, हममे सैद्धान्तिक मतभेद भले हो, जेल मे हमे एकजुट रहना चाहिए । कम्यु-निस्टो से उनकी बडी वितृष्णा हो चली थी, तो भी सामा-जिक व्यवहार मे उस भाव को नही आने देते थे। बड़ी समस्या

थी स्वामी जी की। किस प्रकार उनसे स्नेह-संबंध स्थापित हो, इसकी चेष्टा मे लगे। स्वामी जी एक सुरिया आदमी थे। किन्तु यह जयप्रकाश जी का ही धैर्य था कि इस नारियल का ऊपरी छिलका छेद सके। स्वामी जी 'मीमाँसा' के बड़े पडित थे। जयप्रकाश जी ने उनसे 'मीमांसा' पढ़ाने का आग्रह किया। वह राजी हो गये। अध्ययन-अध्यापन ने कटुता दूर की। किन्तु, कम्युनिस्टो को यह पसन्द नही था। वह इस प्रपंच में सदा लगे रहे कि स्वामी जी को हमसे दूर ही रखा जाए। उसके एक सदस्य ने हद कर दी; वह दिन-रात स्वामी जी की सेवा मे इस तरह लगा रहता, जैसे उसने कोई देवता पा लिया हो।

उन दिनो उन्होने एक विचित्र प्रचार कर रखा था—स्वामी जी का चित्र स्टालिन के कमरे में टँगा रहता है।

सिगरेट तो मैने पच्चीस वर्षो से नही छुई थी, इधर पान भी छोड़ दिया था। जयप्रकाश जी ने एक दिन कहा—हमें इस बार सात वर्ष रहना है। हमे कुछ ढीले-ढाले ढंग से रहना चाहिए कि अन्तरमन मे तनाव नही आवे। वही मैने सिगरेट पीना शुरू किया, फिर पान खाने लगा। जयप्रकाश जी के कहने पर कुछ खेल-कूद मे भी मन देने लगा। ताश, कैरम, बैडमिटन वौलीवॉल आदि मे भी हिस्सा लेने लगा। बाहर आने पर और सब तो छूट गये, यह कम्बख्त सिगरेट नही छूटी। पान तो पुराना साथी रहा ही है।

मित्र कहा करते है, सिगरेट क्यों नहीं छोड़ देते ? मै

उनसे कैसे बताऊँ कि मेरी सिगरेट मेरे उन दिनो की जिन्दगी की निशानी है। कभी-कभी इसमे जंजीरो की झनझनाहट और दीवारो की खामोशी एक साथ मैं महसूस करता हूं। बहुत प्यारी चीज है यह ! जजीरों के फौलाद को इसने प्राय: पिघलाया है · दीवारों की कालिमा को इसने प्राय: कम किया है। इसे छोड़ूं तो कैसे ?

आँख-मिचौनी

एक दिन मुझे जेल-गेट पर बुलाकर कहा गया, आप पर एक मुकदमा और भी है : उसके लिए आपको सीवान (सारन) जाना होगा।

जब पटना मे मुझ पर मुकदमा चल रहा था, मैजिस्ट्रेट ने बतलाया था, आप पर एक मुकदमा और है। तब से उसकी कोई चर्चा नही हुई। मैने समझ रखा था, वह बात यों ही कही सड़-गल गई। अब जब वारंट देखा, तो पता चला, यह कोई सरकारी मुकदमा नही है। एक ज़मीदार ने 'जनता' में प्रकाशित एक समाचार के लिए मुझ पर मान-हानि का मुकदमा चलाया है।

१९३७ के बाद बिहार मे बड़े ज़ोरों से बकाश्त-सत्याग्रह चला था। सारन जिले के अमवारी गाँव के ज़मीदार के खिलाफ भी बकाश्त-सत्याग्रह हुआ था, जिसका नेतृत्व राहुल जी ने किया था। ज़मीदार के एक कारिन्दे के डडे से राहुल जी का सिर फूट गया था। बहुत खून बहा। फिर उनकी गिरफ्तारी हुई। उन

पर किए गए इस डडा-प्रहार और उनकी इस गिरफ्तारी के विरुद्ध 'जनता' द्वारा मैने जबर्दस्त आन्दोलन किया था। 'जनता' किसान-आन्दोलन का मुखपत्र था। जमीदार उसके नाम से कापते थे, सरकार की भी कडी नजर थी। फलत. उसके जमीदार ने, संघर्ष मे हुई अपनी हार पर पर्दा डालने के लिए, अब यह नई कार्रवाही की थी।

किन्तु, इस मुकदमे से मुझे लाभ ही लाभ हुआ। बार-बार हजारीबाग से सीवान जाना पड़ता। रास्ते मे दोस्तों से भेट होती, बाते होतीं। बाहर के आन्दोलन की गतिविधि का पता चलता और भीतर हम क्या सोच रहे है, क्या चाहते है, किस साथी को क्या करना चाहिए, आदि की सूचनाये भी उन्हे देते जाते। इस महायुद्ध के अन्दर चाहे जिस प्रकार देश को आजाद कराना ही है, यह हमारा निश्चय था। फलतः शान्ति-नीति पर विश्वास रखते हुए भी उसके अन्दर जहाँ तक, जो भी किया जा सके, उस हद तक जाने मे हम हिचक नही रखते थे।

जयप्रकाश जी ने जेल मे ही कई लेख लिखे, जो बाहर के पत्रो मे प्रकाशित होते रहे, एक छद्म नाम से। किन्तु सब कोई जानते थे कि ये लेख किसके है। एक तो उनकी अपनी शैली—फिर कानोंकान यह बात फैल चुकी थी।

फिर हजारीबाग जेल से ही उन्होने पडित नेहरू, आचार्य नरेन्द्रदेव जी तथा सुभाष बाबू के नाम पत्र भेजे। इन पत्रो मे तुरन्त से तुरन्त मुक्ति-आन्दोलन शुरू किए जाने के लिए अनुरोध और आग्रह होते। उस समय भी हम ऐसा सोचा करते कि

यदि वैसा मौका आया, तो हम जेल से भाग जाने की भी कोशिश करेंगे। इन लेखो, पत्रो और योजनाओं को यथास्थान पहुँचा देने मे मेरे इस मुक़दमे ने बड़ी सहायता की। जेल से बाहर होते ही मै गया, पटना और छपरा के मित्रों को सूचना कर देता, वे लोग रास्ते मे मिलते। यदि एक जगह समय पर सूचना नही पहुँची, तो दूसरी जगह तो कोई-न-कोई साथी मिल ही जाते। बडे-बडे जक्शनो पर गाड़ी बदलनी पड़ती। बहुत समय लग जाता, इसके दरम्यान भी मित्रों को बुला लेता। यह कोई मुश्किल काम नही था।

रास्ते मे कोई न कोई परिचित व्यक्ति मिल ही जाते। उन्ही के द्वारा तार करा देता या उन्ही के द्वारा लोगो को बुलवा देता। पुलिस वाले भी मदद करते। वे भी अंग्रेजी सरकार से प्रसन्न नही थे। गरीबी के कारण गुलामी के जुए मे जुते थे, किन्तु उनका मन भी आजादी के साथ था। कुछ आर्थिक लाभ भी उन्हे हो जाता। जो मित्र आते, वे मेरे साथ उन्हे भी खिलाते-पिलाते। इस तरह मेरे और उनके खाने के लिए जो पैसे मिलते थे, बच जाते! कोई परिचित नही मिला और काफी समय रहा, तो उन्ही मे से कोई जाकर मित्रो को बुला लाता। इसका मेहनताना उन्हे अलग से मिल जाता। एक बार तो वे इस पर भी राजी हो गये कि मैं रातभर अपने डेरे पर जाकर रहूं, भोर की ट्रेन से हम चलेंगे। कम से कम सिनेमा तो देख ही लीजिये,—यह उनका आग्रह था। किन्तु मै जानता था, पटना मे व्यक्ति-व्यक्ति मुझे

पहचानता है, ये बेचारे सकट मे पड जाएगे। फिर अपनी सुख-सुविधा के लिए ऐसा करना मुझे उचित नही जँचता। हाँ, अपने आदर्श और उद्देश्य की पूर्ति के लिए जितना सम्भव था, उनका उपयोग करने मे मै नही हिचकता !

लेकिन, लगता है, सरकार को भनक लग गई। अन्तिम दिनो एक बार जब हजारीबाग से चला, एक ऐसा नौजवान दारोगा साथ मे दिया गया, जो छाया की तरह मेरे पीछे लगा रहता। ट्रेन मे या स्टेशन पर कोई परिचित मिलते तो ऐसा रुख लेता कि उनसे कुछ कहा नही जा सके। उस यात्रा मे मैं कुछ बहुत जरूरी कागज ले जा रहा था, पटना तक मैं किसी को देने मे समर्थ नही हुआ।

पटना स्टेशन पर प्रोफेसर बारी साहब दीख पडे। बडी ललक से आए और मुझे स्टेशन के रेस्तराँ मे जलपान कराने को ले चले। दारोगा ने मुह बनाया, किन्तु बारी साहब तो एक अक्खड। उन्होने उसको डाट दिया। लेकिन रह-रहकर वह कुछ कह बैठता, बारी साहब ने बिगडकर कहा—अभी मै आई० जी० को फोन करता हू, तू मेरे साथ गुस्ताखी करता है, जानता है, मै कौन हू ? उसकी सिट्टी गुम ! किन्तु बारी-साहब जब चले गए, मैने रुद्र-रूप धारण किया। मै अब तुम्हारे साथ नही जाता, तुमने बारी साहब का अपमान किया है; जो मन मे आए, करो—ऐसा कहकर मैने वेटिगरूम की बेच पर बिस्तरा फैला दिया और चादर तान कर सो गया।

अब बूढे जमादार की बारी थी। उसने मुझे उठाया और

आरज़ू के साथ कहा, दारोगा जी नए है, यह नही जानते कि आप लोगो के साथ कैसा व्यवहार होता है। अब ऐसी बात नही होगी। दारोगा चुपचाप खड़ा था। मैंने देख लिया, अब वह डिमारलाइज हो चुका है। वहां से चला।

सोनपुर तक बात ठीक रही। वहा कुछ मित्र आ पहुंचे। वेटिंगरूम मे फिर चकल्लस मचा। दारोगा बोलता तो नही, किन्तु हर मिनट चौकन्ना रहता। मैंने सोचा, गाड़ी की भीड़-भाड मे ही कागजपत्र दे दूगा। मैंने आखो-ही-आखो इशारा किया। ट्रेन आई, हम सब चढे। एक मित्र मेरे ही डब्बे मे चढ गये। सोनपुर से छपरा तक भीड़-ही-भीड़ रहती है, लेकिन दारोगा मुझसे सटकर बैठ गया था। क्या किया जाए, छपरा निकट आ रहा था। एक बात सूझ गई। जब ट्रेन छपरा-स्टेशन के निकट पहुंचने को हुई, मै झट बाथरूम मे चला गया और उसी मे कागजपत्र रख आया। ज्यो ही बाथरूम से मै निकला, वह मित्र घुसे, कागज़पत्र सम्भाल लिया और स्टेशन पर पहुचते ही झट बाथरूम से निकलकर, ट्रेन से उतर, नीचे की भीड मे विलीन हो गये!

उसके बाद दारोगा का चेहरा देखने लायक था—किन्तु तब तक चिडिया उड चुकी थी, अब पछताए होत क्या?

सीधे जेल से वार्डरो के द्वारा भी हम बाहर से सम्पर्क रखते थे। जयप्रकाश जी के व्यक्तित्व के कारण कुछ जेल-अफसर भी हमारा काम यदाकदा कर दिया करते थे।

जेल मे एक कहावत प्रचलित है, जेल न कटे, जब तक

तिकडम न हो। तिकड़म मे स्वयं एक आनन्द है; काम हो जाता है, वह अलग। कोई किताब आई, सी० आई० डी० ने उसे आपत्तिजनक करार दिया, वह जेल की आलमारी मे रख दी गई, जब कैदी छूटेगा, उसे वह किताब वापस कर दी जाएगी। सी० आई० डी० यही समझ रहा है, वह बेचारा क्या जानता है कि वह आलमारी से टहलकर कैदी के पास पहुंच चुकी है और बडे ध्यान से पढी जा रही है! होली आ गई, कुछ भगबूटी छननी चाहिए, कुछ रग-अबीर उड़ना चाहिए। नियमानुसार ये सब चीजे आ नही सकती। किन्तु होली के दिन भगबूटी भी छनी, रंग-अबीर भी उडा। जमादार साहब की सफेद दाढी भी रगी, जेलर साहब का काला चेहरा भी लाल बना! यह कैसे सम्भव हुआ? यह तिकड़म है! जेल के अधिकारी इसे अच्छी तरह जानते है। कैम्प जेल के उस खब्ती सुपरिन्टेन्डेन्ट ने सच ही तो कहा था—मेरे वार्डरो की जेब बड़ी नही हुई, नही तो तुम जेल मे अपनी बीवियों को भी बुला लेते!

और, जब कदाचित जेल से बाहर जाने का मौका मिले, तो कुछ तिकड़म नही किया जाए, तो फिर हम कैदी क्या हुए? पीछे एक ऐसे तिकड़मी साथी मिले, जो कहा करते थे कि यदि जेल से बाहर जाने का मौका मिले, तो अपने लिए पेरोल पर छूटने का बन्दोबस्त नही कर लिया जाए और पेरोल पर छूटे तो रिहाई न करा ली जाए, तो समझो, ऐसे आदमियो को सदा जेल मे ही रखा जाना चाहिए। अभी तो हमने

शुरूआत ही की थी; एक दिन हमारे कुछ साथी इसी तिकड़म के बल इन अलघ्य दीवारों को भी लांघ जाएंगे। जंजीरें जेल-गेट पर ही लटकती रह जाएंगी, कैदी स्वतन्त्र रूप से विचरेंगे।

जेल की यह मेरी पाचवी बार थी, मै इन तिकडमो में रस लेने लगा था। स्वभावत मै गदे कामो से सदा अपने को बचाता रहा हू। किन्तु कभी अहसास ही नही होता था कि यह भी कोई बुरा काम है। हमारे दुश्मन ने हमे पकड़ लिया है, वह हमे कष्ट देना चाहता है, बाहर की दुनिया से हमे अलग-अलग रखना चाहता है। उसके इस गर्हित अभिप्राय को हम जहा तक छिन्न-भिन्न कर सके, उतना ही अच्छा! और जि़न्दगी कोई सपाट चीज तो नही। रोमास और एडवेंचर के लिए भी तो इसमे जगह है। हमें उससे वंचित किया गया है। तो जहा तक सम्भव हो, इस पाषाणपुरी मे भी आखमिचौनी होती रहे, होती रहे!

मानहानि

पहली बार हमे हजारीबाग से सीधे सीवान जेल ले जाया गया। उस छोटे-से जेल को, जिसमे मुझे सिर्फ एक रात रहना पडा, मैं क्या कभी भूल सकता हूँ ?

मैं सध्या को वहाँ पहुँचा। मूसलाधार वर्षा हो रही थी। मुझे देखकर ही जमादार साहब घबरा गए। उन्होने समझ रखा था, कोई साधारण कैदी होगा। यह ट्रक, यह बिस्तरा, किताबो के ये बडल। मुझे कहा रखा जाए, कैसे रखा जाए ? उन दिनो सब-जेलो मे जेलर नही होते थे, स्थानीय मेडिकल अफसर ही सुपरिन्टेन्डेन्ट होता था। मुझे आफिस मे ही बिठा कर जमादार साहब अपने सुपरिन्टेन्डेन्ट से पूछने गए। कोई अलग जगह थी नही। 'रडी-किता' मे सिर्फ दो औरते थी, उसी समय किसी-किसी प्रकार उन्हे जमानत पर छोडा गया। फिर एक अटपटी खाट डालकर मेरा अड्डा वहाँ जमाया गया। आफिस मे ही बाजार से पूड़ी-मिठाई लाकर मुझे खिला दिया गया था।

वह घर : वह खाट : वह रात : वह वर्षा ! घर चूता था, सैंकड़ों कबूतरों ने उसे दरबा बना रखा था । उनकी बीट की अजीब दुर्गन्ध आती थी । खाट को इधर से उधर कीजिए, हर जगह पानी टपटप टपकता रहा । और थोड़ी देर में ही खाट से हजारों खटमल निकले । जहाँ करवट बदलिए, सैंकड़ों लुबुध गए । अग-अंग मे ददोरे निकल आए । रास्ते की थकावट थी, आराम करना चाहता था । किन्तु आराम उस रात के लिए मेरे भाग्य मे बदा ही नही था । आकाश मे जैसे छेद हो गए थे, धुआँधार पानी बरसता जाता था ! हवा जोरो से साँय-साँय कर रही थी । ऊपर से ही नही टपकता था, पानी के झकोरे तेज हवा के कारण भीतर, एक कोने से दूसरे कोने तक, पहुंच जाते थे । सचमुच मेरी हालत असाढ के सियार की जैसी थी उस रात !

बगल के कमरे मे साधारण कैदी रखे गये थे । छोटा-सा जेल, चालीस आदमियों की जगह और सौ से अधिक आदमी ठूसे गए थे । उनके कोलाहल के मारे अलग कान फटे जा रहे थे । पीछे पता चला, सीवान का यह इलाका डकैतियों के लिए बदनाम है । ऐसे-ऐसे खतरनाक कैदी आते रहते है कि जेलवाले भी उनसे डरते हैं । कभी-कभी डकैतो के दो गिरोहो मे जेल में ही मारपीट हो जाया करती है—लोहे के तवो से एक दूसरे की कपालक्रिया की जाती है !

कभी बैठता हूँ, कभी टहलता हूँ—उस खाट पर सोने की हिम्मत हो नही सकती ! टहलता हूँ, तो पैरों के नीचे

पानी छपछप करता है। कभी-कभी बिजली चमक उठती है। सामने नीम का एक पुराना पेड़ है। उसकी काली-काली डालिया कितनी भयानक लगती हैं। कभी भूत-प्रेत नही माना, आज वहाँ चुड़ैलो का अट्टहास स्पष्ट सुनता हूँ। सच कहता हूँ, जब हवा के झोके डालो को झकझोरते और बिजली के चमकने से चचल क्षणिक प्रकाश उन हिलती-डुलती डालो पर पडते, तो लगता, अनेक चुड़ैल नंगे नाच रही हैं, अट्टहास कर रही है।

बेचैनी मे, बेकली मे, बदहवासी मे किसी तरह रात काटी। भोर में सुपरिन्टेन्डेन्ट आये। पुराने परिचित आदमी निकले। जेल मे ही मिले थे, जिस समय बेचारे स्वयं कैदी थे। एक हत्या के केस मे बेतरह फसा दिए गए थे। प्रिवी कौंसिल से बेचारे का उद्धार हुआ। बडे भलेमानस। मैने अपनी विपता कही—वह बोले, मै क्या करूँ? घर अच्छी तरह धुलवा देता हूँ, भोजन मेरे घर से ही आएगा, लेकिन इसके आगे तो मेरा कोई वश नही। आप एस० डी० ओ० से कहिए, जिनके यहाँ आपका मुकदमा है।

जो एस० डो० ओ० थे, वह आजकल मेरे प्रान्त के मुख्य-सचिव है। उन दिनो भी अच्छे अफसर के रूप मे उनकी ख्याति थी। जब उनके कोर्ट मे उपस्थित हुआ, अपनी रात की विपता उनसे कही। उन्होने हुक्म दिया, इन्हे या तो स्थानीय अस्पताल मे, डाकबगले मे या थाने मे रखा जाए।

उसके बाद के मजे की बात मत पूछिए! इन तीनों जगहों

मे जहाँ खाली जगह मिलती, मुझे रखा जाता। किसी मित्र के घर से खाना आ जाता। पान-सिगरेट की भी कमी नही रहती। मित्र भी आकर मिलते--दिन-रात चडाल-चौकडी जुटी रहती। शाम-सुबह को मै बाहर निकलता—बस, एक सिपाही साथ रहता। लगता, कोई अर्दली पीछे-पीछे चल रहा है। एक दिन एक सज्जन से भेट हुई, मुझे इस प्रकार टहलते देख वह चकित हुए। हिचकते हुए पूछा—सुना, आप जेल मे है। हा, जेल मे ही तो हूँ, मैने हँसते हुए पीछे चलने वाले सिपाही की ओर उँगली उठाई। वह दग रह गये। सुनते है, स्थानीय पुलिस ने एक दिन एस० डी० ओ० से जाकर अर्ज की—हजूर, बेनीपुरी जी क्रान्तिकारी है, कही········ भाग न जाए—यही आप कहना चाहते थे न ? मै भी बेनीपुरी जी को जानता हूँ, वह क्रान्तिकारी है, किन्तु पैर के नही, कलम के। एस० डी० ओ० साहब ने कहा, ऐसा मुझे बतलाया गया था।

एक और व्यवस्था हुई। मुझे हजारीबाग से सीधे सीवान नही लाया जाय, बल्कि मुझे छपरा उतार कर वही के जिला-जेल मे रखा जाय और ठीक तारीख के दिन मुझे सीवान लाया जाय। इससे दोहरा लाभ हुआ। छपरा-जेल मे सारन के साथियो से घनिष्ठता बढी। छपरा जेल के अनुभव भी कम दिलचस्प नही रहे।

वही एक प्रसिद्ध डाकू से भेट हुई, वही पहली बार अपनी आखो एक मुजरिम को फासी पर चढते देखा, वही पता चला, जोगेन्द्र शुक्ल जी ने इस जेल से भागने का कैसा प्रबन्ध किया

था, सबसे दिलचस्प तो था वहा का औरत-किता जो मेरे वार्ड से सटा हुआ था।

'पतितो के देश मे' का दूसरा भाग लिखना चाहता था। उसके लिए सामग्री ढूढ रहा था। पता चला, यहा एक ऐसा डाकू है, जो सारन जिले का आतक समझा जाता है। मैने उससे मिलने का प्रबन्ध किया। पाच हाथ का जवान, अच्छा-खासा पहलवान-सा दीखता, देखने मे भी सुन्दर! क्या ऐसा आदमी डाकू हो सकता है? बाते भी बडे सलीके से करता। पीछे जब धीरे-धीरे अपने जीवन के पृष्ठ खोले, तो आश्चर्य हुआ! कई हत्याए कर चुका है। कहता था, आदमी का मार डालना बडा आसान है, बस थोडी हिम्मत चाहिए। आदमी का मारना किसी बकरे के मारने से भी सरल काम है—यह मुलायम जानवर, एक हाथ भी सफाई से लग जाए, तो इसका सिर धड से साफ अलग हो जाता है। फिर यह जानवर बहुत बुजदिल है। बस डटकर खडे हो जाइए, एक-दो को घायल कर दीजिए, बडे-से-बडा झुड भाग खडा होता है। आठ-दस आदमी का प्रचड गिरोह सारे गॉव को लूट सकता है। किन्तु हम तो सिर्फ धनियो पर ही धावा करते है। हम जान लेना नही चाहते है। हा, धन लेने मे जान लेने की जरूरत पडे, तो हम क्यो हिचके?

और जो एक बार डाकू हुआ, वह सदा के लिए डाकू बना। थोडे प्रयत्न से ही धन-प्राप्ति की लालच, साहसिकता की भावना, गिरोह के लोगो का सदा प्रति-पालन करते जाने

की प्रवृत्ति, बदला चुकाने की प्रबल आकांक्षा—और पकडे जाने पर पुलिस और न्याय का आतक : डाकू को फिर साधारण जीवन नसीब कहा ?

इस जेल मे भी उस डाकू की चादी थी। बड़ी शान से रहता। जिले के अधिकारी उससे डरते। उनका मुह भी वह मीठा किये रहता। जेल से भी वह पैसे बटोर रहा था। घोषणा की थी, वह स्वीकारोक्ति करेगा। जब वह कचहरी ले जाया जाता, बडे-बड़े लोगो को खबरे भेजता, इतना रुपया अमुक आदमी के पास पहुंचाइए, नही तो मै आपका नाम भी जोड़ दूगा। यह भी उसी ने बताया, जब तक कुछ सुफेदपोश लोग उनके गिरोह मे न हो, डकैती छिप नही सकती। ये भलेमानस डकैती मे नही जाते, हां लूट का माल छिपाते, फरार को बचाते, वक्त जरूरत पर डाकू और उनके परिवार की आर्थिक सहायता करते हैं। उसने अपने जिले के कुछ बडे लोगो के नाम लिए, जिनमे कुछ नामी वकील भी थे, जो उसके गिरोह से सम्बद्ध थे। भगवान जाने, बात कहा तक ठीक थी, किन्तु वह बोलता था बडी निर्द्वन्द्वता से। विश्वास करने को जी चाहता था !

मेरा वार्ड फासी के चबूतरे के निकट ही था। शाम-सुबह हम वहां तक टहलने जाते। एक दिन देखा, चबूतरे की सफाई हो रही है, खम्भे फिट किए जा रहे है। एक बोरे में बालू भरकर, उसके गले मे रस्सा बांधकर उसे बार-बार फासी के गड्ढे मे झुलाया जा रहा है। पता चला, किसी को फासी

होनेवाली है। मैं वैसे कैदी को देखना और उससे कुछ बाते करना चाहता था। उसका भी किसी तरह प्रबन्ध कर लिया गया।

वह पटना जिले का था : छपरा मे उसकी ससुराल थी। राज का काम करता था। एक बार वह ससुराल आया, उसकी बीवी भी यही थी। यहा उसको सन्देह हुआ, उसकी बीवी एक नौजवान राज से फसी हुई है। एक दिन उसने बहाना किया, उसका सिर जोरो से दर्द कर रहा है। उसकी बीवी को सेवा-शुश्रूषा के लिए छोड उसके ससुराल के सभी लोग काम करने चले गए। रह गई उन दोनों के अतिरिक्त एक छोटी-सी बच्ची जो उसकी साली लगती थी। जब सब लोग चले गए, घर के बाहर जाने के दरवाजे की कुडी उसने भीतर से लगवा दी और अपनी बीवी पर टूट पडा। बड़ी निर्दयता से उसकी हत्या की। तरकारी काटने के हसुए से उसकी गर्दन रेत दी, फिर एक चक्की उसके सिर पर पटक कर सिर को भुर्ता-भुर्ता बना दिया और चलता बना। बहुत दिनो तक फरार रहा। अन्त मे पकड़ा गया। मुकदमा चला, उस छोटी बच्ची की गवाही पर ही उसे फांसी की सजा हुई।

वह बहुत प्रसन्न था। ऐसा कहता था कि उसने पुण्य का काम किया है, क्योकि इस औरत के चलते उसका खान्दान खराब हो जाता। दिन-रात जयशिव, जयशिव जपता रहता। फासी के दिन भोर-भोर जब वह फासी को ले जाया जा रहा था, जोर से वह जयशिव, जयशिव जप रहा था। फांसी के

तख्ते पर चढ़ने के पहले उसने जेल-अधिकारियो को अलग-अलग सलाम किया। फिर जयशिव, जयशिव, चिल्लाते-चिल्लाते ही फासी के फँदे के साथ गड्ढे मे झूल गया। जमादार कहते थे—बाबू बडा दिलेर आदमी था, शेर था, शेर। कभी उसके चेहरे पर हमने जरा भी उदासी नही पाई! शिव-शिव कहते मरा है, कैलासधाम उसको मिला होगा, बाबू!

शुक्ल जी इसी जिले के मलखाचक गाव मे गिरफ्तार किए गए थे। पुलिस को न जाने कैसे सुराग मिल गई। छपरा से एक स्पेशल ट्रेन से वे लोग मलखाचक गए। जब शुक्ल जी सोए हुए थे, उन पर टूट पड़े। अपने तकिए के नीचे छिपाई पिस्तौल उन्होने पकडनी चाही, किन्तु एक सिपाही ने झटका दिया, पिस्तौल दूर गिर गई। उन्हे सूअर की तरह अग-अग कसकर, एक बाँस से लटका कर, स्पेशल ट्रेन तक लाया गया, कहा से टागटूग कर जेल मे। छपरा जेल मे उन पर कडी निगरानी रखी गई थी। तो भी उन्हे छुडाकर ले जाने की दुस्साहिक चेष्टा हुई। एक दिन दीवाल पर सीढी तक लगा ली गई थी, किन्तु बाहर-भीतर की यह चेष्टा भी व्यर्थ गई! शुक्ल जी को सदा डडा-बेडी मे जकडकर रखा जाने लगा, जिससे उनकी आखे खराब हो गई!

हमारे वार्ड की बगल मे ही औरत-किता—जेल के शब्दो मे रंडी-किता था। उफ, रात-दिन उस किते मे कोलाहल ही मचा रहता। तरह-तरह की फूहड गालियाँ, तरह-तरह के अश्लील गाने। कभी-कभी वहां से 'बिदेशिया' की टेर भी

सुनाई पडती । लगता, भिखारी ठाकुर के गीत इन्ही बहकी-वहशी औरतो की मनोव्यथा के गीत है । एक दिन आधी रात को उनमे से किसी कोकिलकठी के गले से वह गीत सुना, जिसकी गूँज लिखते समय भी अनुभव कर रहा हूं ।

कभी-कभी उन औरतो के कुछ प्रेमी भी हमारे वार्ड की तरफ निकल आते । पानी बहने के लिए दीवार मे एक छेद था । दीवार के आर-पार प्रेमी-प्रेमिका खडे हो जाते, इस छेद से बाते ही नही करते, प्रेमोपहार भी लेते-देते । जेल मे सबसे बडी चीज है बीडी । बीडी का एकाध टुकडा अपनी प्रेमिका को देकर प्रेमी अपने को कितना कृतार्थ समझता । कभी-कभी उस किते से पिटाई की आवाज भी आती । औरते आपस में लडती या जमादारिन उन्हे डडो से पीटती । थोड़ी देर तक आह, कराह, फिर हसी के फव्वारे ।

छपरा जेल की एक और मजेदार बात थी । छपरा जेल से सटा हुआ रडियो का मोहल्ला है । अपने छज्जे से रडियां जेल को देख सकती है और जब वे अपने छज्जे पर खड़ी हो जाए, जेल वाले देख सकते है । कुछ बिगडे दिल नवाब जेल मे आ गए थे, इशारो से ही वे उन रडियो के प्रति प्रेम प्रदर्शित करते । कभी-कभी इनको लक्ष्य कर उधर कोठे से संगीत की धारा भी फूट निकलती ।

सीवान का यह मानहानि का मुकदमा बहुत दिनो तक चला । कई बार मुझे हजारीबाग से आना-जाना पडा । बीच मे एस० डी० ओ० साहब की बदली हो गई । अतः फिर से

मुकदमा शुरू किया गया। नए एस० डी० ओ० भी बड़े नेक थे। उन्होने मुझे रिहा किया। यही नही, उन्होने जो फैसला दिया, वह बहुत ही महत्वपूर्ण था। उनका यह कहना था—अपने देश मे मुकदमा बड़ा खर्चीला होता है, जिसके चलते गरीबों पर जुल्म होते रहते है, और वे बर्दाश्त करते जाते है। इधर अखबारो के कारण एक सहूलियत हुई है। गरीब लोग तीन पैसे खर्च करके अपना दुखड़ा अखबारों मे भेज देते हैं और अखबार वाले उसे छाप देते है। इस तरह उन बेचारो का दु.ख-दर्द दुनिया के सामने आता है—सरकार उसपर ध्यान देती है, जुल्म करने वाले लोग भी डर जाते है। इस दृष्टि से देखिये, तो अखबारो के सपादक एक बड़ा ही उपयोगी सामाजिक कार्य करते हैं, जिसके लिए उन्हे प्रशसा और पुरस्कार मिलना चाहिए। इसके बदले उन पर मुकदमा चलाया जाता है, उन्हे तग किया जाता है। यह सर्वथा अनुचित है। मानहानि मे असल चीज है मशा। सम्पादक को मशा गरीब किसान की दशा की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करना रहा है, क्योंकि इस लेख का शीर्षक ही है, 'क्या सरकार इस ओर ध्यान देगी।' अत. मैं सम्पादक को छोडता हूँ, उन्हे कष्ट हुआ, इसका मुझे दु:ख है और चाहता हू कि पुलिस इस मामले की जाच घटनास्थल पर जाकर करे और मेरे सामने रिपोर्ट पेश करे।

यो मै इस मुकदमे मे सम्मान के साथ रिहा किया गया। बार-बार आने-जाने की जो सुविधा मिली, वह फाव मे!

मैं कभी-कभी इस मुकदमे के दौरान मे अपने परिवार को भेट करने के लिए बुला लेता । भेट प्राय. स्टेशनों पर ही कर लेता । एक बार छपरा के 'वेटिग रूम' मे भेट कर रहा था, रानी थी, बच्चे थे । मैंने देवेन्द्र से कहा—कोई गाना सुनाओ बेटे ! वह गाने लगा—"पिया मिलन को जाना ।" अभी तुरत एक फिल्म आई थी, उसी का यह गाना था । जब उसने आगे की कडी कही—"मन का नेह, जग की लाज दोनों को निभाना ।" तब अचानक मेरे मुह से अट्टहास फूट उठा ! लड़का शरमा गया । रानी ने कहा—इसे जरा भी अकल नही है ! क्या सचमुच लड़के मे अक्ल नही थी ?

एक बार रानी फिर मुझसे मिलने सीवान आई, किन्तु मुझसे भेट नही हो सकी । मुझमे कुछ ऐसी भावना उमड़ी कि 'कैदी की पत्नी' नाम से एक उपन्यास ही लिख डाला ! यो यह मानहानि एक पुस्तक भी दे सकी ।

जेल ! जेल ! जेल !

एक वर्ष की सजा काटकर हजारीबाग जेल से छूटा। मेरे पहले जयप्रकाश जी छूट चुके थे। हमें विश्वास था कि जेल-गेट पर ही हम नजरबन्द कर लिए जाएंगे। आश्चर्य हुआ, सरकार ने ऐसा क्यों नही किया ?

जेल से छूटकर मै घर पहुंचा ही था कि अवधेश्वर और रजी पहुंचे। उन लोगों ने सूचना दी, किसान सभा में फूट पड़ गई है। स्वामी जी हमसे अलग हो गए हैं। हम लोगों ने प्रान्तीय किसान सभा का अध्यक्ष तुम्हें बनाया है; यही नही, तुम्हारे प्रान्तव्यापी दौरे का यह कार्यक्रम है। चलो, घूमो, क्रान्ति का बिगुल फूंको ! घर की आर्थिक अवस्था अच्छी नही थी। सोचा था, इस सम्बन्ध में कुछ कर-धर लू। किन्तु कहां क्रांति, कहां घर ? मै बेनीपुर से रवाना हो गया।

हम लोग कांग्रेस मे थे। कांग्रेस का आदेश था, सभी कांग्रेस जन व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लें। मैने अपने प्रान्त

के काग्रेस-अध्यक्ष श्रद्धेय राजेन्द्र बाबू को एक पत्र लिखा कि मुझे व्यक्तिगत सत्याग्रह से बरी किया जाए और किसान सभा के अध्यक्ष की हैसियत से काम करने की इजाजत दी जाए। स्वामी सहजानन्द जी कम्यूनिस्टो के प्रपच मे पड गये थे, अब वह इस युद्ध को जनयुद्ध समझ रहे थे। इस युद्ध मे सरकार की मदद करने का वचन देकर वह समय से पहले छूटे थे। प्रान्त के किसानों को बरगला रहे थे। किसानो पर उनका प्रभाव था। काग्रेस के सिद्धान्त के हित मे भी यह उचित था कि मुझे उनके प्रभाव-जाल को तोड़ने का अवसर दिया जाए। मेरे पत्र का साराश यह था।

उस पत्र के उत्तर मे राजेन्द्र बाबू का एक लम्बा पत्र मिला। उन्होने मुझे सत्याग्रह से मुक्त कर दिया, किसान-सभा मे काम करने की इजाजत दी। किन्तु उस पत्र मे कहा, स्वामी जी के व्यक्तित्व के खिलाफ कुछ नही किया जाय—न जाने देश को कब किसकी आवश्यकता पड़ जाए ? राजेन्द्र बाबू की इस उदारता और दूरदर्शिता का मुझ पर बहुत प्रभाव पडा।

मेरा तूफानी दौरा शुरू हुआ। जहाँ जाता, वही क्रान्ति का वातावरण पाता। सोशलिस्ट पार्टी के जो कार्यकर्ता निष्क्रिय हो चले थे, उनमे भी न जाने कहा से एक नया जोश आ गया। लगता था, अपनी बाबी मे सोये हुए गेहुअन साप किसी अज्ञात मदारी की बीन की तान सुनकर निकल पडे हो और फन काढकर मस्ती मे झूम रहे हो ! वह बीन

क्रान्ति की थी, मै तो सिर्फ बजाने वाला था।

कभी पटना, कभी गया : कभी मुगेर, कभी भागलपुर : कभी सारन कभी चम्पारण—दिन-रात प्रान्त के कोने-कोने मे घूमता और बड़ी से बडी सभाओ मे बोलता ही रहता। मेरे पीछे सदा सी० आई० डी० के रिपोर्टर लगे रहते। एक बार एक सी० आई० डी० रिपोर्टर ने, जो इन्सपेक्टर के पद पर था, मुझसे कहा, आप आग-आग ही तो उगलते है किन्तु ऐसी सावधानी से बोलते है कि यदि बेईमानी नही की जाए, तो आप कानून के शिकजे मे नही आ सकते !

किन्तु क्या अपने देश मे बेईमानों की कमी है ? हाजीपुर के एक गाव मे दिए एक भाषण पर मै गिरफ्तार कर लिया गया ! हाजीपुर का जेल—अपने जिले का एक सबजेल ! बस, सीवान सबजेल के नमूने का। कुछ ही घटों के बाद मै जमानत पर रिहा किया गया। मेरे द्वारा जिन जेलों के दर्शन हो चुके हैं, उनकी गिनती मे एक इजाफ़ा हुआ—पटना जेल, हजारीबाग जेल, पटना सिटी जेल, कैम्प जेल, सीवान जेल, छपरा जेल और अब यह हाजीपुर जेल—सात पूरे हुए। किन्तु अभी तो इनमे पाच का इजाफा और होने वाला है—पूरे एक दर्जन जेलो के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त कर चुका हूं !

जो थोडी देर वहां रहा, इस जेल को उत्सुकता से देखा किया। क्या जानता था कि थोड़े दिनों के बाद ही, अगस्त-क्रान्ति मे, इस जेल का फाटक खुल जाएगा, सभी

कैदी भाग जाएगे, कई दिनों तक यहां सिर्फ कौए कांव-काव करते रहेगे।

बहुत दिनों तक यह मुकदमा चलता रहा। मेरे वकील थे पटना के जनाब रफीउद्दीन बलखी साहब। और बलखी साहब नही रहे! किन्तु मै उनके अहसानो को नही भूल सकता। इस मुकदमे मे तो शानदार पैरवी की ही, जहा-जहां बाद मे मुझ पर मुकदमे चले, अपने खर्च से जाते रहे और विचित्रता यह कि सब जगह मुझे कानून के शिकंजे से छुडाते रहे!

वकालत क्या चीज है, जिरह की क्या कीमत है, इसी मुकदमे मे जाना। इस ढंग से जिरह की कि सरकारी गवाहो से ही मेरे पक्ष की सारी बाते निकाल ली। साबित किया, या तो ये गवाह वहाँ हाजिर नही थे, या वहा सभा ही नही हुई, किसी दूसरी जगह भले ही हुई हो, जहा ये लोग गये हो। "अग्रेजी राज बरबाद"—मैने यह नारा दिया था, यह सरकारी पक्ष का कहना था। तो यह कौन-सा जुर्म हुआ, बरबाद फारसी शब्द है, 'बर-बाद' का अर्थ है हवा पर! अंग्रेजी राज अब वायुयान पर अपनी शान दिखा रहा है, इसका यह भी तो अर्थ हो सकता है! हम लोग इस अर्थ पर खूब हसे!

सरकारी पक्ष से वकील थे मौलवी सफी साहब : मेरे जिले के १९२१ के असहयोग-युग के नेता! इन्ही की पुकार पर मैंने पढना-लिखना छोडा था। जब मुस्लिम सम्प्रदायवाद की

चपेट मे थे, जिले के पब्लिक प्रोजेक्यूटर थे। हम लोग एक ही डाकबंगले मे ठहरे थे। मैने आदाब किया, तो शरमा गये। बोले—तुम पर मुकदमा है, यह मुझे मालूम नहीं था, नही तो किसी और वकील को भेज देता! जब सरकार की ओर से बहस करने लगे, तो मानो पुरानी बात याद हो आई हो; कहा—कानून का सिर्फ टेकनिकल भंग हुआ है, अत. सजा कडी हो, मै यह माग नही करता। उनकी इस नरमी पर बलखी साहब ने समझा, कही जुर्माना करके या दो-एक हफ्ते की सज़ा देकर न छोडा जाय, जिससे अपील की गुजायश भी न रह जाय। उन्होने मांग की, या तो मेरे मुवक्किल को छोड़ा जाय या बडी सजा दी जाय, क्योकि मेरा विश्वास है, मै अपील से उन्हे छुडा लूगा। शायद बलखी साहब से चिढ़ कर ही, मैजिस्ट्रेट ने छ. महीने की सख्त सज़ा कस दी।

मै कचहरी से थाना लाया गया और वहाँ से सीधे मुजफ्फरपुर जेल भेज दिया गया। अपने जिले का जिला-जेल देखा। कैसा तमाशा, अपने घर के जेल से अभी तक वंचित ही था। फिर यह जेल—भारत के प्रथम बमकाड के अभियुक्त खुदीराम बोस को इसी जेल मे फांसी हुई थी न? इस तरह स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे जिसका गौरवपूर्ण स्थान रहा है, उसे अब तक न देखना एक दुर्भाग्य की ही बात थी। कई दिन वहाँ रहा; जज ने मेरी जमानत मंजूर की फिर अपील की सुनवाई पर उन्होने मुझे मुक्त कर दिया—बलखी साहब की टेक रह गई।

किन्तु अभी अपील सुनी भी नहीं गई थी, मै जमानत पर ही था, कि फिर मेरी गिरफ्तारी हो गई।

अखिल भारतीय किसान सभा के संगठन मे भी फूट पड़ी। नई अखिल भारतीय किसान सभा की बैठक लखनऊ मे हुई। मै उसकी बैठक मे शामिल होने को जा रहा था कि फैजावाद मे कम्यूनिस्ट पार्टी के मत्री श्री पी० सी० जोशी से भेंट हुई। जोशी से मेरी मित्रता थी। जब फरार थे, तब भी पटना आने पर मेरे घर पर ठहरते। अपनी पार्टी के गुप्त सरकुलर मे 'जनता' और मेरी बडी तारीफ की थी—किन्तु सारी सोशलिस्ट पार्टी को मेन्शेविक बतलाया था। तभी से जयप्रकाश जी को कम्यूनिस्टो से घृणा हुई। जब स्टेशन पर मुझे देखा, तो ललक कर आए। मैने कहा, क्या हालचाल है? बोले—बेनीपुरी, एक साल के अन्दर सारा भारत लाल हो जाएगा! पन्द्रह साल हो गए, भारत लाल कहाँ तक होता, जोशी साहब कहाँ है, कहा तक लाल है, दूर-दूर से देखकर हँसता हूँ।

किसान सभा के अध्यक्ष आचार्य नरेन्द्रदेव जी पहले से ही थे, उपाध्यक्षो मे मेरा नाम भी रखा गया। तय हुआ, बिहार मे किसान सभा का अखिल भारतीय सम्मेलन किया जाय।

मैंने अपने गाव के निकट बेदौल में सम्मेलन करने का निश्चय किया। उसकी तैयारी मे जी-जान से जुट गया। प्रान्त के कुछ प्रमुख साथी भी आ गये। गर्मियो के दिन थे, तो भी गाव-गाव दौड़ा फिरता। कार्यकर्ताओ मे उत्साह था, जनता के उत्साह का भी क्या कहना? कहाँ धूप, कहाँ लू! हम दिन

रात एक किये रहते। यहां पानी की कमी होगी, इसलिए सीतामढ़ी से कुछ ट्यूब-वैल का प्रबन्ध करने में बस से रवाना हुआ। देखा, वही इन्सपेक्टर साहब अगली सीट पर बैठे है, जिन्होंने मुझे हाजीपुर मे गिरफ्तार कराया था। बड़े भक्त, हमेशा राम-राम जपते रहते ! मुझे देखकर बडी प्रसन्नता प्रकट की, अपनी बगल में बिठाया। रास्ते भर राम-राम के बीच मुझसे खोदखादकर पूछते जाते, सीतामढी में कबतक रहूँगा, कहाँ ठहरूँगा आदि-आदि। वह थाने के निकट उतर गये, मै डा० रामाशीश ठाकुर के दवाखाने की ओर बढ़ा।

और यह लीजिये, मै यहाँ मुह-हाथ भी नही धो सका था, कि पुलिस का एक दस्ता पहुंच गया और मै गिरफ्तार कर लिया गया। डाक्टर साहब एम० एल० ए० थे, वह एस० डी० ओ० से मिले कि मुझे ज़मानत पर छोड़ा जाय, किन्तु यहाँ तो जैसे पहले से ही साँठगांठ थी, मुझे जेल मे बन्द कर दिया गया !

जेल में मुझे भी सी० क्लास में रखा गया ! डाक्टर साहब ने लाख कहा कि मुझे सदा अपर डिवीजन मे रखा गया है, मेरी सामाजिक प्रतिष्ठा और रहन-सहन के अनुसार मुझे अपर डिवीजन मे ही रखा जाता रहा है, रखा जाना चाहिए, किन्तु कौन सुनता है ? ऐसा लगता था कि मुझ से यहा की पुलिस और एस० डी० ओ० को कोई बप्पावैर हो। हद तो यह हो गई कि जिस दिन मेरा मुकदमा खुला, जेल से ले जाकर मुझे कचहरी के लॉकअप मे बन्द कर दिया गया। वहाँ चारो ओर

थूक-खखार और बदबू-बदबू थी ! मै समझ नही पाता, ऐसा क्यों किया जा रहा है ? एक दिन साप्ताहिक परिदर्शन के लिए एस० डी० ओ० जेल मे आये, जब मैने उनसे पूछताछ की कि क्यो मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जा रहा है, तो बोले—अभी क्या हो रहा है ? आप पर एक डकैती केस चलने वाला है, जिसमे हत्याएँ भी हुई है, तब देखियेगा ।

खैर, वह डकैती केस तो हवा मे ही रह गया, शायद एस० डी० ओ० के दिमाग़ का ही वह फतूर था । मुकदमा चला, तो बलखी साहब फिर आ गये । फिर उनकी जिरह का कमाल देखा । यहाँ तो डेढ वर्ष की सजा ठोक ही दी गई, किन्तु अपील मे उन्होने छुडा दिया !

किन्तु, जब तक मै छूटूं, मधुबनी से वारट आ गया । सीतामढी जेल से ही मै मधुबनी-जेल के लिए रवाना कर दिया गया ।

किन्तु अभी सीतामढी-कांड पर कुछ कहना रह ही गया । मुझे सबसे बडी चिन्ता यह थी कि बेदौल सम्मेलन का क्या होगा ? एस० डी० ओ० ने मेरे लडके को भी मुझसे मिलने की इजाजत नही दी थी । तब मैने तिकडम का आसरा लिया और शायद पाठको को विश्वास नही हो, वहाँ मेरे मुलाकाती बराबर मुझसे मिलते रहे, किन्तु गेट पर नही, उन्हे मैं जेल मे ही बुला लेता, वे घटो रहते, गपशप करते, धीरे-धीरे एकाध गाना भी सुना जाते । यहाँ वार्डर की जेब बहुत बड़ी हो गई

थी, यदि मेरी पत्नी चाहती, तो एकाध संध्या को वह भी भीतर पहुंच सकती थी !

जजीरे फौलाद की होती है, दीवारे पत्थर की। किन्तु यह मानव कुछ ऐसी धातु का होता है कि इसके स्पर्श से फौलाद मोम बन जाती है, दीवार मक्खन। मनु के बेटे के कमाल का क्या कहना ?

बेदौल का सम्मेलन ऐसा सफल रहा जैसी कल्पना भी नही की गई थी। श्री बाबू ने उद्घाटन किया, अपने भाषण मे मेरी गिरफ्तारी और मेरे साथ जेल मे हुए दुर्व्यवहार की भी चर्चा की। आचार्य जी बीमार पड़ गए, दमे ने उन्हे बे-तरह दबोच रखा था। उनकी अनुपस्थिति मे भाई मेहर अली ने बम्बई से आकर उसकी अध्यक्षता की। कार्यकर्त्ताओं की बैठक में उन्होने आगामी क्राति मे कार्यकर्ताओ से जान पर खेल जाने किन्तु गिरफ्तार न होने की ताकीद की। उनकी बात का कितना असर पड़ा, इसका सबूत यह है कि बेदौल के आसपास के जितने थाने थे, अगस्त क्रान्ति मे उन पर कब्जा कर लिया गया था, कुछ दिनो तक अगरेजी राज्य सचमुच हवा पर था !

सीतामढ़ी के अपने मुकदमे मे मैंने अपना जो बयान दिया था, उसमे उस इसपेक्टर और एस० डी० ओ० के दुर्व्यवहारो की चर्चा की थी और अन्त मे उर्दू का वह सुप्रसिद्ध शेर जड़ दिया था—

"करीब है यार रोज महशर छिपेगा कुश्तो का खून क्योकर ।
जो चुप रहेगी जुबाने खजर लहू पुकारेगा आस्ती का ।।"

मैं क्या जानता था, मेरी तनिक भी ऐसी मशा नही थी, कि यह शेर भविष्यवाणी के रूप मे मैं कह रहा हू। अगस्त क्राति मे एस० डी० ओ० और इन्सपेक्टर इन दोनो की हत्या हो गई—उत्तेजित जनता ने उन्हे बुरी तरह मारा, बोटी-बोटी काट दी और नदी मे फेंक दिया। उनकी लाशे भी उनके परिवारो को नही मिल सकी। जब हजारीबाग जेल मे यह खबर मिली, मुझे बहुत दुख हुआ और तब से सोचता हूं, किसी दुश्मन को भी कोई बद्दुआ नही देनी चाहिए !

विप्लव की धमक

अभी-अभी नया-नया बना, नये माडल का, मधुबनी का यह छोटा-सा जेल। इसके दरवाजे पर भी जंजीरें लटक रही थीं, किन्तु इसकी दीवारों पर कालिमा नहीं थी, भूरा-भूरापन था, अच्छा लगता था!

एक तो अपर डिवीजन का राजबन्दी, फिर गाव के निकट का ही एक वार्डर मिल गया। मुझे कोई कष्ट नही था।

सीवान जेल की तरह इस जेल में भी डक़ैतों की भरमार थी। ये लोग भारत-नेपाल-सीमा पर डकैतियाँ करते। नेपाल में डकैती करके भारत भाग आते, भारत में डकैती करके नेपाल में जा छिपते। जब कभी नेपाल में गिरफ्तार होते, बडी दुर्गत होती इनकी। खैरियत यह थी कि वहां की पुलिस उतनी सजग नही थी। भारत मे गिरफ्तार होने पर मुकदमे मे छूट जाने की सदा संभावना रहती। डकैतियां रात मे होती, शिनाखत मे ही अधिक लोग बच निकलते। जो नामी डाकू थे, उन्हें पहचान करते लोग डरते थे। कदाचित वे छूट गए,

तो क्या जान भी बचने देंगे ? एक तो धन गया, अब जान पर भी कौन खतरा ले ?

जेल मे थोडी जगह थी, अधिक लोग थे। चौबीस घण्टे कोलाहल मचा रहता। इसलिए मै दफतर मे प्राय आ जाता। जमादार शरीफ आदमी थे। मुझे हर प्रकार से आराम देने की चेष्टा करते।

जब मै जेल के भीतरी गेट से दफतर मे जाता, प्रायः बगल के औरत-वार्ड के छेद से दो आखे चमक उठती! मैंने कई दिन ऐसा लगातार देखा! एक दिन मेरे पड़ौसी नौजवान वार्डर ने हसते हुए कहा—भाई जी, नागिन है नागिन ! इसकी आखो ने कितनो को डसा है, देखियेगा, बचकर रहियेगा।

और एक दिन उस नागिन को प्रत्यक्ष देखा, जब वह औरत-वार्ड से निकालकर कचहरी ले जाई जा रही थी। मिथिला का सारा सौन्दर्य उसे मिला था, फिर उस पर "वाके नैना मैथिलानी के।" ऐसी सुन्दरी, और ऐसे बीभत्स जीवन में फसी है ! उफ, सच कहता हू, बहुत दिनो तक उसकी आंखे मेरे सामने भूत-सी मडराती रही ! इस समाज के मूल मे ही कोई त्रुटि है—बिना आमूल परिवर्तन किए यह समाज सभ्य सुसस्कृत जीवन का प्रतीक नही बन सकता।

एक नौजवान मैजिस्ट्रेट के इजलास मे मेरा मुकदमा चला। मैंने उनसे अर्ज किया, मुझे दरभंगा जेल में रखा जाय और मुकदमे के दिन यहा बुला लिया जाय। उन्होने मेरा निवेदन स्वीकार कर लिया।

अब फिर सीवान वाली स्थिति हुई। मैं दरभंगा जेल में रखा जाता। वहा से आता, तो डाकबंगले में ठहराया जाता। पेशी के बाद फिर दरभंगा भेज दिया जाता।

फिर मित्रों का ताता। फिर बाहर से सम्पर्क। 'जगल में मंगल' की कहानी नये रूप में चरितार्थ होने लगी।

क्रिप्स आकर लौट चुके थे। गांधी जी की अन्तःप्रेरणा मे 'भारत छोड़ो' की बात आ चुकी थी। वह अपने इस नारे को समझाते हुए लेख-पर-लेख, वक्तव्य-पर-वक्तव्य दे रहे थे। वे लेख, वे वक्तव्य सभी पत्रो में प्रमुखता से छप रहे थे। उनके लेखों और वक्तव्यों से स्पष्ट हो जाता कि गांधी जी अपने जीवन का अन्तिम युद्ध छेड़ने जा रहे है। यह कोई आन्दोलन नही होगा, खुला विद्रोह होगा। करो या मरो, इसका नारा होगा। हाँ, करो या मरो। यह नारा हम पर किस तरह लागू होगा, जो जेलों में बंद है। हमें दरभगा जेल के जिस सेल में रखा गया था, उसके सामने ही जेल की दीवार थी और उसके निकट ही फाँसी का चबूतरा था। उस चबूतरे पर बैठकर कभी हम दीवार की ओर देखते, कभी इसके नीचे के कुड की ओर ध्यान करते, जहां गले में रस्से लपेटे आदमी ऐंठ-ऐंठ कर दम तोडता है। हमें करो, उस दीवार में दीखती, मरो इस कुड में।

मेरे साथ जेल मे एक कैदी ऐसा था, जो राजनीतिक उद्देश्य से डकैती करते हुए पकड़ा गया था। एक बम की आज़माइश में उसका एक हाथ उड़ गया था। वह भी मेरे

साथ आकर बैठ जाता। बड़ा फितूरी था वह। कहता, आप निश्चिन्त रहिये, ज्योही गाधी जी ने बिगुल फूँकी, हम लोग इस दीवार के उस पार होगे। वह तरह-तरह की योजनाएं बना चुका था—जेलर को गिरफ्तार करने से लेकर दीवार फादने तक की।

उधर जयप्रकाश जी बम्बई में गिरफ्तार हो चुके थे। वहा से देवली कैम्प मे भेजे गये। देवली जेल से कुछ काग़-जात वह बाहर भेजना चाहते थे, किन्तु ऐन मौके पर काग-जात पकड़ लिए गए। उन कागजात को सरकार ने छपवा दिया था। सरकार का उद्देश्य था जयप्रकाश को बदनाम करना। किन्तु गांधी जी ने जयप्रकाश का पक्ष लिया। सरकार का उद्देश्य तो सफल नही हुआ, हमारे साधारण कार्यकर्ता को भी मालूम हो गया, इस सरकार को उलटने के लिए हम सब कुछ कर सकते है।

धीरे-धीरे अगस्त निकट आ रहा था, बम्बई मे काग्रेस कमेटी की बैठक होने जा रही थी, जिसमे गांधी जी 'भारत छोडो' का प्रस्ताव रखने जा रहे थे। वातावरण क्षुब्ध से क्षुब्धतर होता जा रहा था। गांधी जी के लेखो से भी चिन-गारियाँ निकलती थी। मै जेल के वार्डरो से, अन्य जेल-अधिकारियो से बाते करता कि उनकी प्रतिक्रिया क्या है? जब मधुबनी ले जाया जाता, पुलिस के सिपाहियो से, साथ के यात्रियों से भी बाते करता। स्थिति डांवाडोल है, कुछ भी हो सकता है, यह स्पष्ट दिखाई पड़ता था। किन्तु डर यह था कि

कहीं योग्य नेतृत्व के अभाव मे सारा आन्दोलन बिखर कर शान्त न हो जाय।

उसी समय जयप्रकाश जी एक लम्बे अनशन के बाद देवली से हजारीबाग जेल वापस भेज दिये गये थे। मुझे सजा तो मिलेगी ही; क्यों न हजारीबाग में उनसे मिल कर बाते कर आऊं?

दरभंगा के सुप्रसिद्ध वकील स्वर्गीय बाबू धरणीधर मेरे मुकदमे में दिलचस्पी ले रहे थे। मेरे मुकदमे की पैरवी तो बलखी साहब ही हस्बमामूल कर रहे थे; तो भी धरणीधर बाबू तारीख पर आ जाया करते। उन्होने कहा, यदि सजा हुई, तो दरभंगा में जज से अपील कर तुम्हे जमानत पर छुड़ा लूगा। तब तक सीतामढ़ी की सजा को बलखी साहब मुजफ्फर-पुर के जज से रद्द करवा चुके थे। मैने ऐसी योजना बनाई कि सजा होते ही मै मधुबनी से ही हजारीबाग भेज दिया जाऊँ और जब वहा पहुँच जाऊं तब धरणीधर बाबू जज के पास अपील करें और जमानत करा दें। जमानत का आर्डर जब तक हजारीबाग पहुंचेगा, तब तक मै जयप्रकाश जी से सारी बाते कर लूगा। और वहां से लौट आकर उनके आदेश के अनुसार कार्रवाइयाँ की जाएगी। गाँधी जी सरकार को एक महीने का अल्टिमेटम देने वाले थे, अतः कोई आन्दो-लन सितम्बर के पहले शुरू नही होगा, ऐसा विश्वासपूर्वक समझा जाता था।

अगस्त के शुरू मे ही मुझे सजा मिली। मैने मैजिस्ट्रेट से

कहा, मुझे सीधे हजारीबाग जेल भेज दीजिये, क्योकि दरभंगा मे भी अपर डिवीजन का कोई इन्तजाम नही, जिससे मुझे कष्ट होता है। मैजिस्ट्रेट ने इसे तुरत स्वीकार कर लिया। इस बार मै मधुबनी जेल मे ही ठहरा था। जब मै अपने सामान लेने मधुबनी जेल मे गया, मेरे पड़ौसी नौजवान वार्डर ने कहा, भाई जी, आप कहाँ जा रहे है। यही रहिये, आन्दोलन शुरू होते ही यह जेल टूट कर रहेगा! डकैत कैदियों ने कहा, हम इस जेल को तोडकर रहेगे और आप जहाँ चाहेंगे, पहुंचा देगे, जो कहियेगा, करेगे। देश-सेवा का एक मौका हमे भी तो दीजिये! जब स्टेशन पर पहुँचा, बहुत से साथी इकट्ठे हो गये और अफसोस करने लगे कि आप हमे छोड़कर कहां जा रहे है, हम तो आपको जेल से निकाल ही लेते। ये सारी बाते खुल्लमखुल्ला की जाती—खुला विद्रोह होने जा रहा है न? फिर दुराव-छिपाव कैसा?

जो जमादार मुझे हजारीबाग पहुँचाने जा रहा था, उसका रूप तो और भी विचित्र था। उसने मुझसे साफ कहा—आप भागना चाहे, तो जहां से चाहे, भगा दूंगा। आपको भगाकर मै भी फरार हो जाऊंगा और आन्दोलन मे भाग लूगा—इस बार तो 'करो या मरो' की बाजी है। यही नही, मुजफ्फरपुर पहुँचकर तो वह बार-बार मुझे भाग जाने को प्रेरित करता रहा। मै अपनी योजना कैसे बताता—सिर्फ यही कहता, अभी थोड़ा सब्र रखना चाहिए नही तो समय से

पहले क्रान्ति करने से १८५७ की तरह हमे असफलता भी मिल सकती है।

जब गया पहुंचा, मै जिस डिब्बे मे था, कई फौजी अफसर आ गए। वे कुमाऊँ के थे, पूर्वी मोर्चे पर भेजे जा रहे थे। जब गाड़ी चली, धीरे-धीरे बाते होने लगी। मैने कहा, आप लोगों को बगाल में इसलिए भेजा जा रहा है कि क्रांति होने पर आप वहाँ की क्राति को कुचल दे। यदि ऐसी बात हो, तो आप क्या करेंगे ? १९३० मे पेशावर मे गोली चलाने से इन्कार करने वाले ठाकुर चन्दनसिंह के उदाहरण की भी उन्हे याद दिलाई। बड़े साफदिल आदमी थे। वे बोले—देखिए, सब कुछ निर्भर करता है आप लोगों पर। सैनिक पहले से नही सोचता कि वह किस मौके पर क्या करेगा। समय पर जो हो जाता है, वह हो जाता है।

मुझे ट्राटस्की की 'रशियन रेव्यूलूशन' की बाते याद आ रही थी। भोर मे जो सैनिक गोली चलाने को तैयार थे, वे ही शाम होते-होते ऐसे पिघले कि मजदूरों से मिल गए। हा, हां, सब कुछ निर्भर करता है हम लोगों पर। हमारी क्रांति की प्रखरता कैसी होती है, हम पर गोली चलाने के लिए खड़े सैनिकों के प्रति हमारा व्यवहार कैसा होता है, हम उनके हृदयों को कहां तक पिघला सकते हैं, क्राति की सफलता का उनपर कैसा विश्वास होता है—सैनिकों को क्रांति के पक्ष में आने के कई ऐसे पहलू है। सचमुच अभी से कुछ कहा नहीं जा सकता।

मैं हजारीबाग पहुंचा, तो बाबू वार्ड मे रखा गया। जयप्रकाश जी छोकरा-किता मे थे। किन्तु जमादार ने हमे तुरन्त मिला दिया। अनशन के कारण जयप्रकाश जी बहुत दुबले हो गए थे। साइटिका की पीडा उन्हे परेशान किए हुई थी। प्रति सप्ताह गाधी जी का पत्र आता था और उसी के अनुसार वह प्राकृतिक चिकित्सा कर रहे थे। मैंने सारी बाते बताई। जनता का रुख, कार्यकर्ताओ का रुख, पुलिस का रुख, सैनिको का रुख। यदि योग्य नेतृत्व नही मिला, तो आन्दोलन बिखर जा सकता है, या गलत दिशा मे चला जा सकता है, अपनी यह आशका भी प्रकट की। मै तो जमानत पर शीघ्र चला जाऊँगा, क्योकि यह अच्छा नही होगा कि आप भी क्राति के अवसर पर बाहर रहे ? जयप्रकाश जी का रोम-रोम क्राति की भावना मे डूबा हुआ था। वह जान पर खेल जाने को तैयार थे। क्राति के समय वह बाहर अवश्य रहना चाहते थे, किन्तु यह किस प्रकार सम्भव होगा ? मै बाहर जाकर अभी से इसके लिए चेष्टा करूँ या क्राति के समय के हो-हल्ले के लिए प्रतीक्षा की जाए—आदि बातो पर हम कई दिनो तक विचार-विमर्श करते रहे।

जयप्रकाश जी का विश्वास था, जब क्राति शुरू होगी, यहाँ के जेल-अधिकारियो को वह क्राति के पक्ष मे ला सकेंगे। इस सम्बन्ध मे कुछ अफसरो से उन्होने बाते भी की थी। किन्तु उनका भी विश्वास था, सब कुछ क्राति की व्यापकता और प्रखरता पर ही निर्भर करता है। क्या बिहार के इस

एकान्त स्थान में क्राति वैसा रूप धारण कर सकेगा कि यहाँ के जेल-अधिकारी भयभीत हो जाएँ या उन्हे क्राति पर विश्वास हो जाए ? तो क्यो नही कुछ पहले निकल भागा जाय ? किन्तु तब गाधी जी पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? अच्छा हो कि हम प्रतीक्षा करें, तैयारी करे, ज्योंही क्रांति शुरू हो, हम चाहे किस प्रकार हो, जयप्रकाश जी को बाहर कर लें। इसके कौन-कौन तरीके हो सकते है ? हम सोचा करते—योजना पर योजना बनाई और मिटाई जा रही थी !

सात अगस्त से ही हमारे शरीर हज़ारीबाग जेल मे थे, कान बम्बई पर लगे थे। अख़बार तो मिलते ही थे, जेल के अफसर रेडियो पर सुनी खबरे भी हमें बता जाते। क्या होगा, क्या होने जा रहा है—सारे देश का ध्यान बम्बई पर टंगा था।

इस बार या तो जंजीरे टूटेंगी, दीवारें ध्वस्त होगी या वे पुकार उठेंगी, चिघाड़ उठेंगी—दोनो मे कौन-सा सम्भाव्य है, कौन बताए ?

इन्क़लाब ज़िन्दाबाद्

---

६ अगस्त। हम लोग सध्या को इस प्रतीक्षा मे थे कि रेडियो की कौन-सी खवर जेल का कोई अधिकारी पहुंचा जाता है। दिन भर वर्षा हो रही थी, अभी वूदावूदी खत्म नही हुई थी। कि, देखा जेल-गेट की ओर से अपनी लम्वी सुफेद दाढी लिए, धीरे-धीरे पग उठाते, हजारीवाग के नेता वावू रामनारायण सिह पधार रहे है! अरे, यह क्या वात हुई? क्या रामनारायण वावू हमसे मिलने आ रहे है? या वह गिरफ्तार कर लिए गए है? पीछे एक कैदी अपने सिर पर उनका सामान लिए आ रहा था। हम जान गए, वम्वई में विगुल वज चुका!

रामनारायण वावू ने वताया, किस तरह उनकी गिरफ्तारी हुई। हमने पूछा, इस वार गिरफ्तार होने की तो वात नही थी, 'करो या मरो' की वात थी। उन्होने कहा—जब पुलिस-इन्सपेक्टर आया, मै भी कुछ पशोपेश मे रहा, गिरफ्तार होऊ या नही। ऐसी सहूलियत भी थी कि मैं भीतर जाकर

पिछले दरवाजे से खिसक जा सकता था; किन्तु मुझे यह उचित नही जान पड़ा। सोचा, देखे क्या होता है ?

अब तो यह निश्चय हो चुका कि मैं जमानत पर रिहा नही किया जा सकता। पटना से जिन लोगों को जहा भी हों, गिरफ्तार करके जेल मे नजरबद कर देने की जो पहली लिस्ट निकली थी, उसमे एक नाम मेरा भी था।

धीरे-धीरे, दो-तीन दिनों के अन्दर ही, छोटा नागपुर के हर जिले के प्रमुख कांग्रेस-नेता पकडकर हजारीबाग जेल में ले आए गए।

उनके मुह से, अखबार से, जेल वालों द्वारा रेडियो से जो समाचार हम प्राप्त कर सके, उनसे पता चल गया, देश ने अपने को क्रान्ति के हवन-कुड में झोंक दिया है। क्रान्ति की ज्वाला देश-भर मे धू-धू जल रही है ! बम्बई ने ही रास्ता दिखाया है। आवागमन के सारे साधन ठप्प हो चुके है। देश मे जगह-जगह रेल की पटरियां उखड़ रही है, तार-टेलीफोन का सम्बन्ध-विच्छेद हो चुका है। थानों पर कब्जा किया जा रहा है। कचहरियां वीरान हो रही है। धुआंधार गोलिया चल रही है। सड़कों पर बैरिकेड बन रहे है। स्टेशन-घर लूटे जा रहे है। जो एकाध गाडियां चल पाती है, वे क्रान्तिकारियों की मर्जी से। नेताओ ने जो सोचा हो, देश की जनता ने 'करो या मरो' के गाधीपाठ को अच्छी तरह हृदयंगम कर लिया है।

सरकार ने नृशंस रूप धारण कर लिया है। कोडरमा से

एक डाक्टर आए। उन्होने बताया, किस तरह वहा अधाधुध गोलिया चलाई गई। घायलो की चिकित्सा को वह आगे बढे, तो उन्हे भी गिरफ्तार कर लिया गया। जिस 'बस' पर घायलो को लाया गया, उसी पर डाक्टर को भी रख लिया गया। रास्ते भर घायल तड़पते रहे, पानी-पानी करते रहे, न उन्हे पानी दिया गया, न डाक्टर को ही बार-बार के आग्रह पर, उनकी सेवा करने का मौका दिया गया ! डाक्टर रो रहे थे, उनकी आखो से आंसू जारी थे ! एक घायल तो रास्ते मे ही मर गया। तमाशा हुआ, जेल-गेट पर ! पुलिस कहती थी, इस लाश को भी रख लीजिए, जेल वाले कहते थे, हम लाश क्यो ले ? पुलिस वाले का कहना था, हमे हुक्म हुआ था, इतने लोगो को जेल पहुंचा आओ, रास्ते मे मर गया, अब हम उसे कहा ले जाएं ? रात भर वह लाश जेल-गेट पर ही पड़ी रही।

लोगो की वीरता और सरकार की नृशसता की ऐसी खबरे आ रही थी कि रोगटे खडे हो जाते थे। पटना के विद्यार्थियो ने कमाल किया। वे सेक्रेटेरियट पर कब्जा करने चले। वहा फौज और सशस्त्र पुलिस का जमघट जुटा था। विद्यार्थियो की टेक थी—कम से कम हम इसपर अपना झडा तो फहरायेगे ही। कशमकश बढ़ता गया, गोलियाँ चली, कई विद्यार्थी वही ढेर हो गए, किन्तु अहा ! सामने देखिए, झडा लहर कर रहा ! न जाने किस तरह एक विद्यार्थी ऊपर चला गया, झडा लहरा दिया। सामने जो विद्यार्थी दम तोड़ रहे थे, उन्हे इस झडे को देखकर कितनी प्रसन्नता हुई होगी !

छोटे-छोटे बच्चे निधड़क तार और टेलीफोन के लम्बे खंभे पर चढ़ जाते और उसमें लगे उजले डब्बे को तोड़कर तार-टेलीफोन की लाइन खराब कर देते। रिक्शे वालों ने तो और कमाल किया। घरेलू नौकरों ने तुरत अपना संगठन बनाया और यातायात को अवरुद्ध कर देने का जिम्मा अपने ऊपर लिया। पेड़ों की मोटी-मोटी डालों को काटकर, घर की फालतू चीजों का सड़कों पर अम्बार लगाकर, उन्होंने रास्ता जाम कर दिया। एक ओर से सड़कें साफ की जातीं कि पीछे से न जाने कौन लोग कब आकर फिर बैरिकेड बना देते। 'शूट ऐट साइट'—देखते ही गोली मारो, का स्थायी आर्डर हथियारबद पुलिस और सैनिकों को दे दी गई थी। किन्तु किसको इसकी परवाह थी !

सड़कों को खोद डालने और पुलों को तोड़ने के भी व्यापक प्रयत्न हुए। साधारण कुदाल, गैंता, हथोड़ा, छेनी से वह कमाल किया गया कि देखने वालों को आश्चर्य होता। क्या बिना किसी खास औजार के आदमी यह कर सकता है, यह प्रश्न बार-बार उठाया जाता !

कितने रेलवे-गोदाम लुट गए, कितनी रायफलें छीन ली गईं। देहातो मे तो और भी घनघोर हुआ, पुलिस वर्दी फेंककर पनाह मागती फिरती थी। जिन्होंने हेठी दिखलाई, जलते हुए थाने की भट्ठी में उन्हे भी झुलसना पड़ा !

हां, यह इन्कलाब है। 'बम्बई से आई आवाज—

इन्कलाब जिन्दाबाद ।' न जाने किसने यह नारा दिया, जो देश के कोने-कोने मे फैल गया !

बाहर इन्कलाब हो रहा, और हम जेल मे बैठे हलवा-पूडी उड़ाते रहे ! हम छटपटा रहे थे ! जयप्रकाश जी की बेचैनी का क्या कहना ? हम लोग प्रतिदिन सोचते, तुरत-से-तुरत कुछ किया जाना चाहिए ।

उन दिनो भारत पर जापान की चढाई निकटतम समझी जा रही थी । रांँची को सुरक्षा की दूसरी पात—सैकेंड लाइन आफ डिफेंस—बनाया जा रहा था । दिन-रात वायुयान हमारे सिरो पर गडगडाते रहते । सेना के डिवीजनो को वहां एकत्र किया जा रहा था । एक दिन संध्या को भारी मोटरो के जाने की जो गड़गडाहट शुरू हुई, तो वह रातभर तक चालू रही । राची से फौज की टुकड़ियां पटना भेजी जा रही है, हमने तुरन्त समझ लिया । इसका क्या अर्थ ? हम रात-भर छटपटाते रहे । ये टुकड़ियां पटना पहुंची नही कि क्रान्ति को शस्त्रबल से कुचल दिया जाएगा । पटना और रांची के बीच दामोदर पर एक पुल है । बाढ़ आई हुई थी, यदि उस पुल को उड़ा दिया जाता, या तोड दिया जाता, तो फौज का उस तरफ भेजना कुछ समय के लिए दुष्कर कार्य हो जाता । अबरख की खानो के लिए उस तरफ विस्फोटक पदार्थो की कमी नहीं थी । थोडी सूझ की बात थी; नेतृत्व की आवश्यकता थी । अरे, योग्य नेतृत्व के अभाव मे क्रान्ति कही बिखर नही जाय, दबा नही दी जाए !

नही, अब हमें निकल ही जाना चाहिए। कैसे निकले ? शुक्ल जी ने एक साहसिक कार्यक्रम रखा ! भोर में जो कैदी बगान मे जाते है, वे दोपहर को लौटते है। उनके साथ बैल-गाड़ी होती है, जिस पर बगान से शाक-सब्जी आती है। यों साधारणतः जेल का एक ही फाटक एक बार खोला जाता है। किन्तु बैलगाड़ी को प्रवेश देने के लिए बाहर और भीतर दोनों के फाटक एक साथ खोल दिए जाते है। हम मे से कुछ लोग पहले से ही जेल-गेट चले जाए, आफिस के काम का बहाना करके। ज्योंही दोनों फाटक खुले, कुछ लोग दोनों फाटकों पर चले जाएं और चाबियों के गुच्छे गेट-वार्डर से छीन ले। कुछ लोग सुपरिन्टेन्डेन्ट और जेलर के आफिसो में घुस कर टेलीफोन की लाइन तोड़ दे। तब तक भीतर हमारे साथी गेट के निकट तैयार रहे और हल्ला बोल दें। अगले गेट से निकलकर हम मैगजीन पर छापा मारे। कुछ रायफले तो बाहर ही खड़ी करके रखी रहती है। उन्हे उठा ले और दो-चार फायर करके जेलवालो को भयभीत कर दे। फिर मैगजीन लूटकर हम निकल भागे। आगे जो होना होगा, देखा जाएगा !

बड़ा साहसिक था यह कार्यक्रम। किन्तु हम में भी साहस की कमी नही थी। हर मोर्चे के लिए साथियों का चुनाव भी कर लिया गया। करो या मरो—फिर डरना क्या ?

किन्तु, जयप्रकाश जी कहते है, हम तो निकल जायगे, पर उन लोगो का क्या होगा, जो निछ्छ सत्याग्रही है। क्या

यह उनके साथ अन्याय नही होगा कि हम तो बाहर चले जाए, और उसके चलते होने वाली मुसीबते उन्हे मुफ्त मे झेलनी पडे ? उचित तो यह होगा कि उनमे से कुछ विश्वस्त लोगो को पहले से ही चेता.नी दे दी जाए। हम मे से कुछ को यह नैतिकता की पराकाष्ठा मालूम हुई, किन्तु जयप्रकाश जी की बात कौन टाले ! अपने जानते कुछ विश्वस्त आदमियो को ही चुनकर उन्होने बुलाया, जेल मे पडे रहने की व्यर्थता बताई और धीरे-धीरे यह भी चर्चा कर दी कि किसी तरह हम लोगो को यहा से निकल जाना चाहिए। जब उनमे से एक ने इसका उपाय पूछा, तो इस योजना की भी एक झलक दे दी ! कुछ लोगो ने तो वही इससे अस्वीकृति बताई, लेकिन वे सब के सब इस बात को गुप्त ही रखेंगे, ऐसा तो विश्वास कर ही लिया गया।

आश्चर्य ! महान् आश्चर्य ! हमने पाया, दूसरे दिन से ही लोगो को जेल-गेट पर आने-जाने से मना कर दिया गया है। लीजिए, यह योजना व्यर्थ गई !

तब दूसरी योजना बनी। हममे से छ आदमी जेल-दीवार को लाँघकर पार कर जाए। उन छ मे एक मै भी रखा गया था। जेल की दीवार की ऊचाई मालूम कर ली गई। नीचे एक टेबुल रखकर जब उस पर दो आदमी—एक के कधे पर दूसरा—इस तरह खड़े हो जाएं, तो दीवार की आखिरी छोर को पकड़ सकते है। तब तीसरा आदमी टेबुल और इन दोनो के शरीर को जीना बनाकर चढे और दीवार

को लाघ जाए। दीवार के उस पार, दीवार का सहारा लेता हुआ, इस तरह गिरे कि गिरने का शब्द नही हो और न उसके पैर मे चोट आये। जो आदमी उस ओर गिरे उसकी कमर मे धोतियों को एठ कर बनाई एक मोटी रस्सी बंधी हो, जिसमे जगह-जगह गाठे पड़ी हों। उस रस्सी का एक छोर इस ओर हो, जिसे एक आदमी ने सावधानी से पकड़ रखा हो। उसके बाद तो इस रस्सी के सहारे ही लोग दीवार लाघते जाएगे।

दीवार कहा पर लांघी जाए, इसका भी निर्णय हो गया और दीवार लाघने वालो ने एक सेल मे इसका अभ्यास भी शुरू कर दिया।

कि फिर भद्रा आ पड़ी। एक दिन जेल की दीवारों के पीछे भी सशस्त्र सैनिको का पहरा पड़ने लगा। यह क्या हो गया—क्यो हो गया ? जेल मे चर्चा होने लगी, कांग्रेस-कार्य-समिति के सदस्यों को यहां ले आया जाएगा। उनके लिए एक वार्ड भी खाली कराया जा रहा है, इसकी भी खबर हुई। हम लोगो से पृथक्, साधारण कैदियों का एक वार्ड था, उसकी सफाई होने लगी। अब तो भागने का यह प्रयास भी व्यर्थ गया, हमने जान लिया।

कांग्रेस-कार्य-समिति के सदस्य नही आए, जमशेदपुर के विद्रोही पुसिल-दस्ते वहाँ लाकर रखे गए। उनके नेता थे रामानन्द तिवारी। जेल मे पहुंचने पर तिवारी जी का कितना स्वागत हुआ! तिवारी जी पुलिस के साधारण सिपाही थे,

लेकिन प्रारम्भ से ही गाधी जी के भक्त। चर्खा कातते, खादी पहनते, गाधी जी के लेखो के ढूँढ-ढूँढकर पढते। जमशेदपुर मे लोहे का सबसे बड़ा कारखाना था। सरकार उसको सुरक्षित रखना चाहती थी। किन्तु तिवारी जी के नेतृत्व मे सिपाहियों ने दमनात्मक कार्रवाहियो मे भाग लेने से इन्कार कर दिया। फलत वे गिरफ्तार किए गए और यहाँ लाकर अलग-अलग रक्खे गए।

इन लोगो के साथ साधारण कैदियों का-सा बर्ताव किया जाने लगा। यही नही, बहुत-से लोग गिरफ्तार करके इस जेल मे ठूस दिए गए थे। उनमे से अधिकाश के साथ भी साधारण कैदी-सा ही व्यवहार किया जा रहा था। हमने इसके प्रतिवाद मे आवाज उठाई। पहले तो ऐसा लगा कि काग्रेस के अधिकाश नेता इस सम्बन्ध मे हम लोगो के साथ है, किन्तु धीरे-धीरे उनमे दो दल हो गए। एक दल ने हम लोगो के साथ साधारण कैदियो का ही भोजन लेना शुरू कर दिया। १९३० की घटना फिर १९४२ मे दुहर गई।

उधर १९४२ का अगस्त-इन्कलाब धीरे-धीरे दम तोड रहा था। बिहार के कोने-कोने मे गोरे सैनिक भेज दिए गए थे। वे गाँवो मे आग लगाते, जहाँ भी सदेह होता, गोलियाँ चला बैठते, किरचो, बूटो और ठोकरो का मनमाना प्रयोग करते। मेरा गाव चारो ओर से पानी से घिरा हुआ था, उसकी क्षतिपूर्ति उन्होने बेदौल के दो आदमियो की जान लेकर की। जो लोग जेलो मे लाए गए, उन पर लम्बी-लम्बी सजाएँ

थी। ऐसे भी बूढ़े लोग थे जिनकी कुल सजाएँ मिल कर साठ-सत्तर साल तक जाती थी। यानी इस सजा को पूरा करने के लिए उन्हें फिर जन्म धारण कर जेल जाना पड़ता। जेल मे कितने लोग आए, जिनके शरीर मे गोलियों और किरचो के बड़े-बड़े ज़ख्मों के ताजा निशान थे। बिहार के एक मिनिस्टर श्री जगलाल चौधरी के बेटे की जान उनके घर में घुसकर ली गई; उनके भतीजे के शरीर में ज़ख्मों के चिह्न ही चिह्न थे। हम लोग चेष्टा कर भी नही भाग सके, किन्तु ऐसी चेष्टाएँ कई जेलो में की गई। मधुवनी जेल से एक-एक कैदी निकल भागे, भागलपुर जेल मे तो एक महाकाड ही हो गया। लोगो ने भागने की चेष्टा की, तो ऐसी अधाधुन्ध गोलियों की वर्षा की गई कि अनेक साधारण कैदी भी मारे गए। हाजीपुर जेल से भी सभी कैदी निकल गए। अन्य कई जेलों से लोग भागे। और ऐसा भी हुआ कि लोगों ने पुलिस वालो को भी पकड़ कर कई दिनो तक कैदी बना रक्खा। लेकिन अब सारा मामला ठठा पड़ता जा रहा था।

हाँ, ज्योति की रेखा यह थी कि हमारे कुछ साथी बाहर थे और जो भी सम्भव था, इस विप्लव की धूनी को जलाते रहने के लिए कर रहे थे। अच्युत, लोहिया, अरुणा, बसावन आदि सैकड़ों साथियों की वीरतापूर्ण कारवाइयो की खबर हममे आनन्द ही नही, छटपटाहट भी पैदा करती। मै उन दिनों 'जोश' की कविताओ का अध्ययन कर रहा था, 'शिकस्ते ज़िन्दाँ का ख्वाब' मै गुनगुनाया करता—

लो हिन्द का जिन्दाँ कांप उठा और गूँज रही है तकबीरें।
उकताए हैं शायद कुछ कैदी और तोड़ रहे है जजीरें॥

ओ जजीरे, तुम कब टूटोगे ? ओ दीवारे, तुम कब ढहोगे ? हम ढहेगे, हम टूटेंगे—मुझे अहसास होता, वे कह रही हैं। मै प्राय झूमझूमकर गा उठता।

महापलायन (क)

बुद्ध ने घर छोड़कर, उस आधी रात को, जो अद्भुत यात्रा की, बौद्ध साहित्य में उसे महाभिनिष्क्रमण का नाम दिया गया है। हमारे साथियो ने ६ नवम्बर की रात में, जेल की अलघ्य दीवारो को पारकर, जो पलायन किया, उसे महा-पलायन का नाम क्यो नही दिया जाय ?

दोनो मे एक महान् आदर्श काम कर रहा था। दोनो में एक सदिग्ध भविष्य पर अपने को अर्पित किया जा रहा था। दोनों में ससार के सारे माया-मोह को पीछे छोड़ा जा रहा था। दोनों के मूल मे यह निश्चय था—करो या मरो। वैसा ही घोर अन्धकार—किन्तु सिद्धार्थ कुमार घोड़े पर जा रहे थे, ये छः जो उस रात को चले, उनके पैरों मे जूते तक नहीं थे।

तिवारी जी और उनके साथियो पर मुकदमा चला, सजा हुई, वे हजारीबाग से अलग-अलग जेलों में भेज दिये गये। जेल की दीवारों के बाहर का पहरा उठा दिया गया। अब जेल के जीवन मे ऊपर-ऊपर स्वाभाविकता दीखती थी।

हम सी० क्लास का भोजन लेते। जयप्रकाश जी बीमार थे ही, इस भोजन ने उन्हे और भी दुर्बल कर दिया, मेरी मूर्च्छा की बीमारी बढती गई। तो भी हम बडे आनन्द और उत्साह का जीवन व्यतीत करते। जेल मे पार्टी का एक कन्सोलिडेशन बनाया गया, मै उसका मत्री था। पार्टी के मेम्बरो के शिक्षरण की ओर सबसे अधिक ध्यान दिया गया। नियमित बैठके होती, क्लास होते। जो लोग नये-नये आये थे, उन्हे पार्टी मे शामिल करने की चेष्टा होती। पार्टी के सदस्यो की सख्या बढती जाती। जयप्रकाश जी ने मार्क्सवाद पर एक क्लास शुरू किया। उसमे काग्रेस के अच्छे-अच्छे नेता भी शामिल होते। हम लोगो के अनुकरण पर कुछ गाधीवादी नेताओ ने क्लास करना शुरू किया, किन्तु यथार्थ बात तो यह है कि गाँधीवाद के सैद्धान्तिक पहलू का बाजाप्ता अध्ययन उनमे से किसी ने नही किया था। चरखा चला लेने को ही वे गाँधीवाद का परम लक्ष्य मानते थे। अत उनके क्लासो मे कोई बौद्धिक तत्व मिल नही पाता था। वे क्लास आप से आप बद होते गये।

राजेन्द्र बाबू पटना जेल मे ही रखे गये थे। दमे ने उन्हे परीशान कर रखा था। डाक्टरो ने उन्हे हजारीबाग नही भेजे जाने की सलाह दी थी। काँग्रेस-कैम्प के नेता श्री बाबू और अनुग्रह बाबू थे—हाँ, उनके चेलो मे कुछ अदल-बदल चल रहा था। इनके चेले उनके पास, उनके चेले इनके पास—ताश के पत्ते नये ढग से फीसे जा रहे थे।

खेलकूद का सिलसिला चलने लगा। ताश, शतरंज, वॉली-बाल, बेडमिंटन की प्रतियोगिताएं चलने लगी। मैंने 'तूफान' नाम से एक हस्तलिखित पत्रिका निकालना शुरू किया। 'कैदी' से भी अधिक शानदार यह 'तूफान' निकलने लगा। एक तरह से जेल में यह पार्टी की मुख्य पत्रिका थी। यों दूसरे लोग भी लिखते थे।

किन्तु, इस स्वाभाविक जेल-जीवन के अन्दर हममें एक कसमसाहट जारी थी। ज्योही बाहर का पहरा हटा, फिर जेल से निकल जाने की छटपटाहट शुरू हुई। जयप्रकाश जी किसी भी तरह, किसी भी कीमत पर, बाहर जाना चाहते थे। दीवार के उस पार जाना तो कोई मुश्किल काम नही था, सवाल यह था कि घोर जंगल होकर किस तरह पचास-साठ मील की दूरी पार की जा सकेगी। सड़क पकड़कर जाने मे खतरा था, हा, यदि मोटर मिल जाय, तो यह खतरा भी लिया जा सकता है।

क्या मोटर मिल सकती है ? एक अफसर जेल में प्रायः आया करते। कभी वह युवक-संघ के सदस्य थे। क्यों न उन्ही से कहा जाय ? लेकिन वह क्यों आफत मोल लेना चाहेगे ? जयप्रकाश जी का सहज उत्तर था—क्या हुआ, यदि उन्हें नौकरी खोनी पड़ी। स्वराज्य होने पर हम क्षतिपूर्ति कर देगें। किन्तु यदि उनमे इतना आत्मबल होता, तो उन्होने नौकरी ही क्यों कर ली है ?

इतने ही में कटक मे पकड़े जाकर रामनन्दन इस जेल मे

लाये गये। उन्होने बाहर के गुप्त संगठन पर प्रकाश डाला और बताया, यदि जयप्रकाश जी बाहर चले जाय, तो फिर एक बार बडे पैमाने पर, किन्तु सगठित रूप से क्रान्ति की जा सकती है। गाधी जी जेल मे चुपचाप नही रहेगे, वह कोई महान् कदम उठायेगे ही और वही मौका होगा, जब हम फिर क्रान्ति शुरू कर देगे। उसके लिए एक देशव्यापी सगठन का जाल भी बिछाया जा रहा है। चलो, भागो!

फौलाद गलती है, पत्थर पसीजता है। जजीरे टूटती है, दीवारे गिरती है! कब तक ये जजीरे? कब तक ये दीवारे? हम इन जजीरों को तोड़ेगे, इन दीवारो को लाघेगे!

दीवार फाँद जाय—इसके लिए तो हम अभ्यास भी कर चुके है। अब इस शान्त वातावरण मे उसका प्रयोग सर्वथा सम्भव है। किन्तु इस प्रयास की परिणति एक और हो सकती है, जिसके प्रतीक रूप मे बाबा सूचासिंह इस समय हम लोगो के बीच मे हैं। हम सहम उठते है, काँप उठते है!

बाबा सूचासिंह—पाँच हाथ का लम्बा-तगडा शरीर। सफेद दाढ़ी-मूछ। नुकीली नाक। ओजपूर्ण मुखमडल। जब हसते, उनके घिसाये-घिसाये दात से दूध चू पडेगा, ऐसा लगता। बच्चो-सा भोलापन। विनम्रता की मूर्ति। हाथ मे सुमरनी—सदा 'जपजी' का पाठ किया करते। कौन कह सकता था, यह साधु-स्वभाव सज्जन कभी गदर पार्टी मे था, अग्रेजी राज्य के खिलाफ क्राति का झंडा बुलन्द करने चला था; पकड़ा गया, काले-पानी की सजा पाई थी, हजारीबाग जेल में लाया

गया था और फिर इसकी इस ऊंची दीवार को पार कर अपने प्रान्त में पहुंच गया था और वहाँ बीस वर्षो तक छद्म-वेश मे साधु-जीवन व्यतीत करता हुआ, अपने भोलेपन से फिर यहाँ आ पहुँचा है और अब फिर इस पंजाबी सेल मे तब तक उसे रखा जाने वाला है, जब तक उसकी मृत्यु न हो जाए ! हां, उसकी टिकट पर यही लिखा हुआ है ।

१९१५ के असफल विद्रोह के समय सूचासिह फौज में थे । वह घुड़सवाड़ पल्टन में थे । गदर पार्टी के लोगों से इन का सम्पर्क बढा, इन्होने अपने को क्रांति के लिए न्योछावर किया । तय हुआ था, अमुक तारीख को पंजाब से बंगाल तक एक ही साथ क्राति का बिगुल बज उठेगा । उस दिन सूचा-सिह अपने साथियो-सहित छावनी से निकलकर अमुक स्थान पर क्रातिकारियों से जा मिलेगे । वह बिगुल तो नही बज सका, एक दिन पहले ही उसके सारे नेता पकड़ लिए गए, किन्तु यह खबर सूचासिह को नही मिल सकी । पूर्व निश्चय के अनु-सार वह अपने साथियों-सहित छावनी से भाग चले । निश्चित स्थान पर पहुँचे, तो कोई नहीं मिला । बात क्या हुई ? साथियों ने कहा, हम छावनी मे लौट चले, कोई बहाना बना देगे । किन्तु सूचासिह अपने कदम को पीछे नही धर सकते थे । अपने घोड़े को छोड़ दिया, खुद फरार की जिन्दगी बिताने लगे, और प्रतीक्षा करने लगे, क्रान्ति की दूसरी लहर आयेगी ही ।

वह लहर नही आई, नही आई । फरार हालत मे कभी-

कभी अपने घर जाया करते, किन्तु पिता ने मना कर दिया, मत आओ, तुम्हारे कारण सारा परिवार सकट मे जा पड़ेगा। अब क्या हो ? किन्तु इस उत्तर की भी उन्हे अधिक दिनो तक प्रतीक्षा नही करनी पडी। इनाम की लालच मे इनके सगे सम्बन्धियों ने ही गिरफ्तार करा दिया। आजीवन कालेपानी की सजा हुई। किन्तु कालेपानी मे तो जर्मन गोताखोर एमडन ने तूफान मचा रखा था। अत अनेक पंजावी क्रातिकारियो के साथ सूचासिह को हजारीवाग जेल मे लाकर रखा गया।

हजारीवाग जेल मे जहा वगाली वावू कैदियो को सभी सुविधाए प्राप्त थी, वहा इन पजावी राजवन्दियो के साथ अमानुषिक व्यवहार किया जाने लगा। वावू वार्ड के नाले मे घी वहता, पजावी सेल मे सूखी रोटी तक मुहाल थी। इन लोगो ने इस व्यवहार के खिलाफ आवाज उठाई। जेलवालो ने प्रतिहिंसा का रुख लिया। जेल की ऐसी कोई सजा नही थी, जो इन्हे नही मिली हो। अन्तत ऊपर के अधिकारियो का ध्यान गया, इनके साथ थोड़ी रियायत शुरू हुई।

किन्तु यह रियायत कव तक ? इन लोगो ने तय किया, चलो हम भाग चलें। सेलो मे हवा आने के लिए छत के निकट गोल छेद थे। उन्ही छेदो से होकर दो छरहरे जवान एक रात को निकल आये और पहरे के वार्डर को मुश्क वाध कर लिटा दिया। फिर उस वार्डर से चाबियो का गुच्छा लेकर एक-एक सेल को खोलने लगे। अन्धेरी रात, भागने की हड़-

बड़ो—एक-एक गुच्छे में छब्बीस-छब्बीस चाबियां। किस ताले की कौन-सी चाबी है, इसका निर्णय करना कठिन। तो भी लगभग पन्द्रह साथियों को वे निकाल सके। इतने ही में जेल का जमादार गश्त पर आ गया। उसने हल्ला किया। सेलों से निकले कैदी दीवार तड़पकर भागने लगे।

इनका कार्यक्रम था कि सभी पजाबी कैदियों को छुड़ाकर बाबू वार्ड के कैदियो को भी छुड़ा लेगे। फिर जेल का सदर दरवाजा तोड़कर बाहर निकलेगे, मैगजीन पर कब्जा करेंगे और सशस्त्र होकर जंगल में लुकते-छिपते लड़ते-मरते अपने प्रान्त की ओर रवाना हो जाएँगे।

यह नही हो सका! दीवार से फादते समय कई के पांव टूट गये, वे निकट के खेतों में जा छिपे। कुछ लोग दीवार के इस पार ही पकड लिये गये। जो लोग भाग सके, उनमें कई इधर-उधर बिखर गये। सूचासिह का दल जंगल-जंगल भागता मुगलसराय तक गया, फिर लोग अलग-अलग होकर रेलगाड़ी से अपने गंतव्य स्थान की ओर चले।

सूचासिह अपने दल की दुर्गत बताते थे। रास्ते में कई बार शेरों की गुर्राहट सुनाई पड़ी, कई बार हाथियो के झुण्ड मिले। कभी-कभी पानी मिलना भी मुहाल हो जाता। पेड़ों से लस्सा लेकर इन्होंने अपनी दाढियाँ नोंच डालीं। एक जगह आग मिली, तो उसी से अपने बाल और बची-खुची दाढ़ी-मूँछ जला लिये।

खैर, ये लोग तो किसी कदर बच निकले, जो पकड़े गये,

उनकी बड़ी दुर्गत की गई। जो लोग बिखर गये थे, उनमें से दो-तीन आदमी एक पुल के नीचे जा छिपे थे। उन्हे वही गोलियो से भून दिया गया और पैर मे रस्से लगाकर, सूअर की तरह जमीन पर घसीटते हुए जेल-गेट तक लाया गया था।

हजारीबाग से पंजाब लौटकर सूचासिह ने साधु का बाना पकडा। नाम बदल लिया, एक कुटिया बना ली। जब १६३७ मे काग्रेसी मन्त्रिमंडल कायम हुआ, काग्रेसी प्रान्तो के राजबंदी छोडे जाने लगे। सूचासिह ने सोचा, वह भी अपने को क्यों नही प्रकट कर दे ? किन्तु पजाब मे काग्रेसी मन्त्रिमंडल तो था नही ! निकट के एक पुलिस-अफसर से वह मिले और अपना परिचय और अभिप्राय बताया। उस दुष्ट ने इन्हे गिरफ्तार करके फरार को पकड़ने का इनाम पाया। सूचासिह अपनी सजा भुगतने और भागने की सजा पाने को हजारी-बाग भेज दिए गए। उनके टिकट पर लिखा है—खतर-नाक कैदी, इसे मृत्युपर्यन्त तनहाई सेल मे रखा जाए !

कही हमारे इस महापलायन की भी यही गत हुई तो ? लेकिन चाहे जो कुछ हो, जयप्रकाश जी निकल भागने का तय कर चुके थे ! कोई भी आशका या भय उन्हे नही रोक सकता था ?

एक नई योजना बनाई गई। जेल लगभग आठ बजे बद होता था। ज्यो ही अधेरा हो, हममे से छ आदमी दीवार लाघकर निकल जाए। साथ मे एक स्थानीय व्यक्ति हो, जो इन्हे किसी विश्वस्त गाव मे कुछ दिनो तक छिपाकर रखे।

जब मामला ठंडा पड़े या किसी शीघ्रगामी सवारी का प्रबन्ध हो जाए, तो ये लोग कलकत्ता चले जाएं। कलकत्ता पहुंचकर ये एक अमुक पुस्तक किसी के नाम से जेल में भेजेंगे, तब हम समझ जाएगे, वे लोग सुरक्षित पहुंच गए ! जब लोग निकल भागें, तो जेल मे कुछ ऐसा समां बना दिया जाए कि वार्ड बंद होने तक किसी को कुछ भनक भी नहीं मालूम पड़े। इस काम की जिम्मेवारी मुझ पर रखी गई।

एक स्थानीय विश्वस्त व्यक्ति भी मिल गए। बाहर से कुछ नकद पैसे भी मगा लिए गए। दीवार फादने का गुप्त अभ्यास भी चलने लगा।

इतने ही मे विजयादशमी आ गई। हम लोगो ने सोचा यदि पर्व के नाम पर कुछ देर बाद में वार्ड-बदी की जा सके, तो भागने वालों को अधिक सुविधा होगी। मै दौड़ा-दौडा काग्रेस-नेताओ के पास गया और उनसे कहा कि आज हम उत्सव मनाएगे, देर से बद होगे। आप लोग जेल-अधिकारियों को कह दीजिए, नही तो गड़बड़ होगी। उनके निकट बैठे हुए कुछ काग्रेसियो ने भी मेरी बात का समर्थन किया—जेल में कौन ऐसा आदमी है जो थोड़ी देर अधिक सेल से बाहर रहना पसंद न करे ! नेताओ ने मुस्कुरा दिया, हमने उसे सहमति मान ली और उस रात ग्यारह बजे तक हम एक दूसरे से मिलते-जुलते रहे।

लेकिन यह क्या ? इस सुविधा से कोई अन्य ही सज्जन आज ही फायदा उठाना चाह रहे है। अगस्त की आंधी में

कुछ ऐसे लोग भी आ गए थे, जिनका चरित्र दूषित था। उन लोगों ने आज निकल भागना चाहा। कुछ नए वार्ड बन रहे थे, जिनके लिए सीढियां लाई गई थी। हम लोग देख रहे हैं, न जाने कैसे एक सीढ़ी जेल की आखिरी दीवार के नीचे पडी है। अब क्या होगा ? एक तो हमे सजग रहना है कि आज कोई भाग नही सके, नही तो सारा गुड गोबर हो जायगा। फिर सीढ़ी को भी वहा से हटा देना है, क्योकि यदि जेलवालो ने सीढी देख ली, तो भी गडगड होकर रहेगी। किन्तु सीढी हटाई कैसे जाए ? कही हटानेवाले को ही अपराधी घोषित कर दिया गया ! उफ, हमारी परीशानी ! शुक्ल जी की सूझ ने काम किया, बड़ी-बडी मुश्किलो से हम वहां से सीढी हटा सके !

अब तय कर लिया गया कि दीवाली को हमारे छ साथी निकल भागेगे। क्योकि उस दिन हम वार्ड-बदी मे और भी देर करा दे सकेगे और पूरी अंधेरी रात रहने से लुकछिपकर भागना भी आसान रहेगा।

वार्ड-बदी के समय कैदियों की गिनती ली जाती है। अत. उस समय भडाफोड होकर रहेगा, यह हमारा विश्वास था। हम क्या जानते थे कि इस महापलायन के अगले दिन की दुपहरिया तक हम इस रहस्य को सफलता से गुप्त रख सकेगे ?

महापलायन (ख)

आज दीवाली है। भोर से ही में वार्ड-वार्ड घूम रहा हूं और कह रहा हूं, रात में हम ऐसा नाटक प्रस्तुत करेंगे कि आप लोग जिन्दगी भर नही भूल सकियेगा। लोग उत्सुकता से पूछ रहे है, बताओ भाई, कौन-सा नाटक खेलने जा रहे हो ? पोशाक कहां से आएगी ? पर्दे भी रहेगे क्या ?—मै कह रहा हूं, सब रहेगे, देख लीजियेगा !

जेल हुआ, तो क्या ? पर्व का आनन्द तो सबके दिलों मे है ही। लोग भी खाने-पीने की तरह-तरह की तैयारियां कर रहे है। एक दूसरे से मिलने को इधर-उधर जा रहे है।

जयप्रकाश जी ने दस दिनों से दाढ़ी बनाना बन्द कर दिया है। कहते हैं, जरा देख रहा हूं, इस शक्ल में कैसा दीख पड़ता हू ? लोग मुह बनाते है—ऐसे सुन्दर चेहरे को क्यों जंगल बना रहे है ? वह हंसते हैं—दाढी मेरी बड़ी कडी है, कुछ दिनो तक हजामत नही बनाने से शायद मुलायम हो जाए ! वह आज सवेरे से ही लोगो से हिलमिल रहे है, कहीं ताश के

हाथ जमे, कही शतरंज की चाले हो गई। संध्या को एक काग्रेस-नेता के साथ उनकी बैडमिंटन की बाजी है—लोग उत्सुकता से इस मैच को देखने की प्रतीक्षा मे हैं।

शुक्ल जी बार-बार मेरे पास आते है और कहते है, वह कविता सुनाओ, वही—'टूट रही है जजीरे !' जब मै गाने लगता हू, वह मस्त हो जाते है और बड़ी उपेक्षा से जेल की दीवारों को देखने लगते है ! कई बार, कई जेलो से उन्होने भागने की चेष्टा की थी—आज उनकी चिर-सचित अभिलाषा पूरी होने जा रही है न ?

रामनन्दन के चेहरे पर भी उमंग है—यह नई धुन तो उन्होने ही लगाई है ! हंसते-हसते चिकोटी काट लेने से बाज नही आते।

सूरज का क्षत्रियत्व जाग उठा है। गुलाली ने इतने दिनों तक इसी दिन के लिए तो कसरत की है। शालिग्राम को पथ-प्रदर्शन करना है। नये खिलाड़ी है, अपने उत्तरदायित्व का अनुभव कर रहे है।

हमे चिन्ता हो रही है, कही जयप्रकाश जी के पैर का साइटिका का दर्द नही उभड़ आवे ! किन्तु शुक्ल जी आश्वासन देते है, कोई बात नही, बाहर तो निकल जाने दो—मै उन्हे कधे पर ढोकर सात मील पहुंचा दूंगा। हा, वह गाव, जहा इन्हें ठहरना है, यहा से सात मील पर ही है ! और, सूरज तथा गुलाली के कधे भी तो मजबूत है।

मगर किसी उपाय से कोई सवारी का प्रबन्ध हो पाता, तो क्या कहना ?

दोपहर को हमने सुना, निकट के ही एक राजबन्दी छूटने जा रहे है। उनसे मेरी बड़ी पटती थी। जयप्रकाश जी ने मुझ से कहा, जरा उनसे बाते कीजिए न, कही सवारी का प्रबन्ध कर सके, तो बहुत बड़ी झंझट दूर हो जाये। किन्तु, डर हो रहा है, कही वह भंडाफोड़ न कर दे। पर ऐसा डर निरर्थक है, कम से कम उनकी सज्जनता तो हम जानते है। मै उनसे मिला, वह बिस्तर सम्हाल रहे थे। उन्होने पहले तो विस्मय प्रकट किया, किन्तु इत्मीनान दिलाया, वह इस बात को गुप्त ही रखेंगे और आज तो सम्भव नही, एक दो दिन के अन्दर कोई प्रबन्ध कर सकेंगे! भागने वालों मे से कोई उनसे अमुक स्थान पर मिले; एक सकेत भी तय कर लिया गया।

तब तक खेलने का समय हो गया था, जयप्रकाश जी मैच खेलने लगे, मै अपने नाटक मे लगा!

अरे, महानाटक तो यह महापलायन था, सिर्फ एक ऐसा खेल रचाना था, जिसमे लोग कुछ देर तक बहले रहे।

एक थाल मे आरती सजाई जाए, जिसमे बयालीस दीपक जले। उस थाल को एक खूबसूरत लडका लेकर आगे-आगे चले। उन दिनों एक फिल्मी गीत बहुत प्रचलित था—'दीवाली फिर आ गई सजनी!' इसी गीत को सामूहिक रूप मे गाते हम वार्ड-वार्ड मे घूमे और प्रत्येक राजबन्दी से

मिठाइया वसूल करे ! छ वार्डो मे खचाखच लोग भरे है, घूमते-घामते हम तीन-चार घटे काट ही लेगे। तब तक तो हमारे साथी उस गाव मे पहुंच ही जायेगे, फिर जो होना होगा, होगा। अभी हम उसके बारे में क्यो सोचे ?

जयप्रकाश जी 'छोकरा-किता' मे रहते थे। वही से भागना था। एक जगह दीवार पर निकट के पेड़ की छाया पडती थी। हमने उसी स्थान को पसन्द किया था, जिसमे दीवार लाघते समय निकट के प्रहरी नही जान सके। ज्योही अधेरा होने लगता था, दीवार के किनारे थोड़ी-थोड़ी दूर पर वार्डर खडे कर दिये जाते थे। निकट के वार्डर को किसी तरह दीवार के निकट से हटा लेना था। सुर्ती खिलाने के बहाने उसे हटा लिया जा सकता है, यह परीक्षा करके देख लिया गया था।

मैच खेलने के बाद जयप्रकाश जी ने हम लोगो से मन ही मन बिदा ली। हम लोग भी भर आए थे ; किन्तु फूलन जी से नही रहा गया। उनके मुँह से एक बात निकल गई, जिसमे जयप्रकाश जी की बीमारी और दुर्बलता की चर्चा थी। जयप्रकाश जी का चेहरा लाल हो उठा, वे भभक पड़े—क्या शरीर ही सब कुछ है : स्पिरिट कोई चीज नही ! और इस आखिरी वक्त मे आपने दुर्बलता को चर्चा क्यो कर दी—क्या मै रुक सकूंगा ? ऐसा कुछ कह कर वह गुस्से मे जल्दी-जल्दी चल दिए।

थोड़ी देर मे ही ललित भाई आए और उन्होने यह शुभ

समाचार सुनाया कि सबके सब सकुशल निकल चुके है। हाँ, सामान की गठरी इधर ही रह गई, जिसमें जूते, कपड़े, खाने की कुछ सामग्री आदि थे। रामनन्दन का कोट भी छूट गया, जिसमे कुछ रुपये थे। क्या हुआ? सात ही मील तो जाना है, किसी तरह पहुंच ही जाएगे।

दीवार फादने की क्रिया वही पुरानी थी। दीवार के निकट टेबुल रख दिया गया। उस पर शुक्ल जी खड़े हो गए। शुक्ल जी के कन्धे पर गुलाली। गुलाली के कन्धे पर चढकर सूरज ने दीवार पार कर ली। सूरज की कमर से बँधी धोती के रस्से के सहारे जयप्रकाश जी, शालिग्राम और रामनन्दन गए। फिर गुलाली, अन्त मे शुक्ली जी। शुक्ल जी के बाद रस्से मे सामान बांध दिया गया। किन्तु उस पार से खीचते समय गठरी का बधन टूट गया। गठरी इधर ही गिर पड़ी। उस गठरी और टेबुल को हटवा कर ललित भाई हमें खबर देने आए थे।

मै दौड़ा-दौड़ा फूलन जी को यह सुसम्वाद सुनाने चला। देखा, वह नीम के एक पेड़ की छाया मे खड़े रो रहे है। मैने उन्हें समझाया, यह क्या कर रहे है आप? वे लोग तो चले गए। जाइए और काग्रेस-नेताओ के बीच बैठकर ताश खेलिए। अपना चेहरा धो लीजिए और ऐसी मुद्रा रखिए कि लोगो को मालूम नही हो कि कोई अप्रत्याशित घटना घटी है। मै समझ रहा था कि फूलन जी की मनोव्यथा क्यो है? जयप्रकाश जी के बालसखा रहे है वह—एक ही परिवार के। फिर जाने के

समय अचानक यह झड़प हो गई।

उसके बाद मेरा नाटक शुरू हुआ। हमारा वह अभूतपूर्व जुलूस निकला। आगे-आगे वह लड़का, थाल हाथ मे लिए। अगल-बगल हम लोग। 'दीवाली फिर आ गई सजनी, दीपक-राग सजा ले, हो-हो दीपक-राग सजा ले'—से सारा जेल गूँज उठा। इस सेल से उस सेल, इस वार्ड से उस वार्ड। हम लोग निकले थे, दस-पन्द्रह आदमी, अब तो वह पूरा जुलूस था। बूढ़े से बूढे लोग भी उसमे शामिल हो चुके थे और उनके पोपले मुँह से भी—'हो हो, दीपक-राग सजा ले' निकल रहा था। जेल के वार्डर, जमादार, नायब जेलर—सभी उस जुलूस के साथ घूम रहे थे। बूढे बडे जमादार की दाढी हिल रही थी इस गीत के ताल पर। उन्होने बड़ो प्रसन्नता में मुझसे कहा—ओहो, इतने दिनों से जेल की नौकरी करता आया हूँ, किन्तु ऐसा दृश्य कभी नही देखा! कमाल किया है, आपने कमाल! मैंने बडी उमंग मे कहा—न देखा था और न देख सकिएगा जमादार साहब! इसका गूढ़ार्थ वह बेचारे क्या समझते?

हम जानबूझकर देर कर रहे थे। जगह-जगह रुकते, मिठाई के लिए जिद करते, हँसी-तफरीह करते। एक जगह तो बाजाप्ता लाठी-चार्ज हो गया। एक खब्ती स्वामी जी वहा थे; वह सो गए थे। हमने उन्हे जबर्दस्ती सेल मे घुसकर जगा दिया। वह अपनी लाठी लेकर हम पर टूट पडे—भगदड़ मची, बड़ा मजा आया। वह महाराष्ट्र के थे। जब पीछे यह रहस्य

खुला, तो बड़े स्नेह से कहने लगे—अब समझा, बदमाश लोगो, तुमने शिवाजी के पलायन का अनुकरण किया था। वह बहु-वचन के अनुस्वार पर जोर देकर बोलते थे।

जुलूस की एक अपनी भी मनोवृत्ति होती है। कुछ लोगो ने राय दी, हम छोकरा-किता चले और जयप्रकाश जी को यह समां दिखलावे और लीजिए, जुलूस उस ओर मुड़ा। अरे, अब क्या होगा? बड़ी मुश्किल से हम उसका रुख मोड़ सके, यह कहकर कि जयप्रकाश जी की तबीयत अचानक खराब हो गई है, अभी उन्हे नीद लगी है, हम उन्हे तग न करे।

अन्त मे हमने जुलूस को एक सभा मे परिणत किया। हमने जेल मे एक विनोदी क्लब बना रखा था। हम अगरेजी मे उसे सी० क्यू० क्लब कहते थे। उसका हिन्दी रूप लिख दूँ, तो शायद अश्लील समझा जाए। क्लब को मेम्बरी परिमित थी। उसकी गुप्त बैठके होती। नए सदस्य को दीक्षा लेने के लिए एक अच्छी दावत देनी होती। उस क्लब की चर्चा जेल-भर मे थी। बड़े-बड़े लोग उसके सदस्य थे। मैने उस क्लब की खुली बैठक की घोषणा की।

लोगों मे उत्साह आ गया। कुछ देर तक उसकी शानदार बैठक अट्टहासो के बीच चलती रही।

मै बीच-बीच मे जुलूस से गायब हो जाता था। अब हमारा प्रयत्न हुआ कि वार्ड-बदी के समय भी यह रहस्य न खुल सके, तो और अच्छा हो। भागनेवालो के अतिरिक्त अभी तक पांच-छ व्यक्ति ही इस रहस्य को जानते थे—पार्टी के सदस्यों

से भी यह गुप्त रखा गया था। लेकिन अब आवश्यकता थी कि कुछ लोगो की और सहायता ली जाए।

जयप्रकाश जी छोकरा-किता के जिस वार्ड मे रहते थे, उसमे सिर्फ पाच राजबदी थे, जिनमे तीन भाग चुके थे—जयप्रकाश जी, शुक्ल जी और सूरज। गुलाली अपने वार्ड से अकेला भागा था। मेरे वार्ड से, बाबू वार्ड मे न० १ से, दो भागे हैं, रामनन्दन और शालिग्राम। क्या ऐसा नही किया जा सकता कि इन लोगो के अभाव मे भी वे सब वार्ड बद कर दिये जाय ?

दिक्कत थी जयप्रकाश जी के वार्ड के लिए क्योकि उस वार्ड मे सिर्फ पाँच आदमी थे, जिनमे तीन भाग चुके थे। किन्तु यह दिक्कत आसानी मे परिणत हो गई। उसके एक राजबन्दी को शाम से ही पेट मे दर्द हो रहा था। कालिक का दर्द था, कई बार डाक्टर आये-गये थे। बीमार राजबन्दियो के वार्ड खुले रखे जाते थे। भागे हुए तीन व्यक्तियो के बिछावन को तकिये के सहारे ऐसा सजा दिया गया कि जैसे वे चादर तान कर सोये हों और ऊपर से मशहरिया गिरा दी गईं। एक व्यक्ति को एटन्डेट के रूप मे दरवाजे पर बिठला दिया गया। ज्योही उसने जमादार को वार्डबदी के लिए आते देखा, दबे पाव आगे बढकर इशारा किया, शोर मत कीजिए, बीमार को तुरत आंख लगी है। जमादार बेचारा वही से लौट गया।

गुलाली के वार्ड मे बहुत लोग थे, उस आधी रात को

कहाँ तक गिनती की जाय, ललित भाई ने आगे बढकर कह दिया, इतने कैदी है—उसने चुपचाप बन्द कर दिया।

भद्रा आ पड़ी मेरे ही वार्ड में। हमने यहाँ भी मशहरी आदि ठीक कर दी थी, किन्तु रामनन्दन के सेल में घुस कर देखा और जमादार चिल्लाने लगा, इसके बाबू कहा है ?

हम लोग सन्न ! अब क्या हो—जदुभाई ने कह दिया, शोर मत कीजिये, हम यहा खेल रहे है। अभी जल्दी क्या है ?

झट ताश लेकर हम खेलने लगे।

कृष्णवल्लभ बाबू, सारंगधर बाबू, जदुभाई, मुकुटधारी, अवधेश्वर और मै—छः जने हाथ में ताश लेकर पटकते जा रहे है, उस उत्तेजना मे खेल क्या होगा ? जमादार आता है, हमे खेलता देखकर लौट जाता है। किन्तु यह आँखमिचौनी कब तक चलाई जायगी ? सारगधर बाबू ६ नं० वार्ड मे रहते थे, यहाँ चले आये थै। उन्होने कहा—मै रामनन्दन के सेल मे चला जाता हूं। लेकिन कही आपके सेल मे आपको गैर हाजिर पाया जाय तो ? अरे, किसकी हिम्मत जो मेरे सेल मे जाकर झाँके। सारगधर बाबू शानदार आदमी। किन्तु क्या उन्हे इस खतरे मे डालना उचित होगा ? मै तो मन-ही-मन उनकी वीरता पर मुग्ध हो रहा था। पर उचित यही समझा गया कि अभी थोड़ा और विलम्ब किया जाय।

कृष्णवल्लभ बाबू का जेल मे बड़ा रोब था। वह हजारीबाग के नेता थे, जेल के सभी आदमी उन्हे जानते थे। पिछली मिनिस्ट्री मे पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी रह चुके थे। इसलिए

किसी जमादार की हिम्मत नही होती थी कि हम खेल रहे है, तो उसमे बाधा डाले। सोच-विचार कर तय किया गया कि जब तक इस जमादार की ड्यूटी बदल नही जाती है, हम खेलते ही रहे। जब नया जमादार आएगा, तो देखा जायगा। हो सकता है, वह रामनन्दन के सेल को योही वन्द कर दे।

हम ताश के पत्ते-पर-पत्ते पटकते जा रहे है। किन्तु हमारे दिमाग तो कही और है। उन लोगो का क्या हुआ होगा ? क्या वे उस गांव तक पहुंच चुके होगे ? रास्ते में कही कोई बाधा नही आई हो ? कही वे पकड़ गये हो, तव तो अनर्थ होकर रहेगा। लेकिन अभी तक नही पकडे गये है, यह निश्चित है—क्योकि ऐसा होता, तो जेल मे कुहराम मच गया होता।

हम जिस सेल मे बैठकर ताश खेल रहे थे, उससे सटे वार्ड न० २ के सेल मे एक नौजवान रहता था। बेचारे को शायद नीद नही आ रही थी—भला, इस त्योहार के दिन किसे नही घर-बार याद आये ? जिसे हमारे यहा 'सुख-रात्रि' कहते है, वह रात कोई सेल मे गुजारे—यह भी कोई बात हुई ! नौजवान गुनगुना रहा था। फिर उसका कंठ फूटा। वह एक फिल्मी गीत गाने लगा—

पंछी उड़ जा अपने देश !

हौले-हौले उड कर जाना। नन्हे-नन्हे पर न थकाना—

अरे, यह क्या गा रहा है ? हम सब लोग एक दूसरे का मुँह देखने लगे। जदुभाई ने कहा—यह शकुन का गीत है।

कोई झझट नही हुई, इससे यही सूचित होता है। हम लोगों ने भी मान लिया—यही मानने मे तो जी को शान्ति मिल सकती थी न ?

जेल-गेट पर घटा बजा, जमादार चला गया। नया जमादार आया। कुछ दूर पर हममें से एक आदमी ने जाकर उससे इधर-उधर की बाते की और कह दिया, सभी लोग सो गये है, बस चार-पाच आदमी हम खेल रहे है; आप धीरे-धीरे बन्द करके आइये।

तब तक हमने रामनन्दन के सेल को और भी दुरस्त कर दिया था। उसने उस सेल को बद कर दिया। जब शालिग्राम के सेल की बारी आई, हमारी घबराहट बढी, क्योंकि वह सेल हम लोगों के निकट था। किन्तु मुकुट की सूझ से वह सेल भी बद हो गया।

बला टली। सारगधर बाबू अपने वार्ड मे चले गये। अपनी सफलता पर हमे गर्व हुआ। यह जोर देकर कहा जा सकता है कि यदि कृष्णवल्लभ बाबू, सारगधर बाबू और जदुभाई ने मदद नही की होती, तो उस रात में ही भडा फूट जाता और तब यह भी सम्भव है कि भागे हुए लोग गिरफ्तार कर लिये जाते, क्योकि वे लोग उस गांव का रास्ता भूल कर जगल-जगल रात भर भटकते फिर रहे थे।

जजीरे लटकती रह गई, दीवारे खड़ी ताकती रही और लो, बंदी बाहर हो गये ! बाहर ! बाहर !!

महापलायन (ग)

क्या उस रात उन्हे नीद आ सकी होगी, जो इस महा-पलायन की जानकारी रखते थे और जेल के भीतर इसे गुप्त रखने मे हिस्सा बंटा चुके थे !

मैं तो सो नही सका । आज भोर-भोर जब जयप्रकाश जी से मिलने गया था, उनके वार्ड के सामने एक विचित्र दृश्य देखा था । न जाने किस तरह रात मे एक सियार जेल मे चला आया था । वार्डरो ने उसे खदेडकर मार डाला था और उसकी लाश को घसीटकर जयप्रकाश जी के वार्ड के सामने रख दिया था । जयप्रकाश जी से बढकर और कौन ऐसा विशिष्ट व्यक्ति इस जेल मे था जिसे वे लोग अपनी वीरता और शिकार-प्रियता का सबूत दिखलाते !

उस सियार को देखकर मै कांप उठा था—उसका शरीर क्षत-विक्षत था, जगह-जगह खून के धब्बे थे, उसका मुँह खुला था, जीभ बाहर निकल आई थी, दात घिनौने लग रहे थे ! उसके पिछले पैर मे अब तक वह रस्सा लगा था, जिससे घसीट

कर वह यहां तक लाया गया था ! अरे आज जयप्रकाश जी को भागना है—भोर-भोर यह कैसा दृश्य ?

बाबा सूचासिंह के साथियों की लाशें इसी दुर्गत से जेल-गेट पर लाई गई होंगी ! क्या यह सियार फिर वैसी ही घटना की सूचना देने को आज जेल के अन्दर घुस आया था ?

मेरी तबीयत इधर खराब थी : वही मूर्च्छा की शिकायत ! इसलिए मेरा सेल कई दिनों से बन्द नही किया जाता था। भेद खुलने पर कही मुझ पर ही सारा शक न किया जाए ?

किन्तु इस समय अपनी चिन्ता क्या की जा सकती थी ! बार-बार मेरा ध्यान उस क्षत-विक्षत सियार की लाश की ओर जाता; फिर सूचासिंह के साथियों की दुर्गत आँखों के सामने नाच उठती और उसके बाद .... प्रतिक्षण लगता, कुछ वैसी ही लाशे जेल-गेट पर आ चुकी है, अब पगली घंटी बजेगी, जेल-अधिकारी दौड़कर आयेंगे, कोलाहल मचेगा, हाहाकार और चीत्कार से सारा जेल काँप उठेगा ! जयप्रकाश पर कुछ हो जाए, तो बिहार मे ऐसा कौन आदमी है जो रो न उठेगा।

बार-बार रोमच हो आता है; बार-बार सिहर उठता हूं। नीद से बोझिल आँखे जरा झपकती है, तो लगता है, जैसे पगली घंटी गरज उठी ! चौककर उठता हूँ, तो पता चलता है, जेल-गेट पर समय-सूचक घटे बज रहे है—एक, दो, तीन ! यह कम्बख्त शीघ्र पाँच क्यो नही बजाता ?

और पाच भी बजा। जेल-गेट से दर्जनो बूटों की धमक इस ओर बढ़ने लगी—जमादार, वार्डर, जेलर सबके सब आ

रहे हैं। जमादार वार्डो को खोलेगे, जेलर को गिनती देगे। जेलर लिखेगे, इतने कैदी खुले ! क्या इस समय भडाफोड़ नही होगा ? नही, नही, यह आशका व्यर्थ है। भोर मे कव गिनती होती है, जो आज होगी ? यहा तो मान लिया गया है, ये सभ्य भद्र राजबन्दी भागने वाले नही ! भला ये भागेगे ?—बिना गिनती के ही खानापूरी कर दी जाती है।

सेलो से निकल कर हम वाहर आये। अवधेश्वर मुझे लेकर टहलने और धीरे-धीरे वाते करने लगे। वोले—कुछ सोचा है, अब क्या होगा ? जो होना होगा, होगा—सोचना क्या है ? मैने कहा। गभीरता से उन्होने समझाया, कुछ देर मे तो भडा फूटेगा ही। काग्रेसी लोगो पर भगाने का शक तो होगा नही। पार्टी वालो पर ही बीतेगी ? पार्टी मे अव हम तीन ही प्रमुख व्यक्ति रह गये है—फूलन जी, तुम और मैं। फूलन जी का सम्वन्ध ऐसे-ऐसे वडे लोगो से है कि उनपर अधिक ज्यादती की नही जा सकती। मेरी हालत यह है कि एक अच्छा खासा तमाचा जड़ दिया जाय, तो वस इतने ही मे मेरा हार्ट फेल कर जायगा, किस्सा खत्म ! मुझे चिन्ता तुम्हारी है, रात भर परीशान रहा हूँ। तुम तो सूअर हो, किसी अस्त्र से कितने भी प्रहार किये जाय,तब तक नही मरोगे जब तक मोटे सूए से तुम्हारा कलेजा नही छेद दिया जाता। ज्यों ही भेद खुलेगा, तुम अपने को राची के मिलिटरी सेल मे पाओगे और वहा तुम्हारी कचूमर निकाली जायगी ! अवधेश्वर की इन बातो को सुनकर मैने मुस्करा दिया·· अरे, कम्बख्त मेरी चिन्ता न कर,

मेरे पास भी एक रामबाण नुस्खा है। वह है यह मूर्च्छा—कमजोर आजकल हूँ ही; ज्योंही अधिक कष्ट हुआ, यह जीवन-संगिनी आ पहुँचेगी और फिर उस मिलिटरी सेल में मेरी लाश ही वे पा सकेंगे, मुझे नहीं !

इस बातचीत के बाद मै सबसे पहले छोकरा-किता गया। जयप्रकाश जी के वार्ड मे जो दो सज्जन रह गये थे, उनमें से एक बड़े बुजुर्ग थे, नामी क्रान्तिकारी रह चुके थे। मैने उनसे सारी बाते कह दी और जयप्रकाश जी की ओर से क्षमा माग ली। उन्होने प्रसन्नता ही प्रकट की और कहा—आगे मैं समझ लूँगा, आप ऐसा प्रयत्न कीजिये कि कुछ देर तक यह बात और छिप सके। ललित भाई वहा थे ही; अतः मुझे वहां की अधिक चिन्ता नही हुई। फिर बाबू-वार्डो की ओर आया और अपने कुछ विशिष्ट साथियों से सारी बाते कह दी और उन्हे बता दिया कि भेद खुलने पर उन्हे क्या करना चाहिये। भेद खुलने पर सख्तिया होगी, उन सख्तियो से लोगों मे पस्त-हिम्मती नही आने पावे, खासकर काग्रेसी नेताओ पर बुरा प्रभाव नही पड़ने पावे, इस पर सदा ध्यान रखना है।

जयप्रकाश जी प्रतिदिन भोर में क्लास करते थे। इसके बाद क्लास मे सम्मिलित होने वालो को सूचना कर दी कि आज उनकी तबीयत खराब है, क्लास नही होगा। और लोगों का ध्यान दूसरी ओर आकृष्ट करने के लिए अपने वार्ड में वालीबाल के मैच की घोषणा कर दी। मैच सध्या को ही होते थे किन्तु जेल मे तो मनोरंजन के लिए सभी व्याकुल

रहते है। सभी लोग मैच देखने को दौड़ पडे, किसी ने सोचा भी नही कि इस असमय के मैच का क्या मानी ?

हमारे वार्ड मे मैच हो रहा है, जो लोग जानकार थे, उनके हाथ से गेद की उछाल देखने लायक थी, कभी इधर चली जाती, कभी उधर। लोग खूब हंसते। आकाश मे थोडा-थोडा बादल छाया था। कभी-कभी हवाई जहाज उड़ता दिखाई पड़ता। ंका होती, कही उन लोगो की खोज मे ही तो ये नही उड रहे है। किन्तु यह तो यहा की रोजाना बात थी, राची के मिलिटरी-बेस से प्राय ही हवाई जहाज आते-जाते रहते थे। किन्तु मन का भय तो भूत का रूप धारण कर ही लेता है।

मैच खत्म हुआ, हम जलपान आदि से निश्चिन्त हुए। उसी समय एक जमादार कृष्णवल्लभ बाबू को जेलगेट से बुलाने आया। फिर हमारी आशका बढी! किन्तु बात दूसरी ही थी। इस जेल के लिए एक नए सुपरिन्टेन्डेन्ट आए थे। कृष्णवल्लभ बाबू की ही कृपा से उन्हे यह स्थान मिला था। अत जेल के सचालन मे उनसे सहायता की आशा रखते थे। कृष्णवल्लभ बाबू ने उनसे कह दिया—आप श्री बाबू, अनुग्रह बाबू से मिलिए, वे ही नेता है, उनसे ही आपको मदद मिलेगी। लेकिन सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब को कृष्णवल्लभ बाबू के सामने ही एक सज्जन ने सलाह दी, पहले आप जयप्रकाश जी से मिलिए, क्योकि जो लोग जेल मे गडबड़ कर सकते है, वे तो जयप्रकाश जी के ही प्रभाव मे है। सुपरिन्टेन्डेन्ट को यह सलाह पसंद

आई ! कृष्णवल्लभ बाबू चुप रह गए, सुपरिन्टेन्डेन्ट छोकरा-किता की ओर बढ़े, कृष्णवल्लभ बाबू ने लौटकर हमे चेतावनी दी—अब भंडा फूटने ही जा रहा है, सम्हल जाओ ।

वहां जाकर जयप्रकाश जी को नही पाकर सुपरिन्टेन्डेन्ट किसी को जयप्रकाश जी की खोज में इधर भेजेगा, यह अनुमान कर मै हर वार्ड के एक-एक साथी को झट समझा आया कि ज्यों ही कोई आवे तो वह उसे बरगला दें कि जयप्रकाश जी को अमुक ओर जाते देखा है । कुछ समय तो इसमें भी लग ही जाएगा । थोड़ी देर मे बड़ा जमादार आता दिखाई पड़ा । उसे देखते ही मैने हंसकर पूछ दिया—कहिए जमादार साहब, क्या बात है, आपके पैर बड़ी तेजी से उठ रहे है—क्या नए सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब बहुत अच्छे है ! जमादार ने खीसे निपोड दी और कहा—साहब जयप्रकाश जी को बुला रहे है, उधर लोगों ने कहा है, इसी वार्ड मे आए है ।

मैने कहा—अभी तक तो मुझे दिखाई नही पड़े है, उधर पूछिये । समूचे वार्ड मे वह जिस-तिस से पूछता रहा । ज्योंही मेरे वार्ड से निकला, एक ने पूछ दिया, किसकी खोज हो रही है जमादार साहब ? और ज्योही उसने जयप्रकाश जी का नाम लिया, उस आदमी ने कहा, उन्हे तो अस्पताल की ओर जाते देखा है । जमादार अस्पताल से लौटा, तो इसी प्रकार एक-एक वार्ड मे हमारे लोग उसे बरगला कर भेजते रहे ।

देर होती देख, एक नायब जेलर आया, फिर बूढ़ा जेलर आ पहुंचा । जेलर अनुभवी : उसे तुरत शक हुआ । जमादार

से चुपके से कहा, शुक्ल जी को खोजो। शुक्ल जी भी नहीं मिले। वह दौड़ा-दौडा सुपरिन्टेन्डेन्ट के पास पहुंचा और, कहते हैं, रो पड़ा! सर्वनाश—वे लोग भाग गये! जल्दी आफिस चलिये।

अपने वार्ड से ही हमने देखा, उन लोगो का दल दौडता हुआ आफिस की ओर जा रहा है!

और फिर पगली घटी गनगना उठी!

यों जेल के नियमानुसार पगली घटी का रिहार्सल थोडे-थोडे अर्से पर होने ही चाहियें, किन्तु हम राजवंदियो के आते ही रिहर्सल बन्द हो जाया करता था। बहुत दिनो के बाद अचानक पगली घटी की आवाज सुनकर जेल भर मे हलचल मच गई। सब लोग अपने-अपने वार्ड के फाटक पर आ गये और पूछताछ करने लगे। इतने में टावर की घटी टूटकर गिर पडी। बहुत दिनो से उसका प्रयोग नही हुआ था, लकडी सड़ गई थी, इस अचानक विपुल प्रयोग से वह अरराकर नीचे आ रही! लोगो ने अट्टहास लगाया। तब तक कुछ नायब जेलर पहुच चुके थे, उनसे मालूम हुआ, जयप्रकाश जी भाग गये है!

जयप्रकाश जी भाग गये है—ये जेल वाले पागल हो गये है क्या? जयप्रकाश जी और भाग जाये—असम्भव! लोगो ने इसे मखौल समझा। चारो ओर से जयप्रकाश जी भाग गये है; जयप्रकाश जी भाग गये है, की व्यंग्यपूर्ण ध्वनि निकलने लगी। श्री बाबू अधिकतर पढने मे ही व्यस्त रहते थे। सेल या

उसके सामने के बरामदे के इधर-उधर भी मुश्किल से जाते थे। किन्तु उत्सुकता उन्हें भी वार्ड के गेट तक खीच लाई थी। उन्होंने हमसे पुछवाया—जदुभाई ने कहा, हजूर, ये लोग कहते है, जयप्रकाश जी भाग गये है ! इस साल अब तक न अंडी मिली, न बंडी—यहां रहकर जाड़े में मरते, अब हम लोग भी भागेगे ! हर साल जाड़ा पहुंचते ही अंडी की चादर और ऊनी बडी मिल जाती थी, इस साल अब तक नही मिली थी। जदुभाई का इसी ओर व्यंग्य था। लोगों ने अट्टहास लगाया, श्री बाबू मुस्कराकर लौट गये !

अब वार्ड-वार्ड में गिनती और खोज शुरू हुई। थोड़ी देर मे शोर मचा, जयप्रकाश जी के साथ शुक्ल जी और सूरज भी गाग गये है। फिर गुलाली का नाम आया और अन्त मे रामनन्दन और शालिग्राम के नाम भी लिए गए। यह क्या हो गया, कैसे हो गया, लोगों को आश्चर्य होने लगा !

कुछ देर बाद पुलिस-सुपरिन्टेन्डेन्ट आये। वह वार्ड न० १ मे आकर हम से कहने लगे, आप लोगो ने यह दिल्लगी की है—अच्छी दिल्लगी रही, किन्तु अब इसे खत्म कीजिये, जयप्रकाश जी को कहिये, बाहर आवे ! जयप्रकाश हों, तब न आवे ! फिर ए बार खोज हुई—पेड-पेड़ पर, पाखाने-पाखाने, चुल्हे-चुल्हे तक मे। सब लोग खोज-ढूढ से थकथका कर चले गये ! अब सारे जेल मे निस्तब्धता छा गई।

सब वार्डो के फाटक बन्द कर दिये गये, जिसमे एक वार्ड के लोग दूसरे वार्ड मे नही जाने पाये। फाटकों के निकट

खड़े होकर बात-चीत करने की भी मनाही हो गई। हर वार्ड का राशन जेलवाले ही पहुचा गये। हर वार्डर का मुह लटका हुआ, हर जमादार की रोनी सूरत, हर जेलर के सिर पर जैसे वज्र गिर गया हो। यह क्या हो गया? और अब क्या होगा?—न-जाने इस षड्यन्त्र मे किस-किस राजवदी को लिपटाया जाएगा, न जाने कौन-कौन वार्डर, जमादार और जेलर इसके कारण नौकरी खोयगा! बडे जेलर और सुपरिन्टेन्डेन्ट तो बेचारे गये ही: उन्हे कौन बचा सकेगा? कोई साधारण कैदी नही भागा है, कोई एक कैदी नही भागा है? जयप्रकाश भाग जाय, छ राजबदी भाग जायं—जेल की कुव्यवस्था का ऐसा बुरा सबूत और कहा मिलेगा?

अपने वार्ड के हम पाच जानकार प्राय इस पर सोचते-विचारते। सब ने मान लिया, पहला प्रहार मुझी पर होगा। क्योकि मै ही जेल मे पार्टी का मत्री था। उसके बाद अवधेश्वर और फूलन जी की बारी आएगी। किन्तु हम क्या जानते थे कि यह सरकार देहाती सियार की कथा को चरितार्थ करेगी, 'पकडे के गोड न पकड लेलक सोड़'—पकडने थे सियार के पैर तो पकड ली बरगद की जड़े!

प्रतिक्रिया

जजीरे फुकार कर रही हैं : दीवारे चिग्घाड़ रही है ! प्रतिक्रिया ने प्रतिहिंसा का रूप धारण कर लिया है ।

हम लोग न बाहर पत्र भेज सकते है, न बाहर के पत्र हमें मिल सकते है । तीन महीने के लिए मुलाकात भी द । हम सभी को यह सामूहिक सजा दे दी गई है । आई० जी० साहब आए है : जेल के इन्चार्ज एडवाइजर साहब आए है । बाहर इनक्वायरी हो रही है, भीतर इनक्वायरी हो रही है। कैसे भगे, कब भगे, किस रास्ते भगे—तरह-तरह की अफवाहें फैल रही है । सरकारी विज्ञप्ति में भागने की जो तारीख दी गई है, उसमे और वास्तविक तारीख मे एक दिन का फर्क है । किस वार्डर से, किस जमादार से, किस जेलर से गफलत हुई, निर्णय करना कठिन हो रहा है । जेल मे कुछ नए वार्ड बन रहे है, उनके लिए सामान लाने को जेल की दीवार को तोड कर एक नया फाटक बनाया गया था उसे हटाया जा रहा है, नई दीवार चुनी जा रही है । एक अफवाह यह भी है कि उसी

फाटक से लोग निकले होगे। जेल मे नाटक खेला गया, अभिनेताओ के पहनाने के नाम पर वार्डरो से वर्दियां ली गई, उन्ही वर्दियो को पहनकर लोग सदर दरवाजे से ही निकल गए—यह अद्भुत कल्पना भी प्रसार पा रही है।

थोडे दिनो बाद ही वह नए सुपरिन्टेन्डेन्ट हटा दिए गए। उनकी जगह पर जो सुपरिन्टेन्डेन्ट आए है, वह वर्मा मे आई० जी० थे। वर्मा पर जापानी कब्जा हो जाने पर भाग कर आए है। बडे अक्खड हैं—बडी शान से कहते है, वर्मा मे राजवदियो को किस प्रकार उन्होने कब्जे मे रखा था। मिनिस्टरो को उन्होने तनहाई सेलो मे डाल दिया था—हमारे मिनिस्टरो को वह फख्र से सुनाते है।

निखालिस काग्रेसी राजवदियो मे कुछ कुडबुडाहट फैल रही है—कल तक जयप्रकाश जी की तारीफे करते नही अघाते थे, आज कहते है, बाहर अब क्या कर लेंगे, भीतर हम लोगो की जान आफत मे डाल दी। उफ, घर की चिट्ठियां भी नही मिलती, न किसी से भेट हो पाती है—घूमना, टहलना, खेलकूद सब बद—इन कम्बख्तो ने मुफ्त मे हमे सकट मे डाल दिया है। सध्या हो जाते ही हमे सेलो मे बद कर दिया जाता है।

अभी उस दिन एक विचित्र बात हो गई। सध्या हो जाने पर, वार्ड-बदी के बाद, बाबू रामनारायणसिंह, कृष्णवल्लभ बाबू और सुखलालसिह को जेल-गेट पर बुलाया गया और उन्हे वही से भागलपुर सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। उन्हे अपने कपड़े-लत्ते लाने को भी वार्ड मे नही जाने दिया गया, वार्डरो

के द्वारा वही मंगा दिया गया। बदमाशी करें ये सोशलिस्ट, सजा पावे हम कांग्रेसी।

इस घटना से भी हमने फ़ायदा उठाया—बहुत शोर किया, एक दिन का अनशन किया, श्री बाबू ने गवर्नर को पत्र लिखा! अब किसी दूसरे पर हाथ उठाने की जल्द हिम्मत हो सकती थी?

लोगो मे उत्साह भरने की हम कोशिशे करते है, इधर-उधर की तफरीहों मे उन्हे भुलाना चा ते है। हमारे साथी वडे मगन है—उन्हे विश्वास हो चला है, जयप्रकाश बाहर जाकर जरूर कुछ करेगे, क्रान्ति का दूसरा दौर जरूर आएगा, जरूर आएगा!

किन्तु हर झुण्ड मे कुछ काली भेड़े आ ही जाती है। हमारे एक साथी का रवैया दूसरे दिन ही खराब दीख पड़ने लगा। किसी को भी वार्ड से बाहर न्। निकलने दिया जाता था, किन्तु राशन के बहाने वह गोदा में चले जाते और घटों गायब रहते। एक दिन जेल के मेट ने हमे बताया, वह गोदाम के पिछले दरवाजे से गेट पर चले जाते है और वहा कुछ अपरिचित व्यक्तियों से गुपचुप बाते करते है। वह सज्जन इस-उससे पूछते फिरते है कि कैसे क्या हुआ? धृष्टता देखिए, एक दिन हसते-हसते मुझी से पूछ वैठे! अब मेरा सन्देह पक्का हो गया—मैने उनकी गरदन पकड़ी और ऐसा स्वाग किया कि उनका गला घोट देना चाहता हूँ! लोग दौड़े, वीच-बचाव किया! किन्तु थोड़े ही दिनो के वाद उन्होने अपना तवादला

उस जेल से करा लिया ! और आप आश्चर्य करेंगे, वह आज-कल एम० पी० है, नई दिल्ली मे मौज मारा करते है !

ऐसे ही एक दूसरे सज्जन निकले—जेल मे ही आकर हम से हिलेमिले थे। उनका अक्षर सुन्दर था, इसलिए मैंने 'तूफान' का काम उन्हे दिया था। पता चला, इधर एक नायब जेलर उनसे घुलमिल रहा है और यह लीजिए, एक दिन एक सेल की तलाशी हुई, जहां से 'तूफान' का एक अक निकला ! एक बार तो उन्होने मुझे ही फसाना चाहा। वार्ड के फाटक से हम कही बाहर आ-जा नही सकते थे, किन्तु जरूरत पड़ने पर दो वार्डो के बीच की दीवार तडप जाते थे। एक दिन मैं इसी प्रकार अपने वार्ड की बगल के दूसरे वार्ड मे चला गया। एक साथी के सेल मे बैठकर बाते करता था कि न जाने कहा से वह नायब जेलर उस वार्ड मे आ पहुंचा, एक साथी की सूझ और हिम्मत ने मुझे बचा लिया, नही तो मै उस वार्ड मे पकड़ा जाकर बेईज्जत किया जाता—क्या-क्या होता क्या बताया जाए ? और फिर आश्चर्य मत कोजिए, वह सज्जन अब भारतीय युवको के नेता के रूप मे अन्तर्राष्ट्रीय शिष्टमडलो मे भी स्थान पा जाते है !

तो भी हमारा कारवां बढ़ता जा रहा है। इतने ही में २६ जनवरी आती है, हम तय करते है, इन सारे बन्धनों के बावजूद हम स्वतन्त्रता-दिवस शान से मनाएगे ! स्वतन्त्रता-दिवस किसको प्रिय नही है ? चंद कांग्रेसी नेताओं को छोड़-कर हमारे इस निर्णय के पक्ष मे सारे राजबंदी है ! फिर

लोगो मे एक जोश जगा है—ये बन्धन अब सबके लिए असह्य हो उठे है। सब लोग एक बार जोरआजमाई करके देख लेना चाहते है। जेल-जीवन में भी ज्वार-भाटे आया करते हैं।

बिना राष्ट्रीय झडे के स्वतन्त्रता-दिवस कैसा? रंग तो अब आने नही देते, झडे बनेगे कैसे? किन्तु हममे कलाकारों की भी तो कमी नही। खादी के कपड़े हम सबके पास है ही, रसोईघर से हल्दी मंगा लेना कौन बडी बात है, उसी से केसरिया रंग बना लेगे और जेल में हरे पत्तों की क्या कमी, उन्ही का रस चुआकर हरा रंग निकाल लेगे। धोतियां फटने लगी, कुर्त्ते फटने लगे। रगाई शुरू हुई। सिलाई शुरू हुई। चर्खे का साचा भी बना लिया गया, छपाई शुरू हुई। हर घर की मशहरी मे डडे थे ही। लीजिए, झडे बन गए! झडे के लिए प्रतिस्पर्धा-सी होने लगी—किसका झंडा बड़ा, किसके झडे का रग चटकदार! कौन अभागा है, जो इस पवित्र दिवस को अपने हाथ मे झडा रखना पसंद नही करेगा?

किन्तु हमारी उस तैयारी की खबर जेलवालों को न लगे, यह असम्भव था! काली भेड़ो की तादाद बढ गई थी न? प्रतिक्रिया का सबसे बड़ा अभिशाप तो यही है—वह बड़े-बडे शेरो को भी भेड़ बना डालती है, फिर जो शेर की खाल ओढ़-कर अपने नस्ल छुपाएं हुए हों, उनका भडाफोड़ करना उसके लिए कौन-सा मुश्किल काम है! जेलवाले चौकन्नी आखों से हमारी हर कारंवाई को देखते है!

रगड़ से आग पैदा होती है, अब ओदी लकड़ियां भी धधक

रही है। हमे स्वतन्त्रता-दिवस नही मनाने देगे—क्या कहते है ? उन्हे दिखा देगे, हम किस धातु के बने है !

रग-रग फडक रहा है नया रग देखकर,
कातिल भी है, छुरी भी है, मेरा गला भी है !

हो सकता है, तलाशी हो, हमे झडे को छिपा देना चाहिए। कोई अपने झडे को तकिया के गिलाफ मे छिपा रहा है, कोई बिस्तरे के खोल मे छिपा रहा है। कोई किताब की जिल्द मे ही उसे घुसा रहा है। कई झडे कई जगह रखो, जिसमे एक भी जरूर बच जाए। कितने लोगो ने बडी मे, कोट मे, गजी मे इस तरह झडे सी लिए कि लाख कोशिश करने पर भी दिखाई न पडे।

२५ की सध्या को हम सेलो और वार्डो मे बन्द किये गये। स्वभावत हम देर से सोते, आज तो हम कल के सघर्ष के चिन्तन मे देर से सोये कि अचानक सेल के फाटक पर बूटो की खट-खट की आवाज हुई और यह देखिए, जेल की पूरी पल्टन सामने खडी है। एक-एक सेल खोला जाने लगा और तलाशी शुरू की गई। जब तलाशी ही है, तो फिर चुपचाप कैसी ? हमने नारे लगाने शुरू किये। लोग अकचका कर उठे और फिर तो नारो का वह सिलसिला शुरू हुआ कि इस निस्तब्ध रात्रि मे सारा जेल गूँजित, प्रकम्पित होने लगा।

जरूर कुछ झडे भी उनके हाथ आये, उन्होने समझा बाजी मार ली। बौखलाहट मे कुछ किताबे, कापियाँ भी उठाकर ले गये।

भोर हुई; अरे, यह क्या ? हमारे सेल अभी तक बंद क्यों है। हम वार्डरों की प्रतीक्षा कर रहे है, फिर जमादार को पुकारते है। कोई सामने आ नही रहा है। क्या बात है–जेल वालो ने तय किया था, आज किसी को सेल से बाहर ही नही होने देगे, न रहेगा बाँस, न बजेगी बॉसुरी।

किन्तु इस बॉसुरी को बजने से कौन रोक सकता था ? हर सेल मे कमोड रहता ही था, एक बालटी पानी भी रखा जाता था। भीतर ही हम शौचादि क्रिया से निवृत्त हो लिये। जलपान बाहर से देने लगे, तो हमने अस्वीकार कर दिया—आज का स्वाधीनता-दिवस हम उपवास से ही मनायेगे। अपनी-अपनी घडी देखते, हम आठ बजने की प्रतीक्षा करने लगे, जो कि झडावदन का समय सदा से निश्चित था। आठ बजते है कि फिर देखिये, सब अपने-अपने सेलों के दरवाजे पर खडे है, मशहरी के डडो में झडे लगाकर उन्हे बाहर लहरा रहे है और मस्ती मे गा रहे है—

झंडा ऊँचा रहे हमारा ! प्रेमिक विश्व तिरंगा प्यारा।

अहा, वह स्वाधीनता-दिवस ! क्या वैसी शान से, वैसी उमंग से हमने कभो स्वाधीनता-दिवस मनाया था और क्या आगे कभी मना सकेंगे ? हम सेलों मे बद थे, एक दूसरे को देख नही पाते थे, किन्तु हमारा स्वर एक था, बुलद था। हम जानते थे, इस झडा-वंदन के लिए हमें और भी कष्ट दिये जायगे, हो सकता है, इसी समय जेलवाले सदलबल पहुचें और झंडे छीनना, सेलो मे घुसकर पिटाई करना शुरू कर

दे—किन्तु हमारा उत्साह कुछ ऐसा था, हमारे स्वर की हुकार कुछ ऐसी थी कि किसकी हिम्मत जो हमारे सामने आये ! बडी देर तक, एक-एक पक्ति को कई-कई बार दुहराते, नारे लगाते, हमने प्रात काल का झडावदन सम्पन्न किया ।

हम मे से कुछ लोग सोचते थे, अब हमे सेलो से बाहर कर दिया जायगा, जव विधि पूरी कर ली गई, तो फिर हमे वे क्यो बन्द रखेंगे ? किन्तु, यह तो खामख्याली थी । हमे पूरा दिन बन्द रखा गया । चार बजे हमने फिर हस्बमामूल झडा-वदन किया, नारे लगाये । तब भी हमे बाहर नही आने दिया गया । हा, एक-एक सेल को खोलकर कमोड की सफाई अवश्य करा दी गई । रात भर हम बन्द ही रहे, कही दूसरी ओर में जाकर सेलो के दरवाजे खोले गये ।

भूखे शेर को जैसे पिंजड़े से बाहर किया गया हो । सेलो के खुलते ही सब लोग अपने-अपने वार्ड के गेट पर पहुँचे और झडे उड़ाते हुए नारे लगाने लगे । कुछ ऐसा जोश था, सुरूर था, कि कोई फाटक से हटने का नाम ही नही लेता था । जेलर दौड़े आये; सुपरिन्टेन्डेन्ट आये—उनको देखना था कि लोगो के तन-बदन मे जैसे आग लग गई ! यह सब कुछ इस नये सुप-रिन्टेन्डेन्ट की शैतानी है, उसका नाम ले लेकर 'गो बेक' चिल्लाने लगे । कोई-कोई 'बर्मा का भगोडा' 'देशद्रोही' आदि नामो से भी उसे पुकारने लगे । झट उसने वार्डरों को कतार में खडा करा दिया, कुछ लोग बदूक लिये खड़े, कुछ लोग लाठी लिये ! आज कुछ होकर रहेगा—केम्प जेल की १९३२

की सध्या मुझे याद आने लगी। कुछ देर तक तो सुपरिन्टेन्डेन्ट फुफकारता रहा, किन्तु अन्त मे उसे होश आया। वह श्री बाबू के वार्ड मे गया, वहाँ नेताओं से बाते की। सत्यनारायण भाई निकले और नेताओ की ओर से निवेदन करने लगे कि हम लोग अब फाटक छोड़कर वार्डो मे जायं। किन्तु जब तक हथियारबन्द सिपाही खड़े हैं, हम नही हटेंगे, यह थी हमारी शान। वे हटाये गये, हम भो वार्डो मे गये, किन्तु यह स्वाधीनता-दिवस हमारे हृदयो में सदा के लिए सोने के अक्षरो में अकित हो रहा।

कुछ ही दिनों मे वह अकड़खाँ सुपरिन्टेन्डेन्ट बदल दिया गया। जेल मे एक विचित्र बात होती है, जिसके कार्यकाल मे कोई बडी घटना हुई कि वह अफसर बदल दिया गया। इसीलिए जेल के अफसर कैदियों से मिलकर रहना चाहते है। हर जेल मे बदमाश कैदियो की एक सूची होती है, जो नया अफसर आयगा, उन कैदियो से जरूर मिलेगा—बडे-बडे डाकुओं को मैने जेल मे औजमौज से रहते देखा; उसका कारण यही है।

नया सुपरिन्टेन्डेन्ट एक गोरा आई० सी० एस० था। अभी नौजवान ही था। पहले एस० डी० ओ० के पद पर था। उसने आते ही लोगों से मेलजोल प्रारम्भ किया। श्री बाबू से बड़े तपाक से मिला और अपना सौभाग्य बताया कि जब श्री बाबू मुख्यमन्त्री थे, और वह एस० डी० ओ० था तो उनकी मोटर हाँकने का सौभाग्य उसे मिला था।

मुझसे भी उसका हेलमेल हो गया। उसी ने बातचीत के सिलसिले मे कहा कि युद्ध के बाद लेबर-पार्टी का राज्य होकर रहेगा। क्योंकि हमे अपने देश का जो नवनिर्माण करना पडेगा, उसके लिए चर्चिल का नेतृत्व उपयुक्त नही होगा। हम उस समय ऐसी बात भी नही सोच सकते थे। हमे आश्चर्य हुआ!

मै इस धूमधाम, लडाई-झगडे से निवृत्त होकर अब साहित्य-रचना की ओर मुडा। तब तक बागवानी से मेरा स्नेह हो गया था। अपने सेल के सामने मैने एक छोटा-सा वगीचा लगा लिया था, बीच मे आम की एक छोटी-सी बिटपी। चारो ओर गुलाब और बेले के पौधे। आम के पेड़ को केन्द्र बनाकर एक चबूतरा बना लिया था। उस चबूतरे को पत्थर के नाना प्रकार के टुकड़ों से ऐसा जड दिया था कि लगता मोजाइक का चबूतरा है। उसी चबूतरे पर बैठ कर मैने 'अम्बपाली' लिख ली, 'माटी की मूरतें' पूरी कर दी, 'रोजा लुक्जैम्बुर्ग' नाम से एक अगरेजी जीवनी के आधार पर एक नई पुस्तक ही तैयार कर दी। 'नया आदमी' वही शुरू किया, जो आज तक अधूरा ही पडा है।

मैने समझ लिया था कि अब यहाँ का जीवन शान्त ही रहेगा। जयप्रकाश जी ने १९४० मे ही कहा था, इस बार हमे सात साल जेल मे रहना पडेगा। मै १९४७ तक का अपना साहित्यिक कार्यक्रम बनाकर उसी की पूर्ति मे लीन हो गया।

किन्तु, यह मेरा भ्रम था। जेल का जीवन शान्त हो नही सकता। यह कुत्ते की पूँछ है। खीचकर पकडे रहिये, तो सीधी रहे, ज्यों ही हाथ ढीला पड़ा कि पूँछ फिर टेढ़ी की टेढ़ी।

एक दिन नये अंगरेज सुपरिन्टेन्डेन्ट ने मुझे एकान्त में ले जाकर कहा, अफसोस है, अब आप हमारे साथ नही रह सकेंगे। आपका डिवीजन तोड़ दिया है, सी० क्लास कर दिया गया है और आपको गया सेन्ट्रल जेल में तबादला कर दिया गया है। इसमें मेरा कोई कसूर नही—आई० जी० ने स्वयं हुक्म दिया है। और वह आई० जी० कौन थे—वही बर्मा से वापस आये हुए सज्जन, जो हमारे सुपरिन्टेन्डेन्ट थे। ओहो, तो उन्होने मुझसे बदला चुकाया। खैर, यही सही। जब मालूम हुआ, मेरे साथ मुकुट को भी वहा भेजा जा रहा है, तो आनन्द हुआ; चलो एक से दो तो हुए। किसी तरह कट ही जायगा!

गया की झुलस

मै गया जा रहा हूँ—मुकुट के साथ। जेल-गेट से निकल कर ज्योंही हमे बस पर बिठलाया गया, मेरे पूर्व-परिचित मुसलमान पुलिस-जमादार ने मुझसे पूछा—"बाबू, बात क्या है ?—जेल वालो ने कहा था कि इन्हे हथकड़ी लगा कर ले आओ। भला, आप लोगो को हथकडी।—मैने कह दिया; ले जाने की जिम्मेवारी मुझ पर है—आप चिन्ता नही करें। क्या इनसे आप लोगो का कोई झगडा हो गया है बाबू ?" बेचारा जमादार कुछ समझ नही पा रहा था।

बस बडही मे कुछ देर तक ठहरती है। सध्या होने जा रही थी, मैने सोचा, शौचादि से यही निवृत्त हो लू। जमादार से कहा, उसने अपने सिपाही से पानी मगा दिया और बोला उन झाडियो मे चले जाइये, यहाँ के पाखाने गदे होते हैं। मै लोटा लेकर झाडियो की तरफ बढ़ा। जब जेल से चलने लगा था, एक मित्र ने कान मे कहा था, अवसर देखिये, तो आप भी भाग जाइयेगा–जयप्रकाश जी आपकी प्रतीक्षा मे होगे। क्या

भागने के लिए इससे भी अच्छा अवसर आयगा ? क्यों नहीं लोटा लिए दूर निकल जाऊँ और झाड़ियों मे छिप रहूँ—थोड़ी देर मे ही तो रात हो जायगी, अन्धकार मे कौन पकड़ सकेगा ?

किन्तु तुरत उस शरीफ मुसलमान जमादार की ओर ध्यान जाता है। बेचारे ने हम पर इतना विश्वास किया है; क्या उसका सिला हम इस रूप मे देंगे ? फिर मेरे बिस्तरे में मेरी नई रचनाओ की पाडुलिपिया है। क्या मै दुहराकर फिर 'अम्बपाली' और 'माटी की मूरतें' लिख सकूगा ? और मेरे भाग जाने पर क्या मुकुट की कम दुर्गत होगी। नहीं नही, मुझे ऐसा नही करना चाहिये। शौच से निवृत्त हो मै लौट जाता हूँ।

बडही मे एक नौजवान उस बस में चढ आता है और मेरे और मुकुट के बीच में बैठ जाता है। वह कहता है, अगले हाल्ट पर आप दोनो भाग जाइये, मै जमादार-सिपाही को देख लूगा। अगले हाल्ट पर गाडी रुकती है, हम तीनों बस से बाहर आ जाते है, जमादार-सिपाही भीतर ही बैठे है। अब गया जिला शुरू हो रहा है, उन दिनो गया सैनिक वायुयानो का अड्डा था—पूर्वी भारत का सबसे बडा अड्डा। जहाँ-तहा ऊचे-ऊचे दीप-स्तम्भ—वहा से बिजली की बडी तेज रोशनिया चारो ओर घूम रही, फैल रही। भला यहाँ से क्या भागा जा सकता है ? और बस मे निश्चिन्त बैठे जमादार का

वह मासूम चेहरा जो दिखाई दे रहा है। हम फिर बस पर आ चढे।

और वह गया का सेन्ट्रल जेल, जिसकी पृष्ठभूमि मे प्रेत-शिला नामक छोटी पहाडी है। प्रेतशिला की बगल मे इस जेल को क्यो बनाया गया है ? गया जेल मे ज्यादातर दामुली कैदी रखे जाते है। क्या इसलिए कि इन्हे सदा याद दिलाया जाय कि मृत्यु के बाद तुम्हे ज्यादा दूर नही जाना होगा ! प्रेत बनकर इस प्रेतशिला पर धूनी रमाना—फिर कही तुम्हारे खानदान मे कोई योग्य सन्तान हुई तो यहा पिडदान देकर तुम्हारा उद्धार कर देगी।

रात जैसे-तैसे बीती। भोर मे ही पता चला, यहाँ तो वही हमारा पगला सुपरिन्टेन्डेन्ट है, जो कैम्प जेल मे था। जब दूसरे दिन उससे भेंट हुई, वड़े प्रेम से मिला, जैसे सारी पुरानी बाते भूल गया हो। फिर कहने लगा, तुम तो बीमार दीखते हो, चलो, तुम्हे देखे। और आले से इधर-उधर देखकर बोला, ओहो, तुम्हारा तो सारा शरीर रोगो का पुँज है। फिर उसने मेडिकल ग्राउण्ड पर मेरे सोने के लिए खाट, गद्दे, तकिये आदि का इन्तजाम करा दिया और भोजन के लिए दूध, दही, फल, अडे की ऐसी सूची बना दी कि मुझे कहना पडा—इतना सारा क्या होगा ? उसने मुस्कराकर कहा—तुम्हारे कितने साथी है, और कितने बच्चे है, क्या उन्हे छोड़कर तुम अकेले खाना पसद करोगे ? मै तो चकित ! कहाँ कोई बीमारी है मुझमे—यह सब उसने मुझे आराम से रखने के लिए प्रपच

रचा है। क्या इसलिये कि कहीं मै उसे फिर तंग नही करूँ ? या उसके पागलपन ने दूसरा रुख लिया है।

समूचा गया जेल राजबदियो से भरा है। जिन्हें भी लम्बी सजाये मिली है, प्रान्त भर से उन्हें यही भेज दिया गया है। गया जिले के सभी प्रमुख कार्यकर्ता तो यही पड़े हुए हैं। बसावन बडी ललक से मिले। आई० जी० ने सोचा होगा, गया जेल मे भेजकर इसे नरक भुगाऊगा—वह क्या जानता था, मेरे लिए अभिशाप भी वरदान बनकर बरसते आये हैं।

प्रान्त भर के लम्बी सजावाले राजबदियों से जो बातें हुई तो अपने लोगों की वीरता और सरकार की क्रूरता का सही अन्दाजा मिल सका। सचमुच बिहार के कोने-कोने मे गाँधी जी का 'करो या मरो' का जादू छा गया था। लम्बी सजावालों मे ऐसे बहुत कम लोग थे, जो पहले से देश का काम करते आये हों। अपनी घर-गृहस्थी में लगे हुए लोग, इस जादू ने उनके सिर ऐसे घुमा दिए कि संसार की सारी माया-ममता भूलकर वे अंग्रेजी राज को सदा के लिए नष्ट करने पर तुल गये। क्या-क्या असम्भव न सम्भव कर दिया उन्होंने ? उनमे बूढों और बच्चों की भी बड़ी तादाद थी। उन्होंने गोलियों की गरज मे भी थानों पर झडे लहराये,उनपर कब्जा किया। साधारण हथौड़े और छेनी से लोहे के पुलों को तोड़ दिया। गृहस्थी की कुदाल से कंकरीट की सड़के खोद डाली। बास के डंडों को घुसाकर रेल की पटरिया उखाड़ दी। स्टेशनों को, पोस्ट-

आफिसों को, सरकारी गुदामो को लूट लिया। लूट के माल प्राय जला दिये—नोटो के बडल आग को धू-धू मे पलक लगते राख बन गये!

सरकार ने क्रूरता मे भी हद की। शरीफ लोगो को गधे पर चढाकर, गले मे जूतो की माला पहनाकर, सडकों पर घुमाया। राष्ट्र-भक्तो की टाग मे रस्से बाधकर, रस्से को ट्रक से बाध दिया और उसे स्टार्ट करा दिया, बेचारे सड़को पर लहू-लुहान घसीटे जाते रहे! रास्ते में जिसे इधर-उधर देखा, उसी पर गोलियो की बौछार कर दी। गाव के गाव जला दिये। टॉमियो ने देहात मे अधेर मचा दिया, किसी बहू-बेटी की इज्जत सुरक्षित नही थी। हम जिस एस० डी० ओ० की हत्या की चर्चा कर चुके है, वह कहा करता था—हमने टॉमी बुला दिया है, अब लोगो को गोरे नाती-पोते देखने को मिलेगे। क्या ऐसे आदमी की हत्या भी पाप है? एक नौजवान अपनी बीवी के साथ सोया था, घर मे घुस कर उसे गिरफ्तार किया गया, उसे पीटकर बेदम बना दिया गया और घर की इज्जत धूल मे मिला दी गई! जो सजा पाकर आये थे, उनके शरीर पर जख्मो के अनेक चिह्न थे। कोई सजीला जवान लगडा बन गया था, कोई सुन्दर लडका काना बन चुका था, कोई वृद्ध वशिष्ठ अग-अग की पीडा से दिन-रात कराहता रहता। उफ, उन्हे देख-देखकर, उनके मुँह से अत्याचार की कहानिया सुन-सुनकर खून खौल उठता।

कुछ ही दिन गुजरे थे कि एक दिन आई० जी० साहब

आ धमके। हम लोगों से मिले। मुझे देखकर, शायद व्यंग्य मे पूछा—यहां कोई कष्ट तो नही। फिर बोले, कोई कष्ट हो तो सीधे लिखियेगा, मैं देखूगा, आपका कष्ट शीघ्र दूर हो। उन्होने ये बाते चाहे व्यग्य मे ही कही हों, जेल-अफसरों पर मेरा रोब बढ़ गया। अब तो मेरा सुपरिन्टेन्डेन्ट मेरे लिए सब कुछ कर सकता था—जेलर, जमादार सब अदब से पेश आने लगे!

यों शारीरिक और मानसिक सुविधाये प्राप्त हो गई किन्तु इस गया की गरमी को क्या किया जाय? दुपहरिया हुई नही कि लू चलने लगती, जो आठ-दस बजे रात तक झुलसाती रहती। गर्मी मे जेल के कुएँ सूख गये, तो बाहर से पानी का प्रबन्ध किया गया। दिन मे तीन बार स्नान करता, तो भी झुलस नही जाती। दिन मे सेल भट्ठी बन जाते, तो सामने के सघन वट-वृक्ष के नीचे बैठ जाता। किन्तु रात मे तो सेल में जाना ही था। उसे अच्छी तरह धुलवाता, पर्दे को गीला करा देता, तो भी पसीने से सारा शरीर भीग जाता, सांस रुकने-सी लगती!

और एक दिन वही हुआ, जिसकी आशका थी।

प्रतिदिन की तरह आठ बजे रात को सेल में बंद किया गया। खाट को पीछेकर, दरवाजे के सामने खुली गच पर बैठकर, लिखने-पढने लगा। गच को धुलवा देने से वह ठडी हो जाती थी। मै पढता-लिखता रहा, बगल के सेलों के मित्र एक-एक कर सो गये। अचानक बड़ी गरमी महसूस की, लगा,

गच बहुत गरम हो उठी है। खाट आगे खीच ली और उसी पर लेट गया। सेल की गरमी बढती गई, सास लेने मे कठिनाई अनुभव करने लगा। सोचा, शायद लालटेन की गैस के कारण ऐसा हुआ है। लालटेन की रोशनी बहुत धीमी कर दी—यहां बिच्छू बहुत निकलते थे, इसलिए लालटेन एक दम गुल करना उचित नही समझा। फिर खाट पर पड गया कि एक विचित्र अनुभव हुआ। जैसे, समूचा सेल आवा बन गया है, मै कच्चे घडे की तरह उसमे झुलसा जा रहा हूँ। सास भी बद हुई जा रही है। क्या करूँ ? क्या चिल्लाऊँ ? किन्तु अरे, क्या मै चिल्ला भी सकता हू ?—जीभ तालू से सट गई है, गला रुँध गया है। मै छटपटाने लगा। आदमी में जीने की कितनी बडी अभिलाषा होती है ! उसी समय कान मे कुछ चरमर की आवाज आई। मै सारा बल लगाकर चिल्ला पडा—चिल्लाहट तो मुँह से निकली नही, कठ से घड़घडाहट की आवाज हुई। वार्डर दौडा हुआ आया, मेरे सेल के निकट खडा हुआ और मेरी यह हालत देख जमादार को पुकारने लगा।

जमादार आये, मेरा सेल खुला, मै आधा बेहोश . उठा-पठाकर मुझे हस्पताल ले गये। अस्पताल मे रात भर मेरे शरीर पर बर्फ मलते रहे तब कही नीद पडी। नीद टूटी तो पाता हूँ, सारा शरीर काला हो गया है, जैसे किसी ने अंगारे से झुलस दिया हो।

इस सेल मे कुछ हमारे समाजवादी साथी वार्डर बन गये

थे। जेल की आबादी बढ़ने पर वार्डरों की जरूरत हुई, उन पर वारंट थे या संगीन जुर्म था, उन्होंने दरखास्त दी, उस धरम-धकेल मे कहा तक छानबीन होती, वे भर्ती कर लिये गये। अब वे नौकरी भी करते और हमारे लिए बाहर-भीतर के दूत भी थे।। जेल का भी हमारा सगठन अच्छा था। बुलेटिन के लिए हम जेल से लेख भी भेज देते। कभी-कभी जेल-प्रेस से कागज भी बाहर भेज दिया जाता। एक बार यहा तक सोचा गया क्यो नही, हम जेल-प्रेस मे ही अपना बुलेटिन छपवा लिया करे। जेल-प्रेस मे कैदी ही काम करते, उन्हे मिला लेना था। किन्तु इस खतरनाक काम से बचे रहने मे ही हमने अच्छा समझा। पुलिस-नेता रामानन्द तिवारी यही रखे गये थे। उनके कारण जेल के साधारण वार्डरो पर भी हमारा अच्छा प्रभाव था।

यही जेल मे खबर मिली, जयप्रकाश जी नेपाल चले आये है और मित्रो की राय है कि मुझे और बसावन को चाहे जिस तरह हो सके, जेल से भाग आना चाहिए। भाग जाने का एक प्रोग्राम भी बाहर के साथियों ने बना कर भेजा।

गया-जेल की जो दीवार प्रेतशिला की ओर थी, उससे सटे हुए ही हमारे सेल थे। जेल से ही हम एक छोटा-सा बेल (बिल्व) का वृक्ष देखते, जो दीवार के उस पार था। एक रात हमारे साथी मोटर लेकर उस बेल के पेड़ के निकट आवेगे, ठीक उस दिन, जिस दिन हमारे किसी वार्डर-साथी की ड्यूटी सेल के लिए पड़ेगी। दीवार के उस पार से पत्थर

का एक छोटा टुकड़ा फेंका जायगा। हमारा वार्डर साथी उसके जवाव मे इधर से एक टुकड़ा फेंक कर हम दोनों के सेलों को खोल देगा और हमारे ही साथ वह भी फरार हो जायगा।

किन्तु इतनी चूलें मिलाना क्या आसान था ? जिस दिन उस तरफ मोटर आई, मै बीमार होकर हस्पताल मे पडा था, वसावन का सेल खोला भी गया, किन्तु उन्होने मुझे छोड कर जाना उचित नही समझा। उन्होने कह दिया, अमुक दिन फिर कोशिश करना—मै भैया को अस्पताल से बुलाकर रक्खूंगा। पर जब मै अस्पताल से आया, तब तक जेल की हालत वदल गई थी।

न जाने क्या वात हुई, पहरे सख्त पड़ने लगे। पता चला, वाहर भी जेल की दीवारो पर पहरे डाल दिये गयें है ? क्या हमारे भागने की मशा को उन्हें खवर हो गई ? उस समय एक अफवाह यह भी उठी थी कि जयप्रकाश का आजाद-दस्ता हर जेल पर चढाई कर अपने साथियो को छुडायेगा। किन्तु वसावन का ख्याल था, भीतर के ही अमुक काग्रेस-नेता ने यह प्रपंच किया है, इस डर से कि कही ये लोग भाग गये, तो यहा जो मौजमौज मिल रहा है, उसमे खलल पड़ जायगा।

रामानन्द तिवारी छूटकर जाने वाले थे। हमारी उनसे बाते हुईं। तय हुआ, तिवारी जी दिन मे ही मोटर लेकर आवे और फदे के सहारे हम दीवार तडप कर निकल भागेगे —हाँ, भागना ही है, तो दिन दहाड़े सही। गया जेल मे एक

कुष्ट वार्ड था। कुष्ट रोग के कैदी वहाँ रखे जाते थे। वह एक छोर पर था। उस तरफ कोई नही जाता था। एक दिन दुपहरिया में हम उसे देख आये। वह जेल के पिछले भाग मे पड़ता था। तिवारी जी मोटर लेकर आवें, मोटर सड़क पर खड़ी रखे। फिर फंदे लेकर दीवार के निकट पहुँचे। हम लोग इधर तैयार रहेगे। तिवारी जी अब कब आवेंगे, इसकी सूचना किसी वार्डर के मारफत कोड-शब्द में मिल जायगी। ज्योंही तिवारी जी उस ओर से फंदे फेकेंगे, हम उसी के सहारे दीवार पार कर लेंगे, फिर नौ दो ग्यारह······

ओहो! जेल मे कल्पना कितनी दौड़ती है। किन्तु जेल की कल्पना और बाहर की परिस्थिति मे कितना अन्तर होता है। हम दिन-रात तिवारी जी की प्रतीक्षा मे रहे, उधर मेरा तीन महीने का गया-प्रवास समाप्त होने को आया। बसावन से विदा ली, दीवारो को ललचाई नजरों से देखा, फिर हमारी बस सरसर-फुरफुर भागती चली!—उड़ती चली!

शान्ति

गया जेल से लौट आने पर देखा, हजारीवाग मे शान्ति का वातावरण छा रहा है। महापलायन-जनित तनाव भी वहुत कुछ कम हो गया है। गोरे सुपरिन्टेन्डेन्ट ने कुछ ऐसी व्यवस्था स्थापित कर दी है कि अग्रेज जाति की शासन-पटुता की जैसे डोडी पिट रही है। उसने लोगो को मिलने-जुलने, खेलने-कूदने की सारी सुविधा दे दी है। उसे जव मालूम हुआ, मै साहित्यिक हूँ, वह मुझसे खूव वाते करता। एक दिन उसने पूछ दिया—आप लोग हम लोगो पर नाराज क्यो रहते हैं ? मुझे गुस्सा आ गया—मै अग्रेजों के अत्याचारो की गिनती पेश करने लगा। उसने कहा, जो वाते हुई, उनके पक्ष-विपक्ष मे बहुत कुछ कहा जा सकता है, लेकिन मै एक वात कह देता हूँ, ज्योही लडाई खत्म हुई, इगलैंड मे लेवर-पार्टी का राज होगा, आप भी स्वतन्त्र हो ही जाएगे, यह विश्वास रखिये। आवश्यकता से अधिक एक मिनट भी हम आपके देश मे नही रहेगे—यह जोर देकर वह बोला।

उसका वह कथन कितना सत्य निकला। किन्तु क्या उस समय हमने उस पर उतना विश्वास किया था। हम समझते थे, एक और लड़ाई हमे लडनी पडेगी।

मैने अपना साहित्यिक कार्यक्रम शुरू कर दिया। 'अम्बपाली' को फिर से देखकर प्रेस-कापी तैयार कर ली। 'रोजा' की प्रेस-कापी भी तैयार हुई। 'क्वाइट फ्लोज द डोन' का सक्षिप्त रूपान्तर 'दोन के किनारे' नाम से गया जेल मे ही शुरू कर दिया था। उसे पूरा कर फिर एक महाग्रथ की ओर टूटा—ट्राटस्की की 'रूस की क्रान्ति' का सक्षिप्त रूपान्तर करने लगा। बड़ी मेहनत करनी पड़ती, किन्तु बड़ा आनन्द मिलता। ट्राटस्की एक क्रान्ति-नेता ही नही, महान् लेखक भी था। उसकी कलम से निकलकर रूसी क्रान्ति की कथा कितनी सजीव बन गई थी! अपने रूपान्तर का उर्दू अनुवाद भी साथी रेयासत साहब से तैयार कराता जाता।

फिर कविताओ की ओर टूटा। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर के गीत तो हिन्दी मे आ चुके थे, उनकी कविताओं की ओर उतना ध्यान नही दिया गया था। उनकी पचास प्रमुख कविताओ का रूपान्तर 'रवीन्द्र-भारती' के नाम से कर दिया। रवीन्द्र के बाद 'इकबाल' की ओर ध्यान जाना आवश्यक था। उनकी चुनी हुई कविताओ का सटिप्पण सकलन कर दिया। फिर 'जोश' की कविताओं की बारी आई। अन्त में अंग्रेजी के रोमान्टिक कवियो की चुनी हुई कविताओं का भी रूपान्तर कर दिया, उसका नाम रखा 'टुपलिस'!

लगभग आठ बजे सध्या को हमे सेलो मे बद कर दिया जाता। उस समय से एक बजे रात तक मै लिखता-पढ़ता रहता। जब सारे वार्ड मे सन्नाटा छा जाता, लिखने मे और भी आनन्द आता। मेरे सेल मे रोशनी देखकर वार्डर आ जाते और प्राय कहते, बाबू, सभी लोग सो गये, आप क्या कर रहे है ? सो जाइये, कल लिखियेगा। मै उन बेचारो को क्या समझाना। यह लिखना मेरे लिए सिर्फ मनोरजन की बात नही थी। जब छूट कर जाऊँगा, तो अपने साथ कुछ पुस्तको की तैयार पाण्डुलिपियाँ रहनी चाहिये कि उन्हे भजा कर मै अपने परिवार का भरण-पोषण कर सकूँ, इसके लिए दूसरों का मुहताज नही बनूँ, यह थी मेरी योजना।

हाँ, परिवार की चिन्ता इधर बढ गई थी। जब गया जेल मे था, रानी को मिलने के लिए बुलाया था। वह बच्चो के साथ आई थी। कैसे हो गये थे कंकाल उनके शरीर ! कैसे दर्दीले लगते थे उनके चेहरे ! सभी मलेरिया से परीशान थे। रानी सूखकर काँटा बन गई थी। जित्तिन की खासी बढती ही जाती थी। प्रभा को उस समय भी बुखार था। मेरी गैर-हाजिरी मे ही जो एक नये साहब ने रानी की गोद को सुशोभित किया था, सिर्फ वही किलक रहे थे। यह भी पता चला, मेरे छोटे चचेरे भाई ने रानी को अलग कर दिया है, खेती-गृहस्थी चौपट हो चुकी है। यहाँ बार-बार उन लोगो की याद आती है। एक दरखास्त भी दे दी है कि मुझे कुछ दिनो के लिए परिवार का दवादारू कराने को पेरोल पर रिहा किया

जाय। किन्तु क्या मुझे पेरोल पर छोड़ा जा सकेगा ?

अत: मन को अनेक कामो में उलझाकर शान्त रखता हू। उसी प्रकार हँसता हूँ, गाता हू, पढ़ता हूँ, पढाता हूं। हम लोग फिर बाजाप्ता सैद्धान्तिक क्लास करते हैं, उसमें कांग्रेसी लोग भी आने लगे है। कांग्रेसी नेताओ को भी हम क्लास लेने के लिए आह्वान करते है। कॉंग्रेसी-मंत्रिमडल के वर्तमान विद्युत और सिचाई मत्री बाबू रामचरित्रसिह सुरसड हाई स्कूल मे मेरे मास्टर रह चुके थे। उन्होने विज्ञान का क्लास लिया—बडे ही अच्छे ढग से विज्ञान की सारी मुख्य बाते बताईं। भूतपूर्व मन्त्री श्री जगलाल चौधरी तो हम लोगो के क्लास के नियमित अध्येता थे। अहिन्दी भाषियो को हिन्दी पढाने का सिलसिला भी फिर मैने शुरू किया।

हम लोगों का काम इसी तरह चल रहा था कि एक दिन अचानक रामनन्दन आ गये। वह लाहौर मे गिरफ्तार किये गए थे। उनके पहले शुक्ल जी भी गिरफ्तार हो चुके थे। रामनन्दन को लाहौर फोर्ट मे बहुत तकलीफ दी गई थी। देखने पर पहचाने नही जाते थे। कुछ दिनो तक उन्हें हमसे अलग रखा गया, फिर उन्हे हम लोगो के बीच ले आया गया। उनसे बाहर के रूपोश आन्दोलन की सारी गतिविधि का पता चला, जो धीरे-धीरे छिन्न-भिन्न हो रहा था।

हम हजारीबाग मे ही थे कि गाँधी जी का अनशन प्रारम्भ हुआ। एक दिन ऐसी खबर आई कि गाँधी जी का बचना अब असम्भव है। सुन गया, होम-मेम्बर मि० मैक्सवेल ने उनके

जलाने के लिए चदन की लकड़ी की भी जुगाड़ कर रखी है। जेल-भर मे जो वेचैनी थी, उसका क्या कहना ? हम प्रतिदिन प्रार्थना करते। कई लोगो ने भोजन का त्याग कर दिया था—जो लोग खाते भी थे, क्या उनके कंठ से जल्द अन्न के कौर नीचे जाते थे ? क्या होगा ? यदि कोई अप्रत्याशित घटना घटी, तो हमे क्या करना चाहिये ? हम इसकी उघेड़बुन कर रहे थे। यदि गाँधी जी मरे, तो हममे से एक-एक को अनशन करके प्राण देना चाहिये, सरकार भी देख ले, वह कितने लोगों की लाशो पर अपना सिहासन कायम रख सकती है। मेरा यही मत था; कुछ हुआ रहता, तो हम यही करते, यह निश्चय था।

देश के सौभाग्य से गाँधी जी का अनशन पूरा हुआ, वह इस अग्निस्नान से वाल-वाल बच निकले।

उसी समय गाँधी जी के वे पत्र प्रकाशित हुए, जो अगस्त-क्रान्ति के वाद उन्होने वायसराय और होम-मेम्वर को लिखे थे। उन पत्रो मे गाँधी जी ने जयप्रकाश जी की भी चर्चा की थी—उसका क्या कसूर है कि शिकारी जानवर की तरह उसकी जान पर पडे हो ? वह देश को आजाद करना चाहता है, तुरत ही आजाद कराना चाहता है—क्या देशभक्ति भी कोई गर्हित अपराध है ? गाँधी जी ने जयप्रकाश का कितना अच्छा पक्ष लिया था ! यह भी उस समय प्रचलित वात थी कि होम-मेम्बर ने हुक्म दे रखा है, जयप्रकाश को जहाँ पाओ, गोली के घाट उतार दो।

किन्तु, गाँधी जी के उन पत्रों मे कुछ बाते ऐसी भी थी, जिनसे हमें बहुत दुख हु आ था। मै तो बहुत दुखित और उत्तेजित हो गया था। फूलन जी ने मुझे शान्त करने की बहुत कोशिश की थी।

उस गोरे सुपरिन्टेन्डेन्ट के बाद कैम्प जेल और गया जेल का वह हमारा पगला सुपरिन्टेन्डेन्ट हजारीबाग-जेल मे आ गया। उसके आने से मुझे और भी सहूलियत हो गई। गुमटी पर आते ही वह मेरे वार्ड की ओर मुँह करके 'बैनी' 'बैनी' चिल्लाने लगता और मुझे अपने साथ घुमाता-फिराता। अपने साथियों के लिए मै उससे कुछ सहूलियतें भी दिलवा देता।

ज्यों-ज्यों दिन बीतते गए, काग्रेस के कुछ नेताओं मे हड़-कम्प मचने लगी। उन लोगो ने समझा था, यह खेल तुरन्त समाप्त होगा। अगस्त-क्रान्ति के झकोरे से बचने के लिए उनमे से कितने ही लोगो ने अधिकारियों से कह-सुनकर अपने को गिरफ्तार करा लिया था! वे समझते थे, बाहर रहने पर न जाने क्या हो; चलो, चुपचाप जेल मे चले चले, फिर कुछ ही दिनों मे छूट ही जाएंगे। ज्यों-ज्यो दिन बीतते गए, महीने कटते गए, वर्षो का भी सिलसिला शुरू हुआ, तो उनकी बेचैनी बढ़ी। किसी का पेट बिगडा, तो किसी का दिल धड़कने लगा; किसी के कलेजे में दर्द, तो किसी की कमर में दर्द! अब बीमारी ही उन्हे छुड़ा सकती थी। इधर उन्होंने दवा लेना शुरू किया, बाहर अखबारों में उनकी जिन्दगी के लिए चिन्ता

प्रकट की जाने लगी। और, यह लीजिए, उनमे से एक-एक करके लोग छूटते जा रहे हैं !

एक और सिलसिला शुरू हुआ। हर छ महीने पर सी० आई० डी० का डी० आई० जी० दो सिविल अफसरो के साथ आता और लोगो को गेट पर बुलाकर मिलता। वे लोग छंटाई करके कुछ लोगो को छोड़ने लगे। वे यह भी पूछते कि अगस्त-आन्दोलन के बारे मे आपकी क्या राय है और बाहर जाकर आप क्या करेंगे ? जिन्होने आन्दोलन की निन्दा की और अपने को घरेलू कामो मे ही लगे रहने का वचन दिया, उनकी रिहाई तुरत ही कर दी जाती। बहुत से बडे-बडे लोग इस बछिया की पूछ पकडकर बैतरणी पार करने लगे।

मुझे भी बुलाया गया। मेरे पूर्वपरिचित मि० जौन्सन ने मुझे देखते ही नाक-भौ सिकोड लिया। उसके सामने एक ऊंची फाइल पडी थी, जिस पर मेरा नाम था। उसने बस इधर-उधर की दो-एक बात पूछ ली और मुझे वापस कर दिया ! वह इस फाइल-रूपी मेरी जन्मपत्री को देखकर ही घबरा गया था ! और सच बात है, मुझे भी लगा, जब तक यह ऊंची फाइल है, मै जेल की दीवार पार नही कर सकता !

काग्रेसी नेता प्रायः कहा करते, आप लोगों ने सारा सत्यानाश कर दिया। आप लोगों ने ऐसा तूफान खडा किया कि अब स्वराज्य की बात तो दूर पड गई, फिर हमारा मंत्रि-मंडल भी वे नही होने देगे ! आप लोग देश को घसीटकर बहुत पीछे ले गए—उनका हम पर यह इल्जाम होता। हम

मुस्कुरा पड़ते और जोर देकर कहते—देख लीजिएगा, लड़ाई खत्म हुई नही कि अंग्रेज सचमुच भारत छोड़कर चले जाएंगे या हम उन्हे खदेड देंगे ! हमारी इस बात पर उनकी खीझ बढ जाती ! अटसट बकने से भी नही चूकते !

एक बडे नेता ने एक दिन श्री जगलाल चौधरी को बुलाकर बहुत डाटा। चौधरी जी ने अगस्त-क्रान्ति मे सक्रिय भाग लिया था। उनके बेटे को, उनके घर मे घुसकर, गोली मार दी गई थी। उस बच्चे की तस्वीर वह सदा अपने पास रखते और प्रतिदिन उस पर फूल चढ़ाते। उनकी इस भावना का भी ख्याल नही किया गया और कहा गया, आपने मत्री होकर भी ऐसा किया कि आपके चलते हम सबके सब बदनाम हो गए ! चौधरी जी विशुद्ध गाधीवादी थे, उन्होने अपने कामों की सफाई पेश की, किन्तु सुनता कौन है ? बेचारे रुआसे होकर उस नेता के पास से लौटे थे !

बाहर का रूपोश आन्दोलन भी शान्त हो रहा था, एक-एक करके लोग पकड़े जा रहे थे ! एक दिन यह भी सुनने को मिला, जयप्रकाश जी भी पकड लिए गए ! उन्हें लाहौर-किले मे तरह-तरह के कष्ट दिए जा रहे है, यह भी खबर फैली। सूरज आदि की भी गिरफ्तारी के समाचार मिले। क्रान्ति के चढाव-उतार के नियम होते है। अब सारी चीजे उतार की ओर जा रही थी।

अचानक एक दिन रानी भेंट करने को पहुँच गई। जेल-गेट पर जब उससे मिलने गया, देखा, देवेन्द्र भी है। रानी बीमार

ही थी। उसे देखकर बहुत दुख हुआ। किन्तु अपने दुख को दबाकर उसे ढाढ़स देने के लिए कह दिया—घबराती क्यों हो? अब तो लोग छूटने भी लगे है। बस यही कह देना है कि अगस्त-आन्दोलन गलत था और मे सदा तुम्हारे आंचल के साए में रहूँगा—इसी पर रिहाई मिल जाएगी! बगल मे सी० आई० डी० का अफसर बैठा था। वह मेरे व्यग्य को समझ गया। किन्तु रानी की आँखो से पानी झरने लगा! फिर तमककर बोली—ऐसी बात मत कीजिए, मै ही अकेली बिपता मे नही हूं, कितनी औरतो के पति आपके ही ऐसे जेलों मे हैं। जो सबकी हालत होगी, मेरी भी होगी। जिन्दगी भर का पुण्य आप इस तरह बर्बाद करेंगे? पाप की बात सोचनी भी नही चाहिए। मेरी तो सिट्टी गुम, सी० आई० डी० अफसर भी चकित! मैने हसकर उसे बताना चाहा कि मैने तो दिल्लगी मे यह बात कही थी, किन्तु वह रोती रही!

फिर कुछ शान्त होकर बोली—यदि आप मेरे लिए चिन्तित है, तो एक बात कीजिए। देवेन्द्र की शादी कर दीजिए, कम से कम एक पतोहू तो सेवा-शुश्रूषा को पास मे रहेगी! और एक लडकी का पता भी दिया। एक सज्जन 'जनता' के कार्यालय मे काम करते थे, उन्ही की बहन है वह—जिसे देवेन्द्र भी चाहता है! जब देवेन्द्र चाहता है, तो फिर क्या सोचना था? हा, मै एक जगह के लिए अवधेश्वर से वचनबद्ध था, अवधेश्वर ने मुझे उस वचन से मुक्त कर

दिया। और, बीमारी के कारण जब वह छूटे, तो उन्होंने ही यह शादी सम्पन्न कराई।

अहा! वह भी कोई संध्या थी। उधर पटना में देवेन्द्र की शादी हो रही होगी, इधर जेल में हम लोग एक जगह बैठकर उसका उत्सव मना रहे थे। गाने वाले मित्रों ने तरह-तरह के गाने गाए: बधाई देने वाले मित्रों ने बधाइयां दी, कुछ मित्रों ने मिठाइयां भी बांटी। दो-तीन घटे तक आनन्द ही आनन्द रहा।

किन्तु, जब हम सेलों मे बंद किए गए—मैं बार-बार दरवाजे से उन काली, अलंघ्य, गुमसुम दीवारों को देखता, जो यहां से इस अंधकार मे, सर्पाकार दैत्य-सी दीख पड़ती। और क्या मेरे कानों में जंजीरों की चीख नही सुनाई पड़ रही थी? जंजीरें खनकती है, बोलती हैं, स्वयं तुलकर लोगों को तोलती है! क्या उस समय मेरी तोल नही हो रही थी?

रिहाई

सलाम ओ पत्थर की दीवारो, सलाम ओ फौलाद की जजीरो, लो मै तुम्हे छोड़कर चला। कब तक के लिए ? अभी तो कहा गया है, सिर्फ साठ दिनो के लिए, किन्तु क्या मै फिर लौटकर तुम्हारी छाया के नीचे खड़ा हो सकूँगा ? तुम्हारी पकड़ मे आ सकूँगा ?

क्या मै सोचता था कि मै इतना जल्द छूट सकूँगा ? अभी उस दिन प्रान्त के नए गवर्नर आये थे। हर राजबन्दी से मिले, हर आदमी से बाते की। कभी पुलिस-विभाग में थे; साफ-साफ बाते की। मैने कहा, मुझ पर आरोप क्या है ? मैं तो अगस्त के पहले आया था ! मुस्कुराये, बोले—आप नही जानते ? तो सुनिये, आपने जयप्रकाश को भगा दिया ! मैने बनावटी गुस्से में कहा—यह कहकर आप मुझे या तो बुजदिल बतला रहे है या बेवकूफ ! उनको भगाना था, तो मै क्यो नही भाग जाता ? और क्या मुझमे इतनी भी अकल नही है कि समझ सकूँ कि उनको भगाकर मै अपने को संकट मे

फँसा रहा हूँ। वह फिर मुस्कुराये, बोले—कहिये, रिहाई के अलावा आपके लिए क्या किया जा सकता है? मै क्या माँगता, चल दिये।

तब से मै निश्चिन्त हो चला था। लिखने-पढने की गति तीव्र कर दी। कुछ मुर्गिया पोस लीं, उनके बच्चो को खिलाने में मुझे कितना आनन्द आता! बच्चों से मेरा स्वाभाविक स्नेह—इस स्नेह को मैंने मुर्गी के बच्चो पर आरोपित कर दिया था। फूलो से भी सदा शौक रहा है—अपने वार्ड के गुलाब और बेलों के पौधो को तरह-तरह की खाद देकर मैंने कितना हरा-भरा कर दिया था!

जुलाई का महीना। छोटा नागपुर में वर्षा शुरू हो गई थी। बेले की ऋतु समाप्त हो रही थी, किन्तु गुलाब औज पर थे। मै भोर-भोर सेल से बाहर निकला, तो देखा, कितने सारे फूल एक साथ ही खिल उठे है। इधर किसी की रिहाई नही हुई थी—रिहा होने वाले तो एक-एक कर निकल चुके थे! रिहा होने वालो को हम मालाए पहना कर विदा करते थे। मैंने कहा—कम्बख्त कोई अब रिहा भी नही होता, इन फूलों को क्या करूं? इच्छा होती है, आज स्वयं इन फूलों की माला बनाकर पहन लू और चल दू।

बगल मे एक नौजवान खड़ा था, उसी को सुनाकर मै यह कहे जा रहा था कि उसने टोक दिया—देखिये, आप ऐसी बात नही सोचिये। आप भी चले जाएगे, तो मै उस डाल मे फास लगाकर झूल जाऊंगा—उसने सामने के नीम के पेड़ की

ओर इशारा किया ! मै मुस्कुरा पड़ा, उसे ढाढ़स देने को हल्की-फुल्की बाते करने लगा कि गुमटी से किसी ने पुकारा —लीजिये बेनीपुरी जी, आप रिहा हो रहे हैं !

और मद-मद गति से किंचित् मुस्कुराहट के साथ जमादार साहब हाथ मे एक पुर्जा लिए पधारे—हा, बेनीपुरी जी, आप छूट रहे है ! चलिए गेट पर, साहब आपका इन्तजार कर रहे हैं।

सभी साथी एकत्र हो गए—अरे, यह असम्भव किस तरह सम्भव हो गया ! सभी चकित, मै भी चकित !

अभी कुछ दिन पहले मैने अपनी सौभाग्यवती पतोहू को एक पत्र लिखा था, जिसमे उसे समझाया था, तुम्हे कष्ट भी हो, तो बर्दाश्त करना, मै जब छूटकर आऊंगा, तो कोशिश करूगा, तुम्हे आराम से रखू । उस पत्र के उत्तर मे उसने एक पत्र भेजा था—उसने बताया था, उसे कोई कष्ट नही, किन्तु सरकार जी (मेरी रानी) की हालत दिन-दिन खराब होती जा रही है, सारे बदन मे दर्द उठता है, फिर मूर्च्छा आ जाती है; कभी-कभी इतनी देर तक मूर्च्छा रहती है कि हम लोगों को आशा नही रहती कि फिर श्वास लौटेगी । जब-जब मूर्च्छा टूटती है, होश मे आते ही, आपकी खोज करने लगती हैं; तब तो हमारे कलेजे टूक-टूक होने लगते है । इस बात को उस लडकी ने बडे विस्तार से लिखा था । उस चिट्ठी के ऊपर रानी ने अपने टेढे-मेढे कैथी अक्षरो मे इतना ही लिखा था—"अब हम जइछी । हमर बात हमरे मन मे, अहा के बात अही

के मन मे। माफ कैल जाई। परनाम।"

मैने इस चिट्ठी को अंगरेजी रूपान्तर के साथ गवर्नर को भेज दिया था और सिर्फ यह मांग की थी कि मुझे पुलिस के पहरे मे एक बार उस मुमूर्षु को देखने के लिए मेरे गाव भेजा जाय। तब तक जर्मनी की हार हो चुकी थी, जापान की ही लड़ाई जारी थी, वहां भी शत्रु-सेना पीछे हट रही थी। मैने इस ओर भी उनका ध्यान आकृष्ट किया था और यह भी आश्वासन दिया था, मैं कई बार इस जेल से उस जेल मे ट्रान्सफर किया गया हूं, कभी नही भागा—इस बार भागने की कोशिश करूंगा, ऐसा आप क्यो समझे ? आपकी इस कृपा का दुरुपयोग नही करूंगा, आप विश्वास रखे।

किन्तु गवर्नर को यह पत्र भेजे तो तीन दिन भी नहीं हुए—इतनी जल्दी रिहाई का आर्डर कैसे आ गया ? निस्सदेह अभी साठ दिनो के लिए ही पेरोल पर छोड़ा जा रहा हू; किन्तु इतनी शीघ्र यह कैसे सम्भव हो सका।

इस बार जेल की अवधि मे ही मेरे पिता-तुल्य मामा जी और मेरी पूजनीया सौतेली माँ की मृत्यु हो चुकी थी, किन्तु बार-बार लिखने पर भी मुझे पेरोल पर नही छोड़ा जा सका था। बेटे की शादी के अवसर पर भी पेरोल की दरखास्त नामजूर की जा चुकी थी। अत. वह पत्र गवर्नर को भेजकर मै उसके नतीजे की ओर से निश्चिन्त ही था। यह तो पीछे मालूम हुआ कि मेरा वह पत्र पाते ही गवर्नर ने सीधे मेरे जिले

के सी० आई० डी० अफसर से इन्क्वायरी कराई—फोन से ही उसे आर्डर दिया, फोन पर ही रिपोर्ट ली और सत्यता की सूचना मिलते ही मेरी रिहाई का आर्डर फोन से ही हजारीवाग को दिया। पुलिस-गवर्नर ने सारा काम पुलिस के ही ढग पर किया।

अरे, तो मै छूट रहा हूँ। मै अपने कागज-पत्र सम्हाल रहा हूँ, मेरे मित्र वेले और गुलाव की मालाएं तैयार कर रहे हैं।

और लो, ओ दीवारो, ओ जजीरो, अव तुम्हारी छाया से अलग, तुम्हारी पहुँच के परे, मै वाहर खडा हूँ!

अभी-अभी सभी साथियो से एक-एक कर मिल आया हूँ, सभी प्रसन्न है, खुश है कि मै वाहर जा रहा हूँ, खास कर उस समय जव मेरी पत्नी वीमार है, मेरी उपस्थिति और सेवा की उसे जरूरत है। किन्तु यह क्या—सवकी आखे सजल है, सवकी पपनिया गीली है। एक छोटे-से अर्से को वाद दीजिए, तो हम पाच वर्षो तक साथ रहे, हसे, खेले—वडे-वडे खेल खेले! फिर विछुडन के समय हृदय मे एक हल्की-सी हूक क्यो नही पैदा हो?

सवसे अधिक कसक हुई श्री जगलाल चौधरी जी से मिल कर। वोले—जाइए, घर पर वीमार है, आपको जाना ही चाहिए। किन्तु एक वात—जव आप ठहाके लगाते थे, ये पत्थर की दीवारे हिलती-सी मालूम होती थी, आज से ये पत्थर सचमुच पत्थर वन जायेगे।

अरे, सीधे-सादे आदमी के मुँह से यह कविता कहां से

फूट निकली ? आदमी भी कैसा विचित्र प्राणी है—ऊपर की खाल या व्यवहार से ही आदमी को तोलना कितना गलत साबित होता है !

इसी जेल में एक और विचित्र बात देख चुका हूँ। इधर कुछ दिनों से संध्या समय मै तुलसीकृत रामायण का सव्याख्या पाठ मित्रों को सुनाया करता था। बात यों हुई कि फूलन जी अंगरेजी में एक पुस्तक लिखने की तैयारी कर रहे थे—'एपिक्स आफ द वर्ल्ड' (ससार के महाकाव्य)। मैने उनसे कहा—उसमें तुलसीकृत रामायण को भी स्थान मिलना चाहिए। उन्होने हिन्दी कम पढ़ी है। बोले, तो आप सुनाइए। चाद बाबू भी वही थे। फारसी-अरबी के विद्वान्—उन्होने भी रामायण सुनने की इच्छा प्रकट की। जब चर्चा फैली, सत्यनारायण भाई ने कहा, तुम पाठ करो, नैवेद्य का प्रबंध मै करूँगा। अब क्या है, लीजिए, मै पूरा कथावाचक बन गया। कुछ दिनों के बाद तो जेलर, नायब जेलर, जमादार आदि भी कथा सुनने को आने लगे।

जब राम-वन-गमन की चर्चा आई, सत्यनारायण भाई की आंखों से आंसू की धारा बहने लगी। सत्यनारायण भाई साहित्यिक प्रवृत्ति के है, यह तो जानता था, किन्तु उनका हृदय इस तरह पसीजने लगेगा, यह आशा क्या कभी की थी ? सचमुच आदमी विचित्र प्राणी है।

अपने जेल-जीवन में सदा पाच पुस्तकें मै साथ रखता—तुलसीकृत रामायण, कालिदास की शकुन्तला, रवीन्द्रनाथ की

सचयिता, शेक्सपियर की ग्रथावली ग्रौर इकवाल की 'वांगेदिरा'! इन पाचो पुस्तको ने जेल-जीवन की कठोरता ग्रौर हृदयहीनता को कितना कोमल, कितना सरस वना दिया था। जव मेरा शरीर जंजीरो मे जकडा, दीवारो से घिरा होता, मेरा मस्तिष्क कभी जनकपुर की पुष्पवाटिका मे विहार करता, कभी मालिनी के तट पर चक्कर काटता, कभी स्वर्ग मे उर्वशी का नृत्य देखता होता, कभी वेनिस की मायापुरी मे विचरता तो कभी हिमालय की चोटी पर चढकर पुकार उठता—

ऐ हिमालय ऐ फसीले किस्वरे हिन्दोस्ता,
तेरी पेशानी को झुककर चूमता है ग्रास्मा।

यही नही, ग्रपने को सदा साहित्य-रचना मे भी डुवाए रखता। जव छूट रहा था, ढाई-तीन हजार पृष्ठो की पाडुलिपिया मेरे पास थी। मैने सोच लिया था, वाहर जाते ही इन्हे वेचकर ग्राठ-दस हजार रुपए जरूर वना लूँगा। मै क्या जानता था कि इनमे से सिर्फ सौ पृष्ठो की 'माटी की मूरतें' ही इससे पचगुनी, सत-गुनी रकम दे देगी।

तो, मै इन पत्थर की दीवारो के साए से दूर खड़ा हूं। किस ललक से इन दीवारो को देख रहा हूँ। लोग कहा करते थे, ग्रादमी हर चीज को सपने मे देखता है, जेल का सपना कभी नही देखता। मै सच कहता हूँ, जेल-जीवन के दस साल हो गए, प्राय ही मै सपने देखा करता हूँ—फिर मै हजारीवाग जेल मे हूँ, ग्रमुक सेल मे हूँ, ग्रमुक पेड़ के नीचे हूँ, कभी मुर्गी के वच्चो को दाने चुगा रहा हूँ, किसी वेले या गुलाव के फूलो

और कलियों से लदे पौधे को एकटक देख रहा हूँ ।

यद्यपि मै जान रहा हूँ, मै सिर्फ साठ दिनों के लिए पेरोल पर जा रहा हूँ, किन्तु मन मे हो रहा है, अब शायद फिर नहीं देख सकूँगा, इन दीवारों को और उन जंजीरों को, जो यहाँ से भी झलक रही है !

इच्छा होती है, इन दीवारों से कुछ बाते करूँ ; उन जजीरों से कुछ बाते करूँ, इन काली, कठोर अलंघ्य दीवारों से पूछूँ, तुम्हारी अपनी ऊंचाई तो कायम ही है, कुछ मेरी ऊंचाई या छुटाई की माप ली है ? और ओ फौलादी जंजीरो, तुम मुझे तौल सके, कहो, पलड़ा किसका भारी रहा, तुम्हारा या मेरा ? हां, हां, आज कुछ गर्व अनुभव कर रहा हूँ । कबीर की वाणी याद आ रही है—

यह चुनरी सुर-नर-मुनि ओढ़े ओढ के मैली कीनी चदरिया ।
दास कबीर जतन से राखी जस के तस धर दीनी चदरिया ।

'बस छूट जाएगी—क्या सोच रहे है ?' ; बूढ़े जमादार ने कहा और लीजिए—बस, रेल, जहाज, फिर रेल, बस और मै बेदौल से पैदल ही बेनीपुर की ओर लम्बी डग भरता जा रहा हूँ ।

बेनीपुर : वह छोटा-सा गांव ! यही सत्तर - अस्सी घरों का गांव । छोटे-छोटे किसानों, गरीब मजदूरो का गांव ! जिसने कभी पक्का मकान नही देखा । फ़ूस के, खपरैल के छोटे-छोटे मकान यही से झांकते दिखाई पड़ते है । क्या आकर्षण है इस गांव में ? जिस विशाल पीपल के वृक्ष को देखकर दूर से ही

इस गाव की गरिमा का बोध बचपन मे करता था, उसे भी वाढ ने समाप्त कर दिया। उजड़ा-उजड़ा-सा लगता है यहा से। तो भी किस ललक से वढ रहा हूँ ?—क्यो बढ रहा हूँ ?

'ओहो आप।' और यह देखिए, सारा गांव दौड पड़ा है—'जो जैसे-तैसे उठि धावा।' राम बनने की जुरंत कहाँ, किन्तु राम के अयोध्या लौटने के दृश्य की एक छोटी-सी झाकी पा रहा हूँ। अपनी अयोध्या के लिए हर आदमी राम है न ?

यह रानी, यह दुलहन , यह प्रभा, यह देवेन्द्र , यह जित्तिन, यह महेन्द्र। यह मौसी, रामकुमार, जवाहर, पन्ना। यह सरयू भैया, हिरदे, जगदीश ! चुल्हाई काका, गोपालजी भाई, बहादुर भाई। ओ फौलाद की जजीरो, तुम कहा गल गई ? ओ पत्थर की दीवारो, तुम कहाँ धँस गई ? अब मै फिर अपनो के बीच हूँ। अपने घर मे हूँ। तुम्हें सलाम—सदा के लिए सलाम ! क्या सचमुच सदा के लिए ?

हो गया है। सुक्खी का दिल धडकने लगा। तो भी उसने आवाज देकर एक नौकर को बरतन लाने को कहा।

मालूम होता है, वह चरवाहा अभी तक सुक्खी को पहचान नहीं पाया था। इस अर्से में सुक्खी रूपलावण्यमयी एक स्वस्थ युवती वन गई थी। उसके कपडे भी साफ-सुथरे थे। सफेद और स्वच्छ हाथ-पॉव, वढिया जूडा और रौवदार वाली उस युवती को युवक चारवाहे ने वडे आदर के भाव से देखा।

सुक्खी उसकी मुखमुद्रा से पहचान गई कि वह अव उसका नहीं रहा। उसने विवाह कर लिया है।

उस वक्त तो उन दोनो में कोई वातचीत नही हुई, मगर सांझ को ही सुक्खी ने उस चरवाहे को अपना परिचय दे दिया और पूर्ण संयत रूप से दोनो की मित्रता फिर से पल्लवित हो गई। अभी पन्द्रह दिन से ही वह चरवाहा इस छावनी की दुग्धशाला में नौकर हुआ था और अपनी पत्नी के साथ दुग्धशाला के समीप की एक फूंस की झोपडी में रहता था।

सुक्खी ने यह सव देखा, सुना और अनुभव किया। मगर उसके दिल में इस चरवाहे के प्रति शिकायत का कोई हल्का-सा भाव तक भी उत्पन्न नहीं हुआ।

धीरे-धीरे सुक्खी उस चरवाहे के घर भी आने-जाने लगी। चरवाहे पत्नी को वह अपनी भाभी कहती थी। चरवाहे का एक छोटा-सा पुत्र था। उसकी उम्र अभी वारह-तेरह महीनो की ही थी। सुक्खी इस से असीम प्यार करती थी। यहाँ तक कि वह अनेक वार उसे अपने जाती और कितने ही दिनो तक निरन्तर अपने पास रखती। नी के अन्य नौकर-चाकरो तथा खानसामो ने यह सव देखा। पर ताने कसने लगे और उस चरवाहे के भाग्यो से ईर्ष्या करने सुक्खी का अन्त.करण कितना उच्च और कितना पवित्र था, र्वान्तर्यामी ही जानता है।

तीन वरस वाद ही एक लारी के नीचे दव कर उस चरवाहे

का देहान्त हो गया। उसकी मृत्यु पर चरवाहे की पत्नी भी रोई और सुक्खी भी रोई। मगर उन दोनो के रोने में अन्तर था। चरवाहे की पत्नी कुछ ही दिनों के बाद अपने बच्चे को सुक्खी के पास छोड़ कर अपने मैके चली गई और पाँच-छः मास बाद उसका दूसरा विवाह हो गया।

:o: :o: :o:

इधर सुक्खी को बरसों तक किसी ने हँसते हुए नही देखा। अपनी मालकिन का काम अब भी वह अच्छी तरह करती थी, मगर उसका दिल सदैव मुरझाया रहता था। चरवाहे के उस नन्हे-से पुत्र को उसने अपना पुत्र बना लिया था। वह उससे इतना स्नेह करती थी, जितना कोई माँ भी अपने बच्चे से भी न करेगी।

इस बच्चे के पालन-पोषण में उसने अपना सर्वस्व लगा दिया। अपनी सम्पूर्ण तनख्वाह वह इसी बच्चे पर खर्च कर देती थी।

इस बच्चे को उसने पढ़ाया, लिखाया और अन्त में अपने साहब की मदद से सेना में ही एक बहुत अच्छी नौकरी भी दिलवा दी।

चरवाहे का वह लड़का अब इक्कीस साल का नवयुवक है। उसकी माता झाँसी जा रही है, और वह उसे स्टेशन पर विदा देने आया है। वह देखो, गाड़ी सीटियाँ दे रही है---

:o: :o: :o:

सहसा मेरी नींद टूट गई। मैने देखा, गाड़ी सचमुच सीटियाँ दे रही है; कमरे में और कोई यात्री नहीं है, और एक महाशय मुझे आवाज देकर कह रहे है---"कब तक सोयेंगे जनाब! अगला स्टेशन दिल्ली है।"

और वर्षा अब भी जारी थी।